हरिवंशराय बच्चन के काव्य का हालावाद के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषणात्मक अध्ययन

तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ की विद्यावाचस्पति (पीएच.डी.) - हिन्दी उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध

-शोधकर्त्री-

बृजबाला सूरी

व्याख्याता
पिल्लेज़ कॉलेज ऑफ एज्युकेशन एन्ड रिसर्च
चेम्बूर, मुंबई-७१

शोध निर्देशिका
डॉ. रागिनी दिलीप बाबर
हिन्दी विभाग प्रमुख
डॉ. अम्बेडकर कला, वाणिज्य महाविद्यालय
येरवडा, पुणे - ०६

शोध केंद्र
तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ
गुलटेकड़ी, पुणे-४११०३७

मार्च - २०१२

हरिवंशराय बच्चन के काव्य का हालावाद के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषणात्मक अध्ययन

तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ की विद्यावाचस्पति (पीएच.डी.) - हिन्दी
उपाधि हेतु
प्रस्तुत शोध प्रबंध

विषय: हिन्दी
विभाग: आर्ट्स एन्ड फाइन आर्ट्स
शोधकर्त्री का नाम: बृजबाला सूरी
शोध निर्देशिका का नाम: डॉ. रागिनी दिलीप बाबर
विभाग: अध्यक्षा, हिन्दी विभाग
डॉ. अम्बेडकर कला, वाणिज्य महाविद्यालय
येरवडा, पुणे-06

माह व वर्ष: मार्च - २०१२

प्रमाण-पत्र

मैं घोषणा करती हूँ कि **"हरिवंशराय बच्चन के काव्य का हालावाद के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषणात्मक अध्ययन"** विषय पर प्रस्तुत शोध प्रबंध, मेरे द्वारा लिखा व पूर्ण किया गया। प्रस्तुत शोध प्रबंध पर पहले कोई अन्य उपाधि या समान डिग्री, इस अथवा किसी अन्य विश्वविद्यालय या परीक्षा संस्था द्वारा मुझे प्रदान नहीं की गई।

शोधकर्त्री

(श्रीमती बृजबाला सूरी)

स्थानः मुम्बई
दिनांकः मार्च २०१२

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्रीमती बृजबाला सूरी द्वारा "हरिवंशराय बच्चन के काव्य का हालावाद के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषणात्मक अध्ययन" विषय पर, तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पुणे की विद्यावाचस्पति (पीएच.डी.) हिन्दी उपाधि हेतु, प्रस्तुत शोध प्रबंध संबंधित मौलिक शोधकार्य, मेरे मार्गदर्शन में पूर्ण किया गया। मेरी जानकारी व विश्वास के अनुसार, शोध प्रबंध में समाविष्ट कार्य के आधार पर कोई अन्य उपाधि या समान डिग्री, इस अथवा किसी अन्य विश्वविद्यालय या परीक्षा संस्था द्वारा शोधार्थी को प्रदान नहीं की गई।

शोध निर्देशिका

डॉ. रागिनी दिलीप बाबर

स्थानः पुणे
दिनांकः मार्च २०१२

मैं ईश्वर को धन्यवाद देते हुए यह शोध प्रबंध
अपनी स्वर्गीय माँ श्रीमती पुष्पा रानी को
समर्पित करती हूँ, जो मेरी प्रेरणा स्त्रोत रहीं
और मैं उनके स्वप्न को साकार करने में समर्थ
हो पायी।

आभार

प्रस्तुत शोध-कार्य की पूर्ति में उन समस्त चिंतकों, विद्वानों, आदरणीय, परम स्नेही इष्ट मित्रों तथा परिवारजनों के प्रति कृतज्ञता अभिव्यक्त करना मैं अपना परम दायित्व मानती हूँ। मैं आभारी हूँ तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पुणे के माननीय कुलपति, उप कुलपति, रजिस्ट्रार व निर्देशक की, जिन्होंने अपने विश्वविद्यालय में प्रवेश देकर मुझे शोध कार्य करने का अवसर प्रदान किया।

मैं नतमस्तक हूँ, विभागाध्यक्ष डॉ. श्रीपद भट्ट जी की, जिन्होंने समय-समय पर मुझे शोध कार्य से संबंधित मार्गदर्शन दिया और निश्चित अवधि में कार्य पूर्ण करने हेतु प्रोत्साहित किया। जब भी मुझे किसी भी प्रकार की शंका या कठिनाई हुई, तुरंत उन्होंने अपना अमूल्य समय देकर उसका समाधान दिया।

मेरी शोध निर्देशिका डॉ. रागिनी दिलीप बाबर, विभागाध्यक्ष, डॉ. अंबेडकर कला एवम वाणिज्य महाविद्यालय, येरवडा, पूणे की मैं जीवनभर ऋणी रहूँगी, क्योंकि उनके ही मार्गदर्शन, अथक प्रयास, स्नेह, सहयोग, विश्वास, प्रेरणा व प्रोत्साहन के कारण वांछित अवधि के अंतर्गत मैं अपना शोधकार्य पूर्ण कर सकी। शोध प्रबंध की रूपरेखा से लेकर समापन तक अपने मार्गदर्शन, अमूल्य समय (अवकाश के दिनों में भी) और अपने प्रेम व आशीर्वाद से मेरा आत्मविश्वास व मनोबल बढ़ाती रहीं। आने वाली समस्याओं का समाधान भी बहुत ही सहज ढंग से करती रहीं। उनके सहयोग के बिना यह कार्य पूर्ण होना संभव न था। भविष्य में भी आपका स्नेहभरा हाथ और आपके आशीर्वाद की शुभेच्छा रखती हूँ।

आदरणीय श्री दिलीप बाबर के प्रति भी मैं कृतज्ञ रहूँगी क्योंकि अवकाश के दिनों (विशेष रूप से रविवार) जब भी मैं मार्गदर्शन हेतु आपके घर आयी हूँ, सस्नेह मुझे स्वीकारा और प्रोत्साहन देकर मुझे कार्य पूर्ण होने का आशीर्वाद दिया।

अपने शोध कार्य के संबंध में मुझे समय-समय पर मेरे शुभचिन्तकों द्वारा मुझे मार्गदर्शन व सहयोग मिलता रहा, उनमें मेरी कार्यरत संस्था महात्मा एजुकेशन सोसायटीज़ के व्यवस्थापक डॉ. वासुदेवन पिल्लै एवं उनकी धर्मपत्नी एवं सचिव डॉ. डाफनी पिल्लै की मैं आभारी हूँ जिन्होंने इस कार्य को पूर्ण करने में मुझे सहयोग दिया व शोध प्रबंध हेतु अनुमति प्रदान की। मैं अपने शिक्षा महाविद्यालय पिल्लेज़ कॉलेज ऑफ एज्युकेशन एन्ड रिसर्च, चेम्बूर की प्राचार्या व सभी सहयोगियों को धन्यवाद देती हूँ, जिनकी शुभेच्छाओं से मैं यह कार्य पूर्ण कर सकी।

मैं विशेष रूप से आभारी हूँ स्व.डॉ के.के. पाण्डेय जी की, जिन्होंने समय-समय पर मुझे मार्गदर्शन व अपना असीम आशीर्वाद देकर मेरा मनोबल बढ़ाया। मैं पिल्लेज कॉलेज की पुस्तकालयाध्यक्ष श्रीमती परवीन आरिफ़ एवं आर्टस एवं कामर्स कॉलेज झुनझुनवाला घाट्कोपार, मुम्बई के पुस्तकालयाध्यक्ष व उनके सहयोगियों के प्रति कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने समय-समय पर मेरी आवश्यतानुसार संदर्भ ग्रन्थों की सहायता कर मुझे सहयोग व प्रोत्साहन दिया।

मैं ऋणी हूँ अपने माता-पिता की, जिनकी दी हुई शिक्षा द्वारा मैं उनका स्वप्न साकार कर सकी और धन्यवाद देती हूँ अपने भाइयों-भाभियों व बहनों को जिनके आशीर्वाद व प्रार्थनाओं से मैं कार्य पूर्ण करने में समर्थ हो सकी।

मैं हृदय से आभारी व ऋणी हूँ अपने पति श्री मनमोहन कुमार सूरी की जिन्होंने अपना पूर्ण सहयोग, शुभकामनाएँ व अतुल्य समय देकर इस कार्य को पूरा करने में साथ दिया। कई तकनीकी (विशेष रूप से टंकण) व अन्य समस्याओं के बाद भी उन्होंने मुझे निराश नहीं होने दिया और हर पल मुझे प्रोत्साहित करते रहे। मैं निश्चित रूप से उनके माता-पिता व भाई-बहनों के प्रति कृतज्ञ हूँ जिनकी शुभाशीष व शुभकामनाएँ निरन्तर मुझे मिलती रहीं और मेरा मनोबल बढ़ता रहा।

मेरे पुत्र विशाल सूरी व सागर सूरी ने जो प्रोत्साहन और प्रेम अपनी प्रार्थनाओं व शुभेच्छाओं द्वारा प्रदर्शित किया, वह मेरे शोध कार्य को पूर्ण करने की शक्ति थे। उन्होंने मेरे आत्मविश्वास को दृढ़ रखा और उन्हीं की महात्वकांक्षा का यह प्रतिफल है।

मैं डॉ. करुणा गुप्ता और श्रीमती मनीषा के प्रति सदैव ऋणी रहूँगी, जिन्होंने हर पल मेरा साथ देकर मेरा मनोबल बढ़ाए रखा और आने वाली कई समस्याओं के दौरान मेरे आत्मविश्वास को डगमगाने नहीं दिया।

मैं तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, गुलटेकड़ी एवं सदाशिव पेठ, पुणे के पीएच. डी. विभाग के आफिस स्टाफ के प्रति भी आभारी रहूंगी, जिन्होंने हमेशा मुझे अपना सहयोग प्रदान किया । शोध प्रबंध के टंकण तथा संगणक कार्य भार से मुक्त रखने वाली श्रीमती मानसी एवं श्रीमती उमारानी को मैं हृदय से धन्यवाद देती हूँ, उनके ही अथक प्रयास व सहयोग से निश्चित समय पर मुझे कार्य पूर्ण करने में सहायता मिली।

अंत में उन समस्त शुभेच्छकों व सहृदयजनों की अनुग्रहित हूँ, जिनकी सद्‌भावना व शुभकामनाएँ सदैव मुझे प्रोत्साहित करती रहीं।

धन्यवाद!

बृजबाला सूरी

विषयानुक्रमणिका

अनुक्रम	**अध्याय / प्रकरण**	**पृष्ठ सं.**
अ.	आभार	[vi - viii]
ब.	प्रस्तावना	[xii - xx]
स.	शोध प्रबंध का सारांश	xxi
१.	**अध्याय - एक** हरिवंश राय बच्चन जी का परिचय	1-26
१.१	हरिवंश राय बच्चन जी का जीवनवृत्त	3
१.२	वंशावली	3-4
१.३	माता-पिता	4-5
१.४	जन्म - जन्मतिथि, जन्मस्थान	5
१.५	प्रारंभिक संस्कार (बाल्यकाल)	5-6
१.६	शिक्षा	6-7
१.७	साहित्यिक प्रेरणा	8-9
१.८	व्यक्तित्व व काव्य की संक्षिप्त विशेषताएँ	9-25
	संदर्भिका - १	26
२.	**अध्याय - दो** **हालावाद**	**27-51**
२.१	उत्तर छायावाद	30-31
२.२	साहित्यिक प्रवृत्तियाँ	32
२.२.१	जड़ता एवं सामाजिक विद्रुपता के विरुध्द मनुष्य की वास्तविक शक्तियों का उद्‌गान	32-34
२.२.२	मनुष्य के मानवोचित गुणों से परिचय	34-36
२.२.३	मनुष्य के जीवन के मुख्य राग का प्रणय गान	36
२.२.४	राष्ट्रीय मूल्यों एवं भावनाओं का विकास	37
२.२.५	गीतात्मक काव्य की प्रधानता	38-39
२.३	हालावाद	39-45
२.४	हालावाद के बारे में विभिन्न कवियों तथा लेखकों के विचार	46-50
	संदर्भिका -२	51

३.	**अध्याय - तीन** **संवेदना पर आधारित हरिवंशराय बच्चन की काव्य रचनाओं का अनुशीलन**	**52-126**
३.१	संवेदना का तात्पर्य	54-60
३.२	संवेदना पर आधारित काव्य चयन	60-63
३.३	बच्चन का मधुकाव्य	64-66
३.३.१	मधुशाला - परिचय	67-70
३.३.२	मधुशाला का अनुशीलन	70-77
३.३.३	मधुबाला - परिचय	78-79
३.३.४	मधुबाला का अनुशीलन	79-88
३.३.५	मधुकलश - परिचय	89-92
३.३.६	मधुकलश का अनुशीलन	93-97
३.३.७	निशा निमंत्रण - परिचय	98-99
३.३.८	निशा निमंत्रण का अनुशीलन	99-107
३.३.९	एकांत संगीत - परिचय	108-109
३.४.०	एकांत संगीत का अनुशीलन	109-119
३.४.१	आकुल अंतर - परिचय	120-121
३.४.२	आकुल अंतर का अनुशीलन	121-125
	संदर्भिका - ३	126-127
४.	**अध्याय-चार** **बच्चनजी की कविताओं की प्रस्तुति का कलेवर**	**128-171**
४.१	बच्चन की भाषा व काव्यशैली	129-137
४.२	भाषिक संरचना एवं अभिव्यक्ति की पद्धति	138-141
४.३	बच्चन की काव्य प्रवृत्तियॉं	142-143
४.३.१	हालावाद	143-147
४.३.२	स्वच्छन्दतावाद	148-150
४.३.३	व्यक्तिवाद	150-154
४.३.४	यथार्थवाद	155-156
४.३.५	आदर्शवाद	156-159
४.३.६	प्रगतिवाद	160-161
४.३.७	प्रयोगवाद	162-165
४.३.८	पीड़ावाद	166-168
४.३.९	निष्कर्ष और शोधकर्त्री के विचार	169-170

	संदर्भिका - ४	171
५.	**अध्याय - ५** **प्रदेय, उपलब्धियाँ और महत्व**	**172-200**
५.१	प्रदेय	173-187
५.२	उपलब्धियां	188-195
५.३	महत्व	196-199
	संदर्भिका - ५	200
६.	**अध्याय - ६** **बच्चन जी का साहित्यिक योगदान एवं उपसंहार**	201-216
६.१	बच्चन जी का साहित्यिक योगदान	202-207
६.२	उपसंहार	208-214
*	प्रस्तुत शोध से सम्बंधित आगे अध्ययन एवं शोध कार्य हेतु सुझावित विषय	215
	संदर्भिका - ६	216
	पूर्ण संदर्भ - सूची	217-221

प्रस्तावना

मेरा जन्म राजनीतिज्ञों की नगरी में हुआ है। मेरा बचपन रुद्रपुर अर्थात् आज के ऊधमसिंह नगर में बीता है, जो कि नैनीताल जिले के अन्तर्गत आता है। प्रकृति की गोद में पली बढ़ी थी। मेरी माताजी श्रीमती पुष्पा रानी भी साहित्य प्रेमी थी। ४० वर्षों तक उन्होंने अध्यापन कार्य किया और सफल समाज सेविका की भूमिका भी निभाई। मुख्यमंत्री द्वारा उन्हें तराई क्षेत्र की सर्वोच्च महिला पुरस्कार द्वारा सम्मानित किया गया। उनकी विशेष रुचि बच्चन जी के मधुकाव्य में थी। जब भी समय मिलता है वे उनकी रुबाइयाँ गुनगनाने लगती। वही मेरी प्रेरणास्रोत बनी और उन्हीं से प्रेरित होकर मैंने बच्चन जी के मधुकाव्य पर शोध करने का निर्णय लिया।

अंग्रेजी के विद्वान होकर भी उनका हिन्दी प्रेम अवर्णनीय था। हिन्दी साहित्य के प्रति उनका समर्पण अतुलनीय है। मेरा मुख्य उद्देश्य इस हिन्दी प्रेमी को जग जाहिर करना है। जो सहजता, सरलता तथा काव्यगत भाषा का ओज उनकी कविताओं में मिलता है, वे अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। विधि का विधान कहें या संयोग, मुझे उनकी रचनाओं से विशेष लगाव है। बच्चन जी की एक और खासियत जिसकी मैं कायल हूँ और जो बात अन्य हिन्दी कवियों में बहुत कम दिखाई पड़ी, वह है लोकधुनों और लोकगीतों की तर्ज पर रची उनकी कविताएँ, लोक से जुड़ाव के संदर्भ में बच्चन जी पर बहुत कम विचार हुआ है। बच्चन जी हिन्दी की उस परम्परा से जुड़े थे, जो जनभाषा को साहित्य की भाषा से जोड़ना चाहती थी। बच्चन जी की एक और आखिरी बात जो मुझे अच्छी लगी, वह थी उनका लेखन सन्यास, जब उन्हें लगा कि उन्होंने अपने हिस्से का सारा कुछ कह दिया तो वे चुपचाप "अर्नेस्ट हेर्मिंग्वे" के बूढ़े बछेरे की तरह जाल समेटकर रचना की दुनिया से बाहर हो गये और सिर्फ इतना कहा-

अब समाप्त हो चुका है मेरा काम,
करना है बस आराम ही आराम,
अब न खुरपी न हंसिया
न पुरवट न लढ़िया, न रखरखाव, न हर न हेंगा।

माँ सरस्वती का वास तो सभी के भाग्य में होता है। लेखक तो कई लोग बन जाते हैं लेकिन कवि बनना सभी के भाग्य में नहीं होता। कहते हैं -

बच्चन जी की भी कुछ यही फितरत थी। उन्हें हिन्दी जगत ने "हालावाद" का प्रवर्तक माना है। हरिवंशराय बच्चन जी ने कविताओं की रचना मनोरंजन के लिए नहीं अपितु अपने काल की सामाजिक परिस्थितियों को उजागर करने के लिए की। वे कहते हैं कि "मैं महान काव्य लिखना चाहता हूँ, महाकाव्य नहीं"। जिस युग में बच्चन जी ने लिखना आरंभ किया, वह युग छायावादी का था, जिसमें लाक्षणिकता, संश्लिष्टता तथा भावों की गूढ़ व्यांजना और भाषागत दुरूहता आदि का प्राबल्य था। निराला, पंत और महादेवी वर्मा अपनी छायावादी कृतियों से एक युग निर्मित कर रहे थे। ऐसे महान कवियों के युग में बच्चन जी ने उपयुक्त छायावादी कवियों के प्रभाव से मुक्त रह सर्वथा नूतन राह बनाने का प्रयत्न किया, जो स्पष्टत: उनके मौलिक कृतिकार रूप का सहज प्रमाण है। बच्चन जी ने छायावादियों की तरह विश्वचेतना अथवा अंतर्मन से प्रेरणा ग्रहण न कर, अपनी रचनाओं में प्रधानता देकर अनुभूति के क्षेत्र को जनसामान्य की मानसिकता के स्तर पर मूर्त कर उसमें भावनात्मक गहनता तथा व्यक्तिपरक ममत्व के तत्वों का समावेश कर दिया, जिसके कारण उनका काव्य जनसाधारण के अधिक निकट आकर सबके लिए मर्मस्पर्श बन सका। बच्चन जी के अत्यंत लोकप्रिय होने का कारण यह भी है कि उन्होंने आदर्श और वास्तविकता को अपने जादू के प्रतीकों द्वारा एक दूसरे के अत्यंत सन्निकट कर दिया।

आधुनिक काल की कविता में जिसे हालावाद कहा गया है, उसके मूल में फारसी प्रभाव अथवा सूफी दर्शन नहीं है। बच्चन जी के मतानुसार सन् १९३०-३५ के बीच के भारत की परिस्थितियाँ ही कुछ ऐसी थी, जिसमें वह रुबाइयत का स्वागत करने को तैयार थे। हालावादी साहित्य ने निराशा भारतीय जनता को आनन्द दिया। उनका जीवन दर्शन हाला, प्याला, मधुबाला के प्रतीकों द्वारा व्यक्त हुआ है। अत: बच्चन जी हिन्दी साहित्य जगत में "हालावाद का प्रवर्तक" के रूप में विख्यात हुए। उनके मन की संवेदना भी उनके मधुकाव्य के बाद निखर कर पाठकों के सामने आई है। बच्चन जी के काव्य की एक और विशेषता को मैं स्वीकार करती हूँ कि बच्चन जी ने अपनी भावनाओं और अनुभूति को रंगीन चादर में ढककर सुनहले बेल बूटों की चमक से कभी अलंकृत कर प्रस्तुत नहीं किया, उन्होंने अपनी अनुभूति को सहज निश्छलता व बिना किसी उलझाव से जग के सम्मुख रखा और सभी का ध्यान आकर्षित किया। उनकी इन्हीं संवेदनाओं का अध्ययन हेतु ही मेरा ध्यान भी आकर्षित हुआ और मैंने उनके काव्य का हालावाद के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करने का प्रयास किया है।

हिन्दी काव्य के प्रति प्रारंभ से ही मैं आकर्षित रही हूँ, विशेषकर छायावादोत्तरकालीन कवियों की कविताएँ मुझे अधिक प्रिय लगीं। विशेष रूप से

बच्चन जी, जो छायावादोत्तर काव्य धारा के प्रवर्तक हैं, उनकी कविताओं की ओर मेरा झुकाव हुआ। मेरा बच्चन जी की कुछ कृतियों पर शोध करने का मुख्य उद्देश्य था, कि उनकी कविताओं को उस शिखर तक ले जाना, जिनके वे अधिकारी थे। उनकी हमेशा से यही मंशा रही कि, वे समाज में व्याप्त जाति धर्म के खिलाफ समाज को जागृत करें। उनकी अक्खड़ता, कविता लिखने की अलग शैली, भाषा पर पकड़, वास्तविकता का अहसास, उनकी कवितओं की खासियत रही है। मधुशाला आज से ७५ वर्ष पूर्व लिखी गई थी, पर आज भी समाज में व्याप्त समस्याएं वैसे ही हैं।

मुझे लगता है कि कविता के द्वारा उन्होंने जन जागृति का प्रयास किया है। उनकी चतुष्पदी और षष्टपदी कविताओं ने हिन्दी काव्य जगत में धूम मचा दी थी। उनकी लेखनी भी उनकी भाषा के सामने लाचार मालूम होती थी। मैंने जब उनके काव्य संग्रहों का वाचन करना शुरू किया, तब उनकी कविताओं के मर्म को जाना। उनकी कविताओं के मधुकाव्य तथा संवेदना पूर्ण काव्यों, जैसे निशा निमंत्रण, एकांत संगीत, आकुल अंतर आदि में व्यक्त पीड़ा में आम आदमी की पीड़ा महसूस की जा सकती है। कवि की मनोदशा से जाना जा सकता है। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि उनकी व्यथा की कथा, निजी न होकर साहित्य के कानों में दुखी होकर गूँजने वाली, कोयल के मन की हूक की कूक है।

हिन्दी जगत के भास्मान सूर्य समान प्रखरित, उनकी रचनाओं पर शोधकार्य करके मैं संवेदना के भीतरी राग का अध्ययन कर उनके सुख तथा दुख के मुख्य भागों का अनुशीलन कर हिन्दी साहित्य जगत को उसका महत्व दर्शाना चाहती थी। जब मैं बाल्यावस्था में थी तब मैंने उनकी रूबाइयों को अपनी माताजी को गुनगुनाते सुना था। आज भी वे मेरे स्मरण में हैं। उनकी कविताओं की काव्य भाषा बहुत सरल थी। साधारण शब्दों में बड़ी बातें कह जाते थे।

मुझे लगता है, जितना बच्चन जी ने संवेदनाओं को अपनी कविताओं के द्वारा प्रस्तुत किया है शायद ही कोई कर पाता। उनकी कलम से निकला हर शब्द आज की जीवन शैली से भी मेल खाता है। वही झगड़े, मुल्ला, पंडित, पादरियों का जनता को भ्रमित करना। धर्म के नाम पर आडंबर, दूसरों के दु:ख को देखकर मजाक करना आदि। एक अकेले ही वे ऐसे कवि थे, जिन्होंने अपने द्वारा चलाए गए हालावाद को अजर, अमर कर दिया था। आज भी मधुशाला की रौनक कम नहीं कही जा सकती है। हाला, बाला और प्याले के प्रतीकों का जितना सुंदर प्रयोग बच्चन जी ने किया वैसा शायद ही कोई बिरला कर पाता। वे जिस युग में इन क्रांतिकारी कविताओं की रचना कर रहे थे, वह काल इन कविताओं के लिए उपयुक्त नहीं था। बिना पिए ही ऐसा श्रोता वर्ग बन गया था जो मधुशाला को बच्चन जी से सुनने के लिए लालायित रहता था। माँ

सरस्वती का निवास उनके सुमधुर कंठ में था। उन्होंने अपने काव्य लोक को स्थापित कर साबित कर दिया कि "मानव धर्म से नहीं कर्म से मान सम्मान पाता है"।

मैंने कई लोगों के शोध प्रबंधों को पढ़ा, जानकर आश्चर्य हुआ कि बच्चन जी पर जितना संशोधन होना चाहिए था, उसका एक तिहाई भी नहीं हुआ है। उनकी कविताएँ शायद इसलिए लोकप्रिय न हो पाईं, क्योंकि वे सर्वहारा वर्ग के लिए थीं, शायद उसमें बनावटीपन न था, उसमें वास्तविकता के दर्शन होते हैं और वे कविताएँ झूठे समाज का सच्चा आईना थीं, पर उन्होंने अपना लिखना नहीं छोड़ा।

सारे दुखों और गमों को अपनी कविता की चासनी में डुबोकर, वे अपने पाठकों तक अपने भाव पहुँचाने में सशक्त और सफल कवि रहे। मन के दु:ख को उन्होंने अपने आँसुओं से नहीं कविता की कड़ियों से व्यक्त किया। उनके दु:ख की अभिव्यक्ति आम आदमी को अपनी सी लगने लगी थी। जब मैंने विनोद सिंह जी का शोधप्रबंध देखा तो डूबते को जैसे तिनके का सहारा होता है, वही हाल हुआ। उनका विषय था "डॉ. हरिवंशराय बच्चन का काव्य : संवेदना और शिल्प" ।

मैंने भी बच्चन जी की संवेदना को टटोलकर हिन्दी साहित्य जगत में लाने की एक छोटी सी कोशिश की है। उनकी संवेदना का संसार तो आकाश सा है जो कि अनंत है, पर मैंने हिम्मत जुटाकर उसके कुछ पहलुओं पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है।

मैं जानती थी यह मार्ग इतना सरल नहीं है जितना मैं समझ रही थी, पर मैंने अपनी माँ से जाना था कि अगर तुम्हारे पास लक्ष्य है तो रास्ते खुद ब खुद सामने आ जाते हैं। उनकी संवेदना पर शोध करते समय, मैंने जाना कि मधु के प्यालों पर कई लोग शोध करने को लालायित थे पर वे केवल शब्दों के बाणों से शोध कर रहे थे। मैंने सोचा कि मैंने बच्चन जी की कविताओं के संवेदना के पक्ष को उजागर करने की पूरी कोशिश करूँगी। वास्तव में पूरी निष्ठा से मैं बच्चन जी की कविताओं की संवेदना रूपी नदी में उतर गई और आज इस पार भी आ गई हूँ। कुछ छोटी छोटी और भी बातें हैं जिन्होंने यह शोधकार्य करने के लिए मुझे प्रेरित किया था। वे इस प्रकार हैं- सरल, बोलचाल और मुहावरों की भाषा में उन्होंने अपनी अनुभूति और मनोदशाओं की इतनी प्रवीणता व सरलता से मूर्त रूप दिया है कि पढ़ते-पढ़ते ऐसा आभास होने लगता है जैसे हमारी भावनाओं व मनोदशाओं को उन्होंने कागज पर उतारा है। एक आम व्यक्ति की दशाओं को उजागर किया है।

मधुशाला की कृति के प्रकाशन के बाद जितनी उनकी सराहना हुई उतनी ही आलोचनाएँ भी हुई इन आलोचनाओं के क्या कारण थे, क्यों इन्हें विभिन्न संज्ञाओं जैसे पियक्कड़, हालावादी, हालाबाज, निराशावादी, पलायनवादी और संघर्ष से लोहा लेने की असमर्थता व्यक्त करने वाला कवि घोषित कर दिया है। इसके अतिरिक्त उनके काव्य में हाला सुन्दरी का ही गुणगान है, अनैतिकता और निष्क्रियता है। इन सब को विस्तार से जानने की मेरी प्रबल इच्छा हुई। मैंने सदैव उन्हें एक संवेदनशील कवि माना है। इसी कारण केवल एक काव्य के आधार पर विभिन्न नामों से पुकारना सर्वथा अनुचित है। यही कारण था कि मैं उस वास्तविकता को जानना चाहती थी, जो उनको उच्च कोटि का कवि साबित कर सके। इसीलिए मैंने उनके द्वारा रचित काव्य मधुशाला के अतिरिक्त मधुबाला, मधुकलश, निशा निमंत्रण, एकान्त संगीत और आकुल अन्तर काव्यों का चयन किया और अध्ययन करना चाहा कि किस प्रकार एक हालावादी, संवेदनशील और विभिन्न भावनाओं युक्त कवि सर्वोच्च कवि का स्थान पाता है।

जीवन की राह पर मधुकाव्य के सर्जक नवीन हिंदी काव्य के इतिहास में डॉ. हरिवंशराय बच्चन का काव्य एक ऐसा दीपक है जो नव निर्माण का द्योतक कहा जा सकता। जिसका आज तक सही रूप में अध्ययन नहीं हो पाया है। बच्चन जी की अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं करीब जिनकी संख्या ५० से अधिक हैं।

आधुनिक हिन्दी कविता के इतिहास में डॉ. हरिवंश राय बच्चन का कृतित्व एक ऐसा महत्वपूर्ण अध्याय है जिसका ठीक-ठीक अध्ययन अब तक नहीं हो पाया है। बच्चन जी की प्रकाशित पुस्तकों की संख्या ५० से ऊपर हैं जिनमें उनकी आत्मकथा के तीन भाग, प्रवास की डायरी, पच्चीस कविता संग्रह, दो निबंध संग्रह (नए पुराने झरोखे तथा टूटी छूटी कड़ियाँ); शैक्सपियर की चार ट्रैजडीज के अनुवाद, जनगीता और नगरगीता, रूसी कविताओं तथा ईट्स की कविताओं के अनुवाद (मरकत द्वीप का स्वर) और खैय्याम की रुबाइयों के अनुवाद सम्मिलित है। कविता, निबंध, आत्मकथा, समीक्षा और अनुवाद की विधाओं में रचना करनेवाले रचनाकार का समग्र मूल्यांकन तब तक पूर्ण नहीं हो सकता; जब तक सभी धाराओं और रचनाओं का व्यवस्थित अध्ययन न किया जाय। मगर इसे करने का धीरज और ईमानदारी किसके पास है? लोग तो खुद को प्रतिष्ठित चर्चित करने-कराने में जी-जान से जुटे हुए हैं और समीक्षा के कुछ खास केंद्र है जिनमें सिद्धांत और चौखटे पहले से तय कर लिए जाते हैं और फिर किसी रचनाकार को उसमें फिट किया जाता है। जो उनमें फिट नहीं होते; उन्हें निरर्थक समझ कर छोड़ दिया जाता है। कहीं ये चौखट अ-कविता के हैं; कहीं प्रतिबद्ध कविता की तो कहीं युवा कविता के और कहीं वामपंथी-सिद्धांतों के। विशेषण कितना भी व्यापक हो, घेरा आखिर घेरा है। जीवन के और उससे जुड़ी कविता के

अनेक आयाम है। जो सिद्धांतों की चौखट में नहीं बँधते। बच्चन जी की कविता भी "जीवन-धर्मी" होने से विविध और व्यापक है और ये समीक्षक-दृष्टि की कमजोरी है कि उसका विज़न (vision) व्यापक नहीं है।

"कही आलोचना का पूर्वग्रह है, तो कही पूर्वग्रह की आलोचना।"

छोटी से छोटी घटना भी उनके मन की हूक बनकर प्रतिध्वनित होती है। वे केवल मधुशाला के गीत ही नहीं सुनते बंगाल के अकाल की लपटें भी उन्हें जलाती हैं। लोक धुनों के सरगम पर उनके शब्द थिरक उठते हैं। स्वतंत्रता के बाद भ्रष्ट नेतृत्व के कारनामों पर वे आक्रोश में उबल पड़ते हैं। दोस्तों के सदमों से तड़पकर वे प्रहार कर उठते हैं। कभी वे उभरते प्रतिमानों के रूप गढ़ते हैं; तो कभी कटती प्रतिमाओं की आवाज सुनते हैं और चालीस वर्षों तक सतत लिखने के बाद अपना जाल समेटकर सन्यास की घोषणा कर देते हैं और यह सन्यास कोई विविशता नहीं उनका सुचिन्तित निर्णय है। हिन्दी के किसी और कवि ने इस तरह लेखन-सन्यास का व्रत नहीं लिया, अर्थात् बच्चन की काव्य-यात्रा एक पुरुषार्थ-भरी यात्रा है जिसमें वे अपने अनुभवों के साथ विकसित होने वाली काव्य-चेतना को अनासक्ति की ऊँचाई तक ले गये हैं।

बच्चन जी की काव्य यात्रा अनुभवों की पिटारी सी है। इस पड़ाव पर एक नव कल्पना का विस्तृत आंगन है। जिसमें कई पड़ाव हैं, पर वे बिना रुके चलते गए। उन्होंने कहा भी है।...

"मैं तो इस बेरोक सफर में जीवन के
इस एक और पहलू से निकल गया।"

कविता के इस बंजारे को धरती सतत् चलने के लिए निमंत्रित करती है। जीवन के दलदल में धँसकर भी जैसे उसकी अनासक्त-जिजीविषा का मन मोहजाल से अछूता ही रहता है। जीवन की सब सुख-सुविधाओं में भी उसका मन वनवासी ही रहता है। समाज और व्यक्ति द्वन्द्वात्मक-प्रक्रिया से उनके कथन बनते रहते हैं। कभी वे परिवेश की घटनाओं से रमते हैं और फिर एकाएक अपने भीतर सिमट जाते हैं। लेकिन यथार्थ से उनका सूत्र बराबर जुड़ा रहता है। वे कभी इतने व्यक्तिवादी नहीं रहें कि समाज के दु:ख-दर्दों से कटकर अपने अहम् का अलग द्वीप बना लें और कभी ऐसे फैश्नेबिल, नारेबाज प्रगति वादी भी नहीं बने कि उनका स्वतंत्र व्यक्तित्व खो जाये। १९८६ में बंगाल का काल लिखने वाला कवि निश्चय ही मनुष्य की पीड़ा से प्रतिबद्ध था और आजादी के बाद राजनैतिक क्षेत्र के भ्रष्टाचार और अफसरशाही पर तीखे व्यंग्य भी बच्चन जी ने लिखे हैं।

बच्चन का समूचा काव्य-सृजन, जीवन के समानान्तर विकसित होता गया है। "आम आदमी की तलाश" का नारा तो अभी-अभी दिया गया है, मगर छायावाद के वायनीय-जगत से कविता को सामान्य-जग के दु:ख-दर्द से संबद्ध करने का काम बच्चन ने ही किया था। इसीलिए उनके सामने प्रेषणीयता की समस्या या अभिव्यक्ति का संकट कभी उपस्थित नहीं हुआ। बच्चन हिन्दी के एक मात्र कवि हैं। जिनकी कविता पुस्तकों के अनेक संस्करण हुए हैं और यह साख उन्होंने खुद अपने बल पर बनाई है; पाठ्यक्रमों की बैसाखी पर नहीं।

लोकप्रियता को तनिक उपेक्षा से देखने का फैशन इन्टैलेक्चुअल समीक्षक की खास अदा है जिसके मूल में उनकी अपनी कुण्ठाएँ हैं। प्रगतिवाद और आम आदमी का नारा देने के बाद भी जिन्हें श्रोता नहीं मिलते; जिनकी किताब सिवा साहित्य-गोष्ठियों के कहीं चर्चित नहीं होती; वे बच्चन से ईर्ष्या क्यों न करें? यही ईर्ष्या कुण्ठित होकर उपेक्षा और साजिश में बदल जाती हैं। 'लोकप्रियता एक कठिन उपलब्धि है जो सहज, ईमानदार लेखन से मिलती हैं।' जिस कविता की जड़े मनुष्य की स्वाभाविक अनुभूतियों में होती हैं; वह लोगों तक पहुँचती ही हैं।

कवि ने कभी इस बात की चिन्ता नहीं की कि उनके बारे में हिन्दी के नये-पुराने समीक्षक क्या कहते हैं? जिसे सतत् आगे बढ़ना है, उसे इन बातों की फुरसत भी कब मिलती है? जो छोटी सी उपलब्धि से ही फूल उठते हैं, उन्हीं के लिए हिसाब-किताब की सुविधा है।

बच्चन को तो सहना है और कहना है। देखना है और विश्लेषण करना है। भोगना है और रचना है। चिन्तन करना है और भाष्य देना है। बच्चन की काव्य-यात्रा अपने जीवन के अनुभवों के समानान्तर चलने वाली ऐसी यात्रा है जिसमें कई रंग हैं, कई मोड़ हैं, उतार-चढ़ाव है और कई खेमे-खूँटे भी हैं।

बच्चन की कविता और जीवन संबंधी अवधारणाएँ जड़ और निश्चल न होकर चिर-परिवर्तनशील रही है। इस परिवर्तन में उनके काव्य के क्रम-विकास की सूक्ष्म रेखाओं को रूपायित होते हुए देखा जा सकता है। उन्होंने अपने जीवन में जो भोगा, उसी को कविता में अभिव्यक्त किया।

"शब्दों में कवि होने के पूर्व मैं जीवन में कवि हो गया था।"

कवि ने जहाँ 'मधुकलश' में अपने उद्धप्त अहं का उद्घोष किया है, वहाँ 'नर-नारी से भरे जगत् में कवि का हृदय अकेला' कहकर अपने निपट अकेलेपन को सहज स्वीकार भी किया है। मधु-काव्य के युग में भी बच्चन तन मन के संघर्ष से मुक्त नितांत, निर्द्वन्द्व रहकर अप्रतिहत आनंद का उपभोग कर सकें हों; यह सोचना भ्रांति का पोषण करना होगा।

अपने जीवन और काव्य की समानुरूपता को अनेक बार घोषित करने के बावजूद बच्चन ने अपने जीवन और काव्य के क्षतिपूरक संबंध की ओर भी संकेत किया है जिसे शांत चिन्ता विमुक्त घर नसीब नहीं हुआ था उसने मधुशाला बनाई थी जिसे सहज संगिनी नहीं मिली थी, उसने मधुबाला की कल्पना की थी जिसे मनवांछित साथी नहीं सुलभ हुआ था, उसने साकी का हाथ पकड़ लिया था और जो एक निर्मल शीतल स्रोत से अपनी तृष्णा तृप्त नहीं कर पाया था, वह हाला के प्याले पर प्याले चढ़ा रहा था। जीव कविता में प्रतिबिम्बत होता अवश्य है, पर यह प्रतिबिम्ब सदा सीधा ही नहीं पड़ता।

निशा निमंत्रण कवि ने संध्या के प्रातः तक प्रकृति के विभिन्न पट परिवर्तनों की पृष्ठभूमि पर अपने जीवन की निःसगता, शून्यता और व्यर्थता को विभिन्न रूपों में चित्रित किया है। प्रकृति चित्रण कवि का लक्ष्य नहीं है, परन्तु तीव्र राग चेतना के कारण कहीं कहीं प्रकृति का रूप अत्यंत भास्वर और रेखाएँ बहुत गहरी हो गई हैं। गिरिजा घर के घंटे की टनटन भी तीव्र आघात करती है। 'निशा-निमंत्रण' के सौ गीतों में वेदना, निराशा और एकाकीपन की भावना का इतना गहन सपुँजन हुआ है कि उसके प्रभाव से अछूता बने रहना असम्भव-सा प्रतीत होता है। ये अन्तरंग अनुभूतियाँ कवि की 'अपनी' होकर भी दूसरों के लिए 'पराई' नहीं रह जाती हैं।

'निशा-निमंत्रण' के बाद 'एकान्त संगीत' और 'आकुल अंतर' में भी हृदय के गहनतम तल से निःसृत वेदना का यह प्रवाह अपने अमंद वेग से बहता हुआ उस युग के लोग-मानस को पूर्णतया प्लावित कर देता है। इन गीतों में विविधता और अनेकता के होते हुए भी भावना का एक ऐसा अंतःसूत्र हैं जो इन्हें एक अद्भुत समानता और एकता प्रदान करता है। न जाने कितने भग्न हृदय ने 'बच्चन' की आँखों से अपने ही आँसुओं को बहता हुआ अनुभव किया था। वह 'एकान्त संगीत' भी कैसा था कि उसे गुनगुनाकर बहुतों का अकेलापन दूर हो गया था। 'बच्चन' ने अपनी बीती में जग-बीती को पाया हो या नहीं, किन्तु जग ने 'बच्चन' की बीती में अपनी आप बीती को अवश्य पाया था। चाहें सभी उद्गीतियों में 'बच्चन' अपने जीवन के विष को अमृत न बना पाए हों; परन्तु हाला का उन्मादक प्रभाव उनमें अवश्य पैदा हो गया था। कवियों की एक पूरी पीढ़ी 'बच्चन' जैसा दिखने और लिखने की होड़ा-होड़ में आगे आ रही थी।

'बच्चन' के यश-प्रस्तार में कवि-सम्मेलनों का योगदान तो रहा ही, उनकी पुस्तकें भी हाथों-हाथ बिक रही थीं। परन्तु जहाँ सहृदय श्रोता और प्रबुध पाठकों का प्रशंसन और अभिनन्दन 'बच्चन' को मुक्त रूप से प्राप्त हो रहा था, वहाँ आलोचकों के द्वारा उन पर अनेकानेक आक्षेप भी किए जा रहे थे। उनके मधुकाव्य पर 'वासना की उपासना' का आरोप अब पुराना पड़ चुका था; परन्तु उनके वेदना-दिग्ध काव्य पर मृत्यु-पूजा, निराशावादिता, संघर्षभीरुता, पलायनवादिता और जीवन-विमुखता के आरोप अनुत्तरदायी रूप से लगाए जा रहे थे। अहरिस के प्रति विफल प्रणय-निवेदन के कारण 'आकुल-अंतर' के गीतों में 'सिनिसिज्म' के कारण भी देखे जा रहे थे। आलोचकों ने इस तथ्य को प्राय: अनदेखा कर दिया कि 'बच्चन' के काव्य में व्याप्त निराशा वेदना और शंकाकूलता के मूल में कवि के जीवन की तात्कालीन परिस्थितियाँ और मन:स्थितियाँ हैं, न कि कोई रूढ़ धारणाएँ या जीवन के प्रति विकृत दृष्टिकोण।

बच्चन की वेदनाभूति इतनी खरी और उसकी अभिव्यक्ति इतनी सरल-प्राज्वल है कि आलोचक भी उसके सम्मोहन से अपने आपको मुक्त नहीं रख पाते हैं। परन्तु इस वेदना-काव्य की सरस संवेदनीयता को असन्दिग्ध रूप से स्वीकार करते हुए भी उसका इस दृष्टि से नि:संग विवेचना मैंने अपने शोध कार्य में तृतीय अध्याय में विस्तार से हरिवंशराय बच्चन की लिखित छ: रचनाओं-मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश, निशा-निमंत्रण, एकान्त संगीत और आकुल-अंतर के अनुशीलन द्वारा उजागर करने का प्रयास किया है। क्या वेदना-संवेदनाओं ने कवि को इतना आत्म-केंद्रित कर दिया है कि वह समाज के प्रति अपने दायित्व को भूल बैठा है? इन प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए मैने कवि हरिवंशराय बच्चन जी की उपर्युक्त रचनाओं का अध्ययन करने का प्रयास किया है।

शोध प्रबंध का सारांश -

शोध प्रबंध कुल छ: अध्यायों में विभाजित हैं -

प्रथम अध्याय में

1. जन्म
2. पारिवारिक जीवन
3. शिक्षा और
4. व्यक्तित्व का समावेश है।

द्वितीय अध्याय में-

1. हालावाद का परिचय
2. छायावाद का उदय
3. छायावाद का विवरण एवं
4. विभिन्न आलोचकों की टिप्पणियाँ प्रस्तुत की गई हैं।

तृतीय अध्याय में -

1. संवेदना का अर्थ
2. संवेदना पर आधारित छह काव्य कृतियों का चयन व इनका अनुशीलन (मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश, निशा निमंत्रण, एकान्त संगीत व आकुल-अंतर)
3. अनुशीलन करते समय शोधकर्त्री के अनुभव।

चतुर्थ अध्याय में -

1.बच्चन जी कविताओं की प्रस्तुति का कलेवर
2. उनकी काव्य शैली, भाषिक संरचना एवं अभिव्यक्ति की पद्धति का उल्लेख किया है।

पंचम अध्याय में -

1. प्रदेय
2. उपलब्धियाँ और
3. महत्व का विवरण है।

षष्ठम अध्याय में -

1. बच्चन जी का साहित्यिक योगदान एवं
2. उपसंहार प्रस्तुत किया है।

अध्याय - एक

हरिवंशराय बच्चन जी का परिचय

अध्याय - एक

१. हरिवंशराय बच्चन जी का परिचय

मिट्टी का तन, मस्ती का मन
क्षण भर जीवन, मेरा परिचय ![१]

हम सभी जानते हैं कि कुछ लोग जन्म से महान बनते हैं, तो कुछ लोग कर्म से। लेकिन महानता को प्राप्त करने में मनुष्य को निरंतर व सतत् प्रयास करने की आवश्यकता होती है। मानव की इस गरिमा पूर्ण गाथा को परिभाषित करते हुए स्वनाम धन्य कवि हरिवंशराय बच्चन स्वत: को साहित्य समाज में अमर बना गए।

मुसोलिनी ने कहा था कि एक प्रतिशत प्रेरणा के लिए निन्यानवे प्रतिशत पसीने की आवश्यकता होती है। बच्चन जी का जन्म किसी ऐसे परिवार में नहीं हुआ था, जो अपनी धन संपन्नता या कुल परंपराओं के कारण उन्हें प्रारंभ से ही एक सफल कवि के रुप में प्रतिष्ठित कर देने में समर्थ होता। जिस प्रकार एक पक्षी अपना आशियाना बनाने के लिए सुदूर से एक-एक तिनका चोंच में लाकर एक सुंदर सा घोंसला बना लेता है, वैसे ही इन्हें कवि के रुप में जो कुछ सफलता, सम्मान या यश प्राप्त हुआ उसे उन्होंने दिन रात अथक परिश्रम करके तिल - तिल स्वयं अर्जित किया। अपने व्यक्तित्व के निर्माण हेतु एक-एक काम को जोड़कर अपने लिए योग्य वातावरण बनाया।[२]

कवि बनने की प्रतिभा के साथ-साथ इसी अनुपात में साधना और परिश्रम भी अपेक्षित हैं। मन और बुद्धि का ऐसा संतुलन जिससे कविता रची जाती है, बिना साधना के प्राप्त होना असंभव है। वैसे तो बच्चन जी के व्यक्ति तथा काव्य की संवेदना को जानने के लिए हमें उनके पूर्ण काव्य संसार की यात्रा करनी होगी। परंतु यहाँ मैं उनकी कुछ कविताओं तथा काव्य संग्रहों को लेकर ही उनके काव्य लोक को आलोकित करने का प्रयास कर रही हूँ।

बच्चन जी के व्यक्तित्व तथा काव्य चेतना के मर्म का उद्‌घाटन करने के लिए अत्यंत व्यापक चित्रपट की आवश्यकता है। बच्चन जी की कविताओं का अनुशीलन करना भावनाओं के सहज मधुर अंत:स्पर्शी, इन्द्रलोक के सूक्ष्म वैभव में विचरण करना है। बच्चन जी के काव्यों का मूल्यांकन करने के पूर्व उनके जीवन का संक्षिप्त परिचय

इसलिए आवश्यक है कि उनके काव्य तथा उनकी जीवनाभूति का घनिष्ट संबंध है। उनका जीवनवृत्त इस प्रकार निरुपित कर आपके समक्ष प्रस्तुत कर रही हूँ।

१.१ हरिवंशराय बच्चन जी का जीवनवृत्त :

काव्य में कवि का संपूर्ण व्यक्तित्व अभिव्यक्त होता है। कवि की जीवनी और उसके जीवन दर्शन का कवि के काव्य अध्ययन में विशिष्ट महत्व है। अत: जीवनी, व्यक्तित्व और जीवन दर्शन एक दूसरे से संबद्ध होते हैं और इन तीनों का ही काव्य साधना में महत्वपूर्ण योग है। कवि के व्यक्तित्व तथा कृतित्व को जड़ से जानने के लिए उसके क्रियात्मक जीवन संघर्ष, सुख-दु:ख, संकल्प, विकल्प तथा स्वभाव इत्यादि का गहन अध्ययन आवश्यक है।

कवि संवेदना से परिपूर्ण प्राणी है। अत: वाह्यजगत की घटनाएँ उसे प्रभावित करती रहती हैं। कवि के जीवन के क्रमश: उतार चढ़ाव का अवलोकन विशिष्ट क्रियाकलापों के द्वारा हम उसके सृजन की पूर्वावस्था तथा मनोदशा के पूर्णरुपेण परिचित हो सकते हैं। जीवनी के आधार पर ही हमें कवि के काव्य का विकास तथा साहित्यिक निर्माण की सही रुपरेखा तथा आधारभूमि की जानकारी प्राप्त होती है।

१.२ वंशावली -

बच्चन जी के पुरखों की जड़ें दो ढ़ाई सौ वर्ष पूर्व उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के अमोढ़ा से जुड़ी हैं। यहाँ के निवासी अपने को अमोढ़ा के पांडे कहते हैं। बच्चन जी के पुरखे मनसा प्रतापगढ़ से आकर इलाहाबाद तहसील के क्षेत्र के तिलहर गद्दी के आचार्य गुरु महाराज से तीन पुत्रों का वरदान पाकर प्रयाग की ओर निकल पड़े। वे वहाँ मुहल्ला चक के एक टूटे-फूटे मन्दिर के सामने झोंपड़ी बनाकर रहने लगे। उन्हें गुरु महाराज के आशीर्वाद से तीन पुत्र हुए। चौथी पीढ़ी आते-आते तीनों अलग हो गए । मनसा की छठी पीढ़ी के मझले घर में बच्चन जी के पिताश्री प्रतापनारायण हुए।

मझले घर में मिठूलाल के पुत्र भोलानाथ, के पुत्र प्रतापनारायण के दो पुत्र हुए हरिवंश और शालिग्राम, हरिवंश के दो पुत्र अमिताभ और अजिताभ और शालिग्राम के पुत्र प्रभात हुए। मनसा की सातवीं पीढ़ी में उनके वंश में शिवप्रसाद, ठाकुरप्रसाद, हरिवंश, शालिग्राम, जगतनारायण, रामचंद्र और काशिप्रसाद सब मिला कर सात पुत्र जन्में थे।

मनसाराम की चौथी पीढ़ी में मिठूलाल बच्चन जी के परबाबा थे। वे इस्पाती शरीरवाले, लाठी, तलवार, घुड़सवारी तथा बाज के शोकीनों में थे, तथा उग्र स्वभाव वाले थे। शिवजी के परम भक्त थे और उन्होंने शिवालय भी बनवाया था। शायद परबाबा के संस्कारों के प्रभाव के कारण ही बच्चनजी ब्रिटिश युनिटों से संबद्ध होकर आधुनिक हथियारों को चलाना सीख गए थे। उन्होंने लिखा है, मैं कलम और बंदूक चलाता हूँ। इन्हीं संस्कारों के कारण बच्चन जी में रुढ़ी विरोधी तथा क्रांतिकारी भाव पैदा हुए।

मिठूलाल के अक्रामक व्यक्तित्व के नीचे भोलाराम का व्यक्तित्व निखर न पाया। उन्होंने अरबी, फारसी, उर्दू की शिक्षा प्राप्त की थी। जब गदर का दौर था, तब उनके पैर पर ठोस लोहे का सवा सेर का गोला पड़ा था। बच्चन जी लिखते है मैं हूँ उनका पौत्र, पड़ा था जिनके पॉव गदर का गोला। भुइया रानी के दर्शन स्वरुप दादी के पुत्र हुए प्रताप नारायण बच्चन जी ने अपने पिता की जन्मभूमि की वंदना की है . . . . ललितपुर को नमस्कार है, जहाँ जन्में थे पिता मेरे। [३]

भारत में जब पुर्नजागरण का दौर चला, जब पाश्चात्य शिक्षा का प्रभाव समाज के हर क्षेत्र में स्थापित हो रहा था, तब प्रत्येक क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का परिचय देने पर कायस्थों को अपनी शूद्रावस्था खलने लगी। इसलिए कुछ लोगों ने अपने नाम के आगे सिंह लगाना शुरु किया था। कुछ समय तक बच्चन जी ने भी अपने नाम के आगे वर्मा लगाया, पर जब जाति तथा उपजाति की व्यर्थता का बोध हुआ तब से उन्होंने वर्मा लगाना छोड़ दिया था।

१.३ माता-पिता :

बच्चन जी के पिताजी का विवाह इलाहाबाद के ही मुहल्ला कटरा के निवासी मुंशी ईश्वरी प्रसाद जी की कन्या सुरसती से हुआ था। प्रताप नारायण जी अपनी लगन और परिश्रम के कारण ही पायनियर प्रेस के आधारस्तंभ के रुप में कार्यरत थे। अगल-बगल के रहने वाले लोग प्रताप नारायणजी को अच्छा पड़ोसी जानते थे। वे मौन रहकर ही गीता वाचन तथा रामचरित मानस का पाठ करते थे। उनकी पूजा की कोठरी में दीवार पर भगवान राम, कृष्ण, शिव, गणेश, हनुमान, लक्ष्मी जी तथा दुर्गा जी की तस्वीरें लटकी थीं। वे संस्कारों से निष्ठावान तथा सनातनी थे । वे गो ब्राह्मण के भक्त तथा गीता दर्शन के प्रिय थे। वेद-वेदान्त का रस उन्होंने फारस के सूफी दर्शन के कवियों से लिया था, तथा स्वामी रामतीर्थ के व्याख्यानों से पाया था।

बच्चन जी के पिताजी लगभग ६५ वर्ष की अवस्था में परलोक सिधारे थे। बच्चन जी की माता जी स्त्रियोचित, कोमलता, सहजविश्वासी, पतिव्रता तथा त्याग की मूरत थीं। उनमें हर कार्य को बड़ी दक्षता से करने की अपार शक्ति थी। उन्होंने अपने पति के हर कार्य में सदैव बढ़-चढ़ कर मानसिक तथा शारीरिक रुप में योगदान दिया। प्रतापनारायण सुरसती को पाकर धन्य हुए थे। सुरसती जी हिन्दी तथा उर्दू वर्णमाला जानती थीं। बच्चन जी ने उर्दू की शिक्षा अपनी माँ सुरसती से ही प्राप्त की थी। वे भजन, रामायण, सूरसागर, सुरसागर और प्रेमसागर का पाठ करती थीं। बच्चन जी के कवि पिण्ड को सुरसती ने बड़े जतन से पाला पोसा था। पिता प्रतापनारायण जी की मृत्यु के बाद तीन वर्ष छ:महीनें तक तेजी बच्चन की सेवा पाकर वे परलोक सिधार गईं।

१.४ जन्म - जन्मतिथि, जन्मस्थान :

मैं जिनकी कविताओं का संवेदनात्मक अध्ययन कर रही हूँ, ऐसे कविश्री बच्चन का जन्म २७ नवम्बर सन् १९०७ को प्रयाग के चक मुहल्ले में हुआ था। माता सुरसती ने उन्हें बड़े जप-तप और कथा श्रवण के बाद छठीं संतान के रुप में एक पुत्र रत्न की भाँति पाया था। बहुत सारे टोने टोटके, ओझाई झाड़ फूँक के साथ पुत्र को चिरंजीवी बनाने के लिए उन्हें लछमिनियाँ चमारिन के हाथों भी बेचा। बच्चन जी के पूर्व वंश में केवल कन्याएँ ही थी। बच्चन जी ही पहले पुत्र रत्न के रुप पैदा हुए थे। उनको जीवित रखने के लिए इमाम साहब का फकीर भी बनाया गया। पिता श्री प्रतापनारायण ने हरिवंश पुराण सुनने के उपरान्त इन्हें पाया था, इसलिए इस संतान का नाम इन्होंने हरिवंश रखा। घर पर इन्हें बच्चन कहकर ही पुकारा जाता था।

१.५ प्रारंभिक संस्कार (बाल्यकाल) :

पिता प्रतापनारायण के सस्वर मानस पाठ के श्रवण संस्कार बच्चन जी के बचपन से ही उनके तन मन में घुट्टी की तरह रच बस गए थे। बच्चन जी लिखते हैं कि अज्ञान रुप से मेरे अवचेतन और ज्ञान रुप से मेरे चेतन की शिरा-शिरा मानस की ध्वनियों से भीगी हुई थीं। आगे जाकर इन ध्वनियों की गूँज बच्चन जी के काव्यों में यत्र-तत्र-सर्वत्र दिखने लगीं। लछमिनियाँ चमारिन का दूध पीने और विभिन्न वर्णों तथा विभिन्न लोगों के चक मुहल्ले में रहने के कारण बच्चन के संस्कारों और छूत-अछूत के प्रति मानवीय विचार धारा के विकास में बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

अपने पुरखों के आशीर्वाद से प्राप्त संस्कार की बेल आज भी बच्चन जी के परिवार में सांस्कृतिक, धार्मिक, अध्यात्मिक रुप में देखने को मिलती है। आज भी उनके घर के सभी सदस्यों में धार्मिक ग्रंथों तथा देवी देवताओं के प्रति श्रद्धा, भक्ति तथा पूजा अर्चना की भावना है। बच्चन जी के साहित्य पर इस सांस्कृतिक परम्परा का गहरा प्रभाव पड़ा है। इसलिए बच्चन जी की आत्मा आर्य संस्कृति से ओत प्रोत है। सदाचार, सत्कर्म, नैतिकता, देशप्रेम, देशभक्ति की भावनाओं से बच्चन जी के काव्य का ओजस्वी रुप प्रकटित हुआ है।

गरीबी, दैन्यता, कष्टों और कठिनाइयों की काली परछांई के बीच बच्चन जी का आर्विभाव (आगमन) हिन्दी साहित्य जगत के लिए सौभाग्य पूर्ण रहा। यहाँ कठिन से कठिन तथा विपरीत परिस्थितियों से लड़कर कवि मनीषी सदैव अपने कर्म पथ पर अग्रसर रहे हैं। उन्होंने कभी किसी के आगे अपनी गरीबी दैन्यता तथा विषम परिस्थिति का रोना नहीं रोया, बल्कि पैसे के अभाव में, संघर्षशील वातावरण से घिरे रहने पर भी उनके काव्य के माधुर्य में कहीं उसका प्रभाव नहीं दिखता। जैसे आग पर जलाकर कुंदन (सोने) की परख की जाती है, वो जितना तपता है उतना निखरता है। उसी प्रकार बच्चन जी की कविताएँ भी दु:ख के थपेड़ों से जूझ कर सर्वोत्तम रचनाएँ बनी। बच्चन जी ने काव्य जगत के गगन में अपने आप को ध्रुवतारे सा स्थापित किया। तभी तो कालजयी जैसी रचनाएँ उन्होंने लिखी, वैसी फिर कोई न लिख पाएगा।

१.६ शिक्षा :

बच्चन जी ने अपनी बहनों के साथ रहकर हिन्दी की शिक्षा प्राप्त की। उस काल में शिक्षा श्री गणेश पंडित या पुरोहित से करवाया जाता था। पुरोहित जी के द्वारा शिक्षा की विधिवत श्रीगणेश होने के बाद बच्चन जी ने मौलवी साहब से फारसी कहावतें और सूक्तियाँ रटी। अपनी बहनों तथा माता सुरसती जी से गिनती, जोड़, घटाना, गुणा, भाग सीखा।

जब बच्चन जी आठ वर्ष के थे, तब मोहतिशमगंज म्युनिसिपल स्कूल में पहला और दूसरा दर्जा पास किया। ऊँचा मंडी स्कूल में उन्होनें दर्जा तीसरा और चौथा प्राप्त किया। डिप्टी इन्सपेक्टर बाबू शिवकुमार सिंह ने बच्चन को उर्दू छोड़ कर हिन्दी पढ़ने की अनुमति दी। उन दिनों उर्दू का महत्व हिन्दी से अधिक था। बच्चन जी ने अथक प्रयास करके हिन्दी में दूसरा स्थान प्राप्त किया। उनकी प्रतिभा को देखकर उनका नाम वहाँ की कायस्थ पाठशाला के छठीं कक्षा में लिखा दिया गया। वहीं से उन्होंने अपनी हाईस्कूल की परीक्षा पास की। विद्यालय में होने वाली विविध स्पर्धाओं में उन्हें कई

बार पुरस्कृत भी किया गया। चाहे भाषण हो या वाद विवाद, उनकी वाणी की ओजस्विता देखकर निर्णायक गण भी दाँतों तले ऊँगली दबा लेते थे।

अपने विद्यालय के हिन्दी समिति के अंतर्गत होने वाले साहित्यिक क्रिया कलापों से प्रेरित होकर बच्चन जी ने अपने अवकाश प्राप्त करने वाले मास्टर साहब के बिदाई समारोह के उपलक्ष्य में एक कविता लिख डाली। बच्चन जी के चरित्र निर्माण, व्यक्ति विकास के लिए उनके काल, परिवेश, शिक्षा संस्था, परिवार पास-पड़ोस तथा गुरुजनों का विशेष सहयोग रहा है। ई.सन् १९२६ में बच्चन जी ने गर्वमेंट कॉलेज में अपना नाम लिखवा लिया। आर्थिक परिस्थिति से निपटने के लिए तथा अपनी पढ़ाई आगे बढ़ाने के लिए उन्हें ट्यूशन भी करने पड़े। वो भी ८ से १० रुपये में। जिससे गुजारा संभव न था पर उन्होंने सोचा कुछ ना होने से अच्छा है कुछ होना (Something is better than nothing)।

सन् १९२७ में उन्होंने इंटर किया। ई.सन् १९२९ में उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से पाश्चात्य दर्शन, अंग्रेजी साहित्य और हिन्दी लेकर प्रथम श्रेणी में बी.ए. किया। ई.सन् १९३० में उन्होंने अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. प्रीवीयस उत्तीर्ण की। इसी समय उन्होंने कॉलेज छोड़कर गांधीजी के सत्याग्रह आंदोलन में भाग लिया। पढ़ाई छूट गई पर फिर १९३८ में उन्होंने अपनी एम.ए. द्वितीय वर्ष की परीक्षा पूर्ण की। इसके पश्चात् उन्होंने सन् १९३९ में बनारस ट्रेनिंग कॉलेज से बी.टी की परीक्षा पास की और सन् १९४० में वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में स्नातकोत्तर अध्ययन करने लगे।

सन् १९५२ में, वे अंग्रेजी सहित्य में विलियम बटलर ईट्स के साहित्य पर डॉक्टरेट प्राप्त करने के लिए केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में गए। सन् १९५४ में सफलता प्राप्त कर पीएच.डी. पूर्ण कर स्वदेश लौट आए और पुनः विश्वविद्यालय में अंग्रेजी साहित्य पढ़ाने लगे। फौजी शिक्षा प्राप्त कर उन्होंने पूरे लेफ्टिनेंट की रैंक प्राप्त की। परिणामतः उनके कंधों पर दो स्टार लगने लगे और कैम्ब्रिज में थोड़े दिन U.O.T. corps में रहकर बहुत कुछ सीखा।

बच्चनजी के प्रेरणा स्त्रोत-सुमित्रानंदन पंत

१.७ साहित्यिक प्रेरणा :

अपने छात्र जीवन में बच्चन जी को पूरा साहित्यिक वातावरण मिला था। इस प्रसंग में ठाकुर विक्रमादित्य और आनन्दी प्रसाद श्रीवास्तव के नाम सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। उन दिनों सुमित्रानन्दन पंत और निराला जी से भी प्रेरित - प्रभावित हुए थे। अपने बी.ए. के दिनों में बच्चन जी को साहित्यिक प्रेरणा डा. सत्यप्रकाश जी से मिली। एम.ए. के दिनों बच्चन जी को कहानी - प्रतियोगिता में प्रथम पुरुस्कार मिला था और वे प्रेमचन्द के सम्पर्क में आये। साहित्य की ओर विशेष रुचि होने का कारण, बच्चन जी ने स्वयं बताया कि स्वामी सत्यदेव परिव्राजक का व्याख्यान सुनना था लेकिन कायस्थ पाठशाला में की गई तुकबंदी को ही बच्चन जी अपने काव्य का श्री गणेश मानते थे। यह वह समय था जब उन्हें पं. विज्ञाम तिवारी, ठाकुर विक्रमादित्य सिंह ने कविता लिखने के लिए प्रेरित किया था। उन्हें मात्राओं का ज्ञान कराने वाले प्रथम गुरु थे ठाकुर विक्रमादित्य। सन् १९२० में जब वे कक्षा पाचवीं-छठीं के छात्र थे, तभी से उनका कवि मन अपनी काव्य कला को दिखानें के लिए आतुर होने लगा। इस कार्य में उनके प्रेरणा स्त्रोत बने श्री आनंदी प्रसाद श्रीवास्तव अपने मास्टर साहब के विदाई समारोह में लिखी गई कविता से वे थोड़ी बहुत तुकबंदी उन्होंने ऊंचा मंडी स्कूल में शुरु कर दी थी, और इसी काल में भारत भारती से गुप्त जी की पद्मावली, सरस्वती के पृष्ठों से पंत जी की कविता और मतवाला के अंकों से निराला जी के मुक्त छंद से उनका परिचय हुआ।

इसके बाद बच्चन जी केवल छन्दों में लिखने लगे। सन् १९३३ में देहाती कवि की भूमिका निभाने के लिए कवित्त और एक लोक गीत स्वयं रचा। आगे चलकर बच्चन जी में कवि होने का आत्मविश्वास स्व. श्यामजी ने दृढ़ किया था। स्वान्त:सुखाय वे अपना दु:ख कागज में कहने लगे। उनकी कविताऐं उनके जीवन से उठी अनुभूति की झलक दिखलाती हैं। भाषा के सम्बन्ध में कोई अनुदारता और संकीर्णता नहीं है। ठाकुर यादवेन्द्र सिंह के कहानी संग्रह हार से प्रेरित होकर बच्चन जी ने अपने प्रथम काव्य संग्रह का नाम तेरा हार रखा। इन सबसे ऊपर नाम आता है उमर खैय्याम का उनके काव्य में पहुँचे हुए साधकों और संतो का प्रभाव भी दिखाई पड़ता है जिनमें मौनी बाबा, कबीरदास विशिष्ट हैं। दिनकर, पंत, निराला, प्रेमचंद, महादेवी वर्मा, अंचल, तथा डब्लू.बी. ईट्स, शेक्सपियर का प्रभाव देखते ही बनता है। ईट्स के प्रभाव से उन्होंने पॉच मूर्तियों उनकी कविता दो इमेज से प्रेरित है। मार्क्सवाद और अस्तित्ववाद से भी उनका साहित्य प्रेरित है। [४]

मेरे मतानुसार कविश्री हरिवंशराय बच्चन जी छायावादोत्तर स्वछन्दतावादी काव्य धारा के अग्रगण्य कवि हैं। उनके अविर्भाव के समय द्विवेदी युग की खड़ी बोली अपने पैरों पर खड़ी हो रही थी। खड़ी बोली के समर्थन में पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी, श्रीधर पाठक, राधाचरण गोस्वामी और प्रतापनारायण मिश्र आदि महान विभूतियों का बोलबाला था।

सारांश रुप में देखें तो हम कह सकते हैं कि सांस्कृतिक दृष्टि से बच्चन के मन पर तुलसी का प्रभाव था। उमर खैय्याम ने बच्चन जी के कवि जीवन के प्रारंभ में अद्‌भुत रुप से प्रेरित किया। सर्वश्री प्रेमचंद, मैथिलीशरण गुप्त, निराला, दिनकर, अंचल और नरेन्द्र उनके प्रियजन रहे। आधुनिक हिन्दी कवियों में पंत जी को उन्होंने सबसे अधिक पढ़ा। अंग्रेजी के पुराने कवियों में और आधुनिक कवियों में कीट्‌स उनके प्रिय कवि हैं। बच्चन जी शेक्सपीयर से भी काफी प्रभावित रहे हैं।

बच्चन जी ने जो भी प्रेरणा पाई उससे ज्यादा हिन्दी साहित्य को समर्पित कर दिया। बच्चन जी हिन्दी काव्य संसार के एक अमूल्य हस्ताक्षर है। जिनका हालावाद कम उम्र का हो कर भी हिन्दी के पाठकों के लिए काव्य लोक की अजर अमर कृति बन गया।

१.८ व्यक्तित्व व काव्य की संक्षिप्त विशेषताएँ :

व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास एक दिन में नहीं होता अपितु यह सतत् चलने वाली प्रक्रिया है। बच्चन जी का कवि हृदय भी इसी भांति पारिवारिक वातावरण से प्रांरभ हो गया था। जीवन में घटने वाले विभिन्न उतार चढ़ावों ने उनके दृढ़ निश्चय को और भी मजबूती प्रदान की। बच्चन जी के विषय में संक्षेप में लिखना बड़ा कठिन है। सरलता इनके व्यक्तित्व का पहला आकर्षण था। वेशभूषा और बोलचाल में कोई आडंबर बच्चन जी को प्रिय न था। उनके पहनावे - ओढ़ने में और बातचीत में भी वे बहुत साधारण रहे। उनके व्यक्तित्व की दूसरी विशेषता थी आत्मीयता । वे बहुत जल्दी और बहुत अधिक दूसरे किसी को अपने व्यक्तित्व से मोह लेते थे क्योंकि उनमें आत्मीयता का भाव कूट-कूट कर भरा था। विशिष्ट रुचि में प्रस्तर - खंडों को सजाने का शौक रहा है। उन्होंने अपने बंगले के बरामदे में और वृक्षों के नीचे इस प्रकार उर्मियाँ सजाई हैं कि उसे देख कर उनकी सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति की सराहना करते ही बनती है। उनका स्वभाव अदम्य उमंगोत्साह तथा अटूट आशा तथा आस्था से परिपूर्ण था, अपनी इसी कर्मठता के कारण ही वे अपने जीवन का विकास कर सके। उनकी बहुमुखी प्रतिभा की झलक उनके रचना संसार से तो मिलती है, उनकी जिन्दगी से भी मिलती है ।

पत्र व्यवहार में भी बच्चन जी जैसा सजग और सक्रिय कवि हिन्दी जगत में दूसरा कोई नही था। चाहे बड़े हो या छोटे, प्रसिद्ध हो या अप्रसिद्ध, बच्चन जी सभी के पत्रों के उत्तर शीघ्र और अवश्य देते थे। पत्राचार में इतने कुशल और कर्मठ व्यक्ति बहुत अल्प ही दिखाई देते हैं। पत्र के संबंध में एक स्थान पर जीवन प्रकाश जोशी ने अपनी पुस्तक बच्चन, व्यक्तित्व और कवित्व में लिखा है - मेरा पत्र व्यवहार, नवंबर १९५६ से शुरु हुआ था। वैसे उनका पहला पत्र मुझे वीणा नामक सहारनपुर से प्रकाशित मासिक पत्रिका के सिलसिले में मिला था। [५]

इसके बाद उनका पत्र मैंने अपनी शिष्या शशिबाला जैन के पास भी देखा था। यह मेरी ही शरारत के कारण शशि को मिला था। इस पत्र को पढ़ने के बाद बच्चन जी के व्यक्तित्व के बारे में मेरे मन में दो प्रतिक्रियाएँ हुई पहली यह कि बच्चन जी का कवि स्वभाव बहुत सरल है, दूसरी यह कि बच्चन जी बहुत रोमांटिक रुचि के कवि हैं। आगे जब मैंने मिलन यामिनी में इस कविता को ध्यान से पढ़ा कि -

प्यार जवानी, जीवन इनका
जादू मैंने सब दिन माना। [६]

तब मुझे अपनी इस प्रतिक्रिया की पुष्टि मिली कि कवि बच्चन मूलत: धड़कते हुए हृदय का कवि है, और फिर कुछ समय में ही एक लंबे पत्र व्यवहार से मुझे बच्चन जी के सहज व्यक्तित्व का बोध हुआ। आज भी बच्चन जी के दो सौ पत्र मेरे पास सुरक्षित हैं । उनके पत्रों द्वारा उनके व्यक्तित्व और पत्रव्यवहारता की जानकारी मुझे मिली। वे शिष्टाचार से कहीं अछूते न रहे। सारांशत: कह सकते हैं कि बच्चन जी का व्यक्तित्व एक अथाह सागर है और उसमें गहरे पैठने वालों को असंख्य गुणों के मणि माणिक मोती दिखाई पड़ते हैं। इसके बाद बच्चन जी के जीवन के साथ-साथ ही उनकी कविताओं में एक नया मोड़ आया। निश्चित रूप से एक बात सत्य है कि कवि की कविता की प्रत्येक पंक्ति और शब्द के पीछे एक पूरा इतिहास छुपा रहता है। यदि उसे समय रहते अंकित न कर दिया जाय तो आगे आनेवाली शताब्दियाँ ऐसे ढूँढती है जैसे कहीं पर रखी हुई कोई अमूल्य वस्तु खो गई हो।

हिन्दी कविता को जन मानस से जोड़ने और प्रतिष्ठित करने का कार्य बच्चन ने पूरी निष्ठा और ईमानदारी से संपादित किया। उन्होंने लिखा है 'मैं महान काव्य लिखना चाहता हूँ, महाकाव्य नहीं।' सिर्फ उन्होंने महाकाव्य ही नहीं लिखा वरन् आत्म कथा के रुप में महाकाव्य भी रचा है। बच्चन का व्यक्तित्व एक स्वावलंबी और स्वाभिमानी व्यक्ति का रहा है। वे इस बात का अनुसरण करते हैं कि -

तू न थकेगा कभी, तू न थमेगा कभी!
एक पत्र-छाँह भी माँग मत, माँग मत , माँग मत !
अग्नि पथ! अग्निपथ! अग्निपथ! [७]

सन् १९२० में जब वे कक्षा पाँचवी या छठी में थे, तभी से उनका कवि हृदय अपनी कला दिखाने के लिए आतुर होने लगा। इस कार्य के प्रेरणा स्त्रोत बने श्री आनंदी प्रसाद श्रीवास्तव। स्वयं शिक्षा तथा अभ्यास के आधार पर उनके हृदय का यह पक्ष स्वत: ही निखरता गया। बच्चन जी के काव्य के संदर्भ में कुछ पाठक तथा विद्वान यह कहते हए पाए जाते हैं, कि छंद कविता के लिए आवश्यक नही हैं, क्योंकि संस्कृत के किसी आचार्य ने अपने काव्य, लक्षण या छंद का उल्लेख नहीं किया। वे भूल जाते हैं कि काव्य केवल संस्कृत का हिस्सा नहीं हैं, वह साहित्य में भी प्रयुक्त होता है। यह सिर्फ गद्य या पद्य के लिए नही होता है, ऐसी स्थिति में काव्य का स्वरुप निरुपण करते समय उसमें ऐसे तत्व का उल्लेख करना जो कि साहित्य की सिर्फ एक विधा के लिए आवश्यक हो, यह एक अनुचित बात होगी।

काव्य और शास्त्र के दो पहलू है, यह बताने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। काव्य और शास्त्र की श्रेणी प्रसिद्ध है, जिसे हम और आप निम्न प्रसिद्ध श्लोक में भी देखते है।

काव्य शास्त्र विनोदेन,
खले गच्छति धीमताम्। (चार्वक दर्शन)

काव्य के दो भेद है गद्य और पद्य। यही पद्य कविता है, जिसे गद्य से इसलिए भिन्न बताया गया है कि वह छंदोबद्ध होता है।

बच्चन जी मूलतः मानव भावना, अनुभूत प्राणों की ज्वाला तथा जीवन संघर्ष के आत्मनिष्ठ कवि हैं। प्रकृति के सुकोमल कवि की संज्ञा प्राप्त कवि श्री सुमित्रा नंदन पंत ने बच्चन जी के बारे में बिलकुल सच ही लिखा है -

अमृत हृदय में गरल कंठ में, मधु अधरों में,
आए तुम वीणा धर, कर में जन मन मादन। [८]

बच्चन जी अमृत और गरल भावना, अनुभूति तथा जीवन संघर्ष की आशा निराशा के कवि नही हैं तो और क्या हैं ? बच्चन जी के अधिकांश काव्यपट में उनकी आत्मकथा के ही बिखरे पन्ने मिलेंगे, जिनमे संभवतः घटनाएँ तो अपने स्थूल यथार्थ के कारण प्रछन्न हो गई हैं, किन्तु संघर्ष, उहापोह, घात प्रतिघात तथा सुख दुःख के संवेदना के मधुर रस का स्वाद पाठकों के हृदय को स्पर्श कर उनकी सासों में बहने लगता है तथा कुछ समय के लिए उनकी अनुभूति का अभिन्न अंग बन जाता है। कवि बच्चन जी कभी कभी हाथ में बंसी और तूम्बी लेकर अवचेतन मन में गहरी गुहार लगाते हैं तथा अपने दुःख और प्रणय रुद्ध भावनाओं के स्वप्न पंख को खींच कर गुह्य कामनाओं के सरिसृप जागकर मन को कवि की कल्पना के सशक्त डैनो में उड़ाने अथवा उसके शब्द दंश से मोह मूर्च्छित करते हैं।

कवि के दो रुप स्पष्ट आँखों के सामने आते हैं। पहला सहज रुप मुग्ध तरुण किशोर प्रेमी का, जो प्रेम की स्वप्न कोमल पलकों से गुदगुदाए जाने के लिए अपने हृदय को हथेली में लिए फिरता है और दूसरा साहसी और कभी कभी दुःसाहसी वज्र दृढ़, संकल्प निष्ठ, अपराजित व्यक्ति का, जो जीवन के अंधकार से प्रकाश और मृत्यु से अमृत संचय करने की क्षमता रखता है। ये दोनों प्रेमी के रुप तथा कर्तव्यनिष्ठ योद्धा के रुप अनजाने ही मिलकर उनके अब तीसरे रुप में निखर रहें हैं। जिनके लिए वह अपने को तीसरा हाथ को सौंप कर दिन प्रतिदिन नवीन शक्ति, आशा तथा आनंद का संग्रह कर रहें हैं। कवि के इसी काव्य के रुप को हम उनकी रचनाओं में उतार चढ़ाव की तरह देखेंगे।

अपने किशोर तारुण्य के उन्मेष में कवि ने अपने मधुकाव्य में अपने सोंदर्योपासक हृदय के मादक आनंद को वाणी की रसमुग्ध प्याली में उड़ेलने का प्रयत्न किया है। मधु की अर्धजाग्रत, अर्ध्दतंदिल, ग्रंथमंदिर कुंज गलियों में कवि ने सर्वप्रथम उमर खैयाम के प्रदीप प्रतिमा प्रकाश में प्रवेश किया है। नए पुराने झरोखे में कवि उमर खैयाम जी के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि मेरे काव्य जीवन में रुबाइयात उमर खैयाम का अनुवाद एक विशेष स्थान रखता है। उमर खैयाम ने रुपरंग,

रस की एक नई दुनिया ही मेरे आगे उपस्थित नहीं की बल्कि उन्होंने भावना, विचार तथा कल्पना के सर्वथा नए आयाम मेरे लिए खोल दिए। उन्होंने जगत नियति और प्रकृति के सामने लाकर मुझे अकेला खड़ा कर दिया। मेरी बात मेरी तान में बदल गई। अभी तक तो मैं लिख रहा था, अब मैं गाने लगा। खैयाम जी से जो प्रतीक मिले उनसे अपने को व्यक्त करने में मुझे बहुत सहायता मिली। मधुशाला और मधुबाला लिखते समय वाणी के जिस उल्लास का अनुभव मैंने किया, वह अभूतपूर्व था। शायद उतने उल्लास का अनुभव मैंने बाद में कभी नहीं किया।

बच्चनजी ने यह किस अभिप्राय से लिखा उसे ठीक से समझ पाना मुश्किल है, पर मैं इतना अवश्य जानती हूँ कि बच्चन जी के प्रेरणा स्त्रोत उमर खैयाम जी को ही पढ़ कर सर्वप्रथम उन्मुक्त हुए। कवि बच्चन जी के काव्य की विशेषता मधुशाला की इन पंक्तियों में उभरकर सामने आई हैं...

पहले भोग लगा लूँ तुझको, फिर प्रसाद जग पाएगा,
सबसे पहले तेरा स्वागत, करती मेरी मधुशाला। [९]

अपनी मस्ती के आलम में डूब कर बच्चन जी अपने आराध्य देव को भी आमंत्रित करते हुए मधु का भोग लगाकर स्वागत करने के लिए मधुशाला सजा रहें हैं।

उनका कहना था कि उनकी मधुशाला का रस कभी समाप्त न होगा। लाखों लोगों के प्राशन करने पर भी वह ज्यों की त्यों भरी रहेगी। इसके संदर्भ मे उन्होंने इस प्रकार लिखा है . .

भावुकता अंगूर लता से, खींच कल्पना की हाला,
कवि साकी बनकर आया है, भरकर कविता का प्याला;
कभी न कण भर खाली होगा, लाख पिएँ दो लाख पिएँ!
पाठक गण हैं पीने वाले, पुस्तक मेरी मधुशाला। [१०]

आशावादी बच्चन जी ने कोमलकांत मधुकलश की रचनाओं मे जीवन से भरी मधुशाला की मधुबाला से मधुकलश में प्रेम विश्वास और दोस्ती का हाला तैयार किया है। बच्चन जी का व्यक्तितव उनके कृतित्व से सर्वथा भिन्न है। उनकी मौलिकता ही उनके काव्य का प्राण है। जीवन की मस्ती आवेग को उन्होंने अपने काव्य के रुप में यत्र-तत्र-सर्वत्र बिखेर दिया है। जिसकी सुरभि ने पाठक के तन मन से अशरीरि उल्लास को प्रवाहमान किया है।

उनके हालावाद ने छायावाद के काल्पनिक जगत की बखिया उधेड़कर रख दी थी। बच्चन जी ऐसे शक्तिशाली व्यक्तित्व के धनी थे, जिससे उन्होंने साधारण पाठकों को जीवन की वास्तविकता से परिचित करवाया। केवल प्रकृति की नकली प्रतिमाओं को मौलिक ही नहीं ठहराया अपितु वास्तविकता की अनमोल ताकत का भी परिचय करवाया।

पंत जी ने भी लिखा है, मधुकाव्य का शिल्पी अथवा शैलीकार नहीं है, वह तो आगे जाकर बनता है। प्रेरणा भावों तथा विचारों की भूल भूलैया के चक्कर खाती हुई छन्द के नूपुर सँवार कर कविता बनने का प्रयत्न करती है। इस युग की रचनाओं में कवि के प्राणों में इतना आन्दाधिक्य तथा भावना का मादक उद्वेलन मिलता है कि वह आकारण एवं अनायास निर्झर की तरह फूट कर गायन बन जाता है। [११]

छायावाद के युग में बच्चन जी जैसे कवि का उदय अपना विशेष स्थान तथा महत्व रखता है। छायावाद जो सदैव युधिष्ठिर के रथ की तरह धरती से उठ कर चला है, वास्तविकता से कोसों दूर ठोस भूमि पर पाँव गड़ा कर खड़े होने वाले इस कवि के आगमन के लिए जैसे अप्रत्यक्ष रुप से तैयारी कर रहा था। वह यथार्थवादी कामी कवि, नक्षत्र की तरह किसी नवीन कल्पना क्षितिज पर उदित न होकर, धरती के ही जीवन सरोवर के बृहद् रक्तपावक कमल की तरह अपलक, अम्लान भाव सौंदर्य में प्रस्फुटित हुआ।

बच्चनजी के पूर्ण काव्य में हमने उन्हें केवल जिदंगी को हाला के प्याले में ही नहीं पर अंधविश्वास, आशावाद के खोखले दावों को नकार कर वास्तविकता की प्राचीरों को भी हिलाते देखा है। उनको विरह अपनी प्रियतमा के लिए इतना बढ़ गया है कि वे प्रकृति से एकरुप होकर अपना दु:ख बाँटना चाहते हैं।

आज मुझसे बोल बादल, आज मुझ से बोल बादल !
तम-भरा तू, तम-भरा मैं, गम-भरा तू, गम-भरा मैं
द्वार उर के खोल, बादल ! आज मुझसे बोल बादल ! [१२]

दु:ख के प्रकटीकरण का यह अंदाज सर्वथा इस जगत के लिए नवीन था। इस नवीन निर्माण को जगत् से मिले गरज (जहर) को पचाना पड़ता है, हर नई सृष्टि का निर्माण पीड़ा से ही होता है पहले तो असह्य पीड़ा झेली पर बाद में आनंद ही आनंद पाया। अनेक हिन्दी के मर्मज्ञों ने व्यंग्योक्तियों के शूल झेले हैं। जयशंकर प्रसाद जी लिखते है . . .

वियोगी होगा पहला कवि, आह से निकला होगा गान,
आँखों से निकल कर बही होगी कविता अनजान। [१३]

काव्य की रचना केवल लेखनी (कलम) से ही नहीं की जाती अपितु वह अंर्तमन की कश्मकश और विचारों का शुद्ध नवनीत (मक्खन) है। जो काव्य रुप में बाहर भीतर एक समान प्रकट होता है। मधु को पान करने वालों को कभी कभी कटु, कषाय, तिक्त वस्तुओं का भी सेवन करना पड़ता हैं। श्यामा जी की मृत्यु ने उन्हें पूर्ण रुप से जीवन की पटरी से अलग कर दिया। उनका जीवन दु:ख अंधेरे गर्त में डूब गया। दु:ख ने उनके अंदर की गंगा को शब्द रुपी प्रवाह दिया जो जन मन के मानस पटल पर अंकित हो गई, बच्चन जी के दु:ख में उन्हें अपना विरह दिखने लगा, कवि के शब्दों से साधारण मानव की घनीभूत पीड़ा को वाणी मिली। निशा निमंत्रण की पंक्तियाँ यह दर्शाती है कि कवि की पीड़ा से देव भी कम्पित हो गए है -

है पावस की रात अँधेरी !
मैंने अपने हाथ चपल से होड़ कभी ली थी बादल से,
किन्तु गगन का गर्जन सुनकर आज धड़कती छाती मेरी!
जहाँ देव भी काँप उठे थे, क्यों लज्जित मानवता मेरी ! [१४]

व्यक्तिगत स्तर पर जहाँ कवि ने अपने प्रणय गीत गाएँ है, वहाँ वह अपने आपको लज्जित होता नही महसूस करता है। यह सबसे बड़ी विडंबना है कि हमारा निष्ठुर समाज इस मूल भावना की वेदना को नहीं समझता, यही कवि बच्चन जी के अंतरमन की व्यथा की कथा है। यही उनके व्यक्तित्व की खासियत है कि जो कुछ भी उन्होंने जीवन में पाया या खोया उन सभी को बेखटके अपने पाठकों से बाँटा।

बच्चन जी की भावनाएँ मुक्त अनुभूतियों से दृष्टिगत होती हैं। बच्चन जी ने अपने काव्य को पूर्ण रुप देने के लिए केवल शब्दरुपी कलम ही नहीं चलाई परंतु सुख-दु:ख की स्याही भरकर हर शब्द को भावनात्मकता के अथाह सागर की छॉती पर टाक दिया है, जिसकी हर लहर घहर घहर कर पाठकों के मन को तरंगित होने के लिए मजबूर करती है।

बच्चन जी का व्यक्तित्व एक गहरे सागर सा था, जिसे साधारण नजरों से समझना मुश्किल ही नही असंभव था। उनके लिए उनका जीवन एक रणभूमि सा था। जिसमें अपने व्यक्तित्व को कवित्व के रूप में जीवन की रणभूमि में सजा रहे थे। जो भी समाज देश, जाति, भाषा, धर्म के बारे में महसूस किया उसे कविता का स्वरूप दे दिया। वे जानते थे कि भारत के जन मानस को कर्म प्रधान लोगों की आवश्यकता है न कि वाचा (बकने) वाले लोग। उस काल में ही उन्होंने आज के जन जीवन की कल्पना कर रखी थी।

बच्चन जी के व्यक्तित्व को लेकर कई आलोचकों (बनारसी दास चतुर्वेदी) ने आलोचनाएँ की, कि वे कविताओं में केवल मधु परक कविताएँ ही लिखते हैं। (सरस्वती पत्रिका) पर ऐसा नहीं है। आलोचकों ने बच्चन जी के काव्य में निहित उदासी, नैराश्य, कुंठा पर तो लक्ष्य किया था, परंतु उसकी हर पंक्ति से ध्वनित होती हुई दुर्द्धर्ष जिजीविषा की ओर उनका ध्यान कम हो गया था। केवल जीते रहने को ही बच्चन जी जीवन की कृतार्थता नहीं मानते हैं। उन्होंने चिर गतिमय, स्फूर्तिमय और सृजनशील जीवन का स्वागत किया है। वे स्वयं भी अपनी जिंदगी में सदैव गतिशील तथा परिवर्तनशील रहे हैं। जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण कभी जड़ता का शिकार नहीं बन सका। बच्चन जी ने कभी मृत्यु का पूजन नहीं किया। वे जिंदगी में आशावाद को ही प्रधानता देते थे। वे जीवन की ही सदैव पूजा करते रहे। [१५]

बच्चन जी ने केवल प्रियतमा के लिए ही गीत नहीं गाए हैं वे केवल हालावादी कवि नहीं थे, अपितु उनके व्यक्तित्व का दूसरा हिस्सा था संघर्षशील कवि का जो किसी के आगे बिना हाथ पसारे, बिना किसी का साया ढूँढे, जीवन के आँधी तूफानों में से अपना स्वयं का रास्ता बनाते निकले थे। वे सदैव सत्य की शोध में अकेले जुटे रहते थे तथा जीवन और जगत का नया अर्थ पाने के लिए बेचैन रहते थे।

देशभक्ति की भावना भी उनके व्यक्तित्व को निखार देती है। देश को स्वतंत्र, संपन्न और सुखी देखकर कवि के स्मृतिपट पर उनके समय का संघर्षमय चित्र चलचित्र की भाँति उनके मानस पटल पर दिव्यित होने लगा। उन्होंने 'धार के इधर उधर' में लिखा है-

'हम संघर्ष के काल ही में जन्मे,
ऐसा ही था भाग्य हमारा।' [१६]

पर साथ में वह यह भी जानते थे, कि संघर्ष ही जीवन है। तभी तो उन्होंने अपनी आने वाली पीढ़ी को संघर्षों के लिए तैयार करते हुए लिखा था--------

"और हमारी संतानों के आगे भी संघर्ष खड़ा है,
नहीं भागता संघर्षों से इसीलिए इंसान बड़ा है।" [१७]

स्वावलंबन बच्चन जी के व्यक्तित्व और कृतित्व का मूलमंत्र है।

बच्चन जी के व्यक्तित्व को डॉ. जीवन प्रकाश जोशी जी ने उनके पत्रों के माध्यम से कुछ इस तरह व्यक्त किया है, (डॉ. जीवन प्रकाश जोशी: बच्चन:पत्रों में) बच्चन जी (१) व्यवहारिक (२) संवेदनशील (३) भावुक (४) ईमानदार और जागरूक (५) सद्भावना संपन्न (६) विनम्र (७) साहसी (८) प्रसिद्धि परामुखी (९) आत्म संयमी और आत्मविश्वासी (१०) नि:स्वार्थी (११) न्यायप्रिय व्यक्ति है। (१२) वे पंगु बनाने वाली शिक्षा को दोष देते हैं। (१३) बेलाग और बेबाक बात करना उनके स्वभाव धर्म का महत्वपूर्ण अंग है (१४) वे परस्पर व्यवहार में शालीनता तथा व्यक्ति के संतुलन को बहुत महत्व देते हैं (१५) आज की न्याय पद्धति पर उन्हें विश्वास नहीं था (१६) वे कर्म प्रिय थे। (१७) खुले दिमाग वाले आदर्श मित्र हैं। (१८) वे पुरस्कार के लोभी तथा आत्म प्रचारक नहीं है। (१९) वे पीड़ा से पीड़ित ही नहीं होते पर उसकी सहायता के लिए यथा संभव प्रयत्न भी करते हैं। (२०) वे ईर्ष्या द्वेष से दूर रहकर वे स्नेह संबंधों को बड़ा महत्व देते हैं। इन सभी गुणों को देखकर कहा जा सकता है कि है कि हरिवंशराय बच्चन का व्यक्तित्व आदर्शगुणों से परिपूर्ण हैं। [१८]

मैं जब जब उनके गुणों की ओर दृष्टिपात करती हूँ तो पाती हूँ कि, बच्चन जी का लेखन संवेदनशीलता, अद्‌भुत शक्ति, विनम्रता जैसे गुणों से मंडित है। बच्चन जी के व्यक्तित्व का गुणनफल पाठकों के मानस तत्व को अभिभूत कर देता है। उनका साधारण व्यक्तिव मेरे लिए असाधारणता का परिचायक है। उनका व्यक्तित्व उनके काव्य के हर शब्द में झलकता है। उनकी भाषा का प्रवाह और शैली की ऋजुता तो केवल आस्वाद करने की चीजें हैं। उनके काव्य में भाषा का प्रवाह तो अबाध गति से बहता रहता है। यह पता भी नही चल पाता कि वो कविता की धारा में बहकर कब अंत तक पहुँच गए।

बच्चन जी के काव्य में भारतीय संस्कृति के लोकमांगलिक स्वरूप की छवियाँ विद्यमान है। बच्चन जी भारतीय संस्कृति के प्रवक्ता कहे जा सकते हैं। उनके काव्य में नहीं उनके व्यक्तिगत जीवन में भी इसकी सहज परिणिती देखी जा सकती है। बच्चन जी ने अपनी कविताओं से कई हृदयों को नई धड़कने तथा प्राणों को नए स्वर दिए हैं। [१९] उन्होंने जनसामान्य की अभिलाषाओं को वाणी देकर उचित मानवीय संबंधों को गठित करने की माँग की है। उनके व्यक्तित्व का ही प्रभाव है कि वे राष्ट्रीय संघर्ष का शंखनाद कर युवकों को समय से मोर्चा लेने के लिए ललकारते हैं। जाति भाषा धर्म का बहिष्कार कर मानवता की ललकार लगाते हैं।

बच्चन जी के व्यक्तित्व को जानने के पूर्व हमें उनके काल, परिवेश का अध्ययन करना होगा। उनके व्यक्तित्व का आरंभ काल इस शताब्दी के चौथे दशक को माना जाता है। सन् १९३४-३५ से १९३८-३९ का वक्त बच्चन जी के आत्म परिचय का माना जाता है। यह समय भारतीय राजनीति मे दूसरा सत्याग्रह विफल हो चुका था और सामाजिक जीवन आर्थिक पराभव से आक्रांत था। इस अवसाद का प्रभाव समस्त जनता तथा साहित्य जगत पर भी पड़ा था। मुख्यतः इसका भागी था मध्यम वर्ग जो राजनीति समाज और साहित्य सभी क्षेत्रों में देश की चेतना का प्रतिनीधि था। बच्चन जी हिन्दी साहित्य में इसी मध्यम वर्ग के युवक समुदाय के प्रवक्ता रहे हैं। बच्चन जी के समकालीन युवक समुदाय ने जिन आशाओं और उमंगों को लेकर जीवन में प्रवेश किया था। उन्हें राजनीतिक पराजय और दिन ब दिन बढ़ती हुई बेकारी ने निर्दयता के साथ कुचल दिया था। जिस सत्याग्रह आंदोलन में बच्चन जी ने विश्व विद्यालय छोड़ा था, वह विफल हो चुका था, प्रतिभाशाली विद्यार्थी जीवन का असमय में समाप्त कर उनको एक स्कूल में अपने व्यक्तित्व और प्रतिभा के विपरीत एक बहुत ही साधारण सी नौकरी करनी पड़ी। इस भूमिका में बच्चन के व्यक्तित्व का जो चित्र हमारे सामने उपस्थित होता है वह कुछ इस प्रकार है। राजनीतिक और आर्थिक पराभव से अवसन्न

वातावरण में संघर्षरत मध्यमवर्ग का एक प्राणवान युवक जो समर्थ इच्छाशक्ति और उच्च आकांशाओं के साथ जीवन में प्रवेश करता है, परंतु प्रतिकूल परिस्थिति के आघात से सहसा गतिरूद्ध होकर एकांत विवशता का अनुभव बच्चन जी के व्यक्तित्व के मूल निर्णायक तत्व है। संघर्ष, जन्य अवसाद जो उसे वातावरण से प्राप्त होता है, मध्यमवर्ग की व्यक्तिवादी चेतना अर्थात समाज के व्यापक जीवन से विमुख होकर व्यक्तिगत जीवन के सुख, दु:ख पर अवधान समर्थ चेतना और इच्छाशक्ति, ये दोनों गुण संस्कारगत है और प्रतिकूल परिस्थितियों से संघर्ष लगा रहता है।

बच्चन जी के व्यक्तिव्य का दर्शन हिन्दी साहित्य जगत के आसमान पर हमें मधुकाव्य के अवतरण के बाद दिखाई पड़ता है। मधुशाला, मधुबाला और मधुकलश की अभिव्यक्ति को हालावाद के नाम से संबोधित किया गया। यह नाम अधिक विचार पूर्ण नहीं था परंतु विस्मरण की मनोवृत्ति को व्यक्त करने के लिए यह शब्द बुरा नहीं था। जैसा कि मैंने पहले ही लिखा है कि राजनैतिक, आर्थिक पराभव के कारण उस समय के वातावरण में गहन अवसाद छाया था। [२०] मैं समझती हूँ कि इसी कारण उसके परिणाम स्वरूप तत्कालीन समाज के मुख्यत: मध्यमवर्ग की चेतना एक विशेष मानसिक आध्यात्मिक क्लांति को दूर करने के लिए बच्चन जी ने हाला का आव्हान किया। यह हाला थी आध्यात्मिक विद्रोह से प्रेरित भोगवाद की। उमर खैय्याम से प्रेरणा लेकर बच्चन जी ने अपनी मधुशाला का निर्माण किया और उस युग के अवसाद ग्रस्त युवक समाज को वहाँ बैठाकर अपना गम गलत करने का निमंत्रण दिया और इसमें संदेह नहीं है, कि वह युवक समाज जो विश्वास का आधार खो बैठा था, बड़े उत्साह से उस ओर बढ़ा। इस हालावाद की व्याख्या बच्चन जी के अनुसार इस प्रकार की जा सकती है-यह समस्त विश्व किसी क्रूर नियति की इंगित से परिचालित चक्रवात घूम रहा है, वह भाग्य चक्र के आधीन सर्वथा विवश और अपनी विवशता में एकांत करूण है। उसकी सबसे बड़ी विवशता है अस्थायित्व। उसके सभी नाम रूपात्मक क्षण भंगुर हैं, इस अस्थिरता पर विजय प्राप्त करने के लिए मानव के सभी प्रयत्न सर्वथा निष्फल हुए हैं। अतएव पाप और पुण्य पर आश्रित जीवन के सभी मूल्य जीवन की क्षण भंगुरता में एकांत का निस्सार है। उनके विधान के कारण मनुष्य और भी क्लांत बन गया ईश्वर और धर्म की कल्पना मनुष्य के मन को रूढ़िजाल में जकड़ कर निस्तेज बना दिया है। नियति से जितने क्षण हमें मिले है, उनका ही केवल तत्कालिक मूल्य है, अतएव उनकी सार्थकता भोग में ही है। इस प्रकार बच्चन जी की धारणा ऐसे भोगवाद का प्रतीक है, जिसका मूल आधार है बच्चन जी के व्यक्तित्व का अध्यात्मिक विद्रोह। इसमें अविश्वास की सक्रिय शक्ति है, जड़वाद की निष्क्रीयता नहीं। भारतीय चार्वाक दर्शन की अपेक्षा यह उमर खैय्याम के रंगीन क्षणवाद के अधिक निकट है। परिस्थितियों से परेशान मध्यम वर्ग के युवक कवि बच्चन ने अपने समकालीन समाज को यही तीखी

खुराक देकर उसमें उत्तेजना पैदा करने का प्रयत्न किया था। ऐसे महान व्यक्तित्व वाले बच्चन जी सर्वथा अपने समय के नवयुवकों को अपने व्यक्तित्व से प्रभावित करने लगे थे।

मैं यह भी कहना चाहूँगी कि बच्चन जी के लिए किसी स्वानुभूत जीवन दर्शन के प्रतिपादन करने का समय अभी नहीं आया था। उसमें अनुभूति और कल्पना का रंगीन मिश्रण था। परंतु कुछ समय में ही बच्चन जी के जीवन में ऐसी घटना घटी जिसने उन्हें जीवन के आमने-सामने लाकर खड़ा कर दिया था। वे अपनी विषम परिस्थिति से संघर्ष कर ही रहे थे कि उनकी पत्नी श्यामा देवी क्षय रोग से ग्रस्त हो गई। मध्यम वर्ग के साधारण आर्थिक परिस्थिति के व्यक्ति के लिए पत्नी का क्षयग्रस्त हो जाना बहुत ही विकट आपत्ति है इसकी कल्पना केवल भुक्त भोगी ही कर सकता है। मैं यहाँ इस बात पर ध्यान दिलाना चाहूँगी कि इस परिस्थिति ने उनके व्यक्तिव को झकझोर कर रख दिया था। बच्चन जी को घोर मानसिक यातना का अनुभव पत्नी की मृत्यु के बाद हुआ। जिससे वे बिखर गए। इसका संकेत उन्होंने स्वयं अपने काव्यों में किया है 'एकांत संगीत' और 'आकुल अंतर' इसका प्रमाण हैं।

मृत्यु के इस साहचर्य और साक्षात्कार ने बच्चन जी की चेतना को बाहर से खींच कर एकांत संगीत का निर्माता बनाकर अंतर्मुखी बना दिया। वह समाज राजनीति आदि से परामुख होकर जीवन के मौलिक सत्यों के सामने खड़े हो गये। जीवन का अभिप्राय, जीवन का सारतत्व, जीवन और जगत की प्रेरक अथवा संचालक शक्ति और मानव के प्रति उनका और मानवता का दृष्टिकोण, मृत्यु जीवन के मूल्य, पाप-पुण्य आदि के प्रश्न, जिनके विषय में अब तक उन्होंने जो रंगीन कल्पनाएँ की थीं, प्रत्यक्ष रूप से उनके व्यक्तित्व को झकझोर कर चली गईं। इस प्रकार की परिस्थिति का उनके मन पर बहुत विषम प्रभाव पड़ा था।

साधारण जन तो प्रायः असहाय होकर भगवान की शरण में जाकर अपने कष्टों को भूलने का प्रयत्न करता है, परंतु प्राणवान व्यक्ति की प्रतिक्रिया भिन्न होती है। यदि वह विश्वासी है तो अपने जीवनगत विषमताओं को उस मृत्यु भेदी परम् शक्ति की समरसता में निमग्न कर शांति लाभ करता है, और यदि उसके संस्करण में विश्वास की प्रवृत्ति नहीं है तो ऐसी दशा में उसकी चेतना पूरे बल से आस्तिकता के प्रति विद्रोह कर उठती है। बच्चन जी के संस्कार और परिस्थिति दोनों में ही अविश्वास का प्राबल्य था, अतएव इस आधिदैविक (पत्नी की मृत्यु) संकट ने एक ओर जहाँ उनके विषाद को और भी गहरा किया वहीं उनके व्यक्तित्व ने उनके अध्यात्मिक विद्रोह को और भी प्रबलता दी। 'निशा निमंत्रण' और 'एकांत संगीत' का रचना काल बच्चन जी के लिए आत्म साक्षात्कार का समय था। इन कविता संग्रहों ने भाग्य चक्र के नीचे कुचले हुए मानव के चमत्कार और ललकार दोनों के मिले-जुले स्वर सुनाई देते हैं।

बच्चन जी के व्यक्तित्व की व्याख्या करना सूर्य को दीपक दिखाने जैसा है। मैं तो बच्चन जी के काव्यों में कवि बच्चन जी को परखने का प्रयत्न कर रही हूँ। जहाँ संवेदना मानव मन को द्रवित ही नहीं विकल कर डालने का सामर्थ्य रखती है।

उनका काव्य निराशाग्रस्त मानव की आशा को राह दिखलाता है

जैसे कि आरती और अंगारे में बच्चन जी ने लिखा है -

चली सदा से आई है मानव की गर्वीली छाती,
तरसा करती जिसको पाने को देवों की बंध्या छाती,
लेती है अवतार अमरता, जिसके अंदर से धरती पर,
एक परी ऐसी अपनाऊँ, भूमि लगे स्वर्गों से प्यारी। [२१]

बच्चन जी कर्मप्रधान कवि थे, उनका मानना था कि कर्म करने वालों का साथ सभी देते है वाचाल लोग सदा पीछे रह जाते है। जो भाग्य के भरोसे रहते हैं वे कभी तरक्की नहीं कर पाते हैं। यह बात तो हमारे ऋषी मुनी भी कह गए हैं। कर्मण्ये वा धिक्कारस्ते माँ फलेषु कदाचन् । बच्चन जी ने भी इसे इन शब्दों में समझाया है अपने काव्य संग्रह चार खेमें चौंसठ खूँटे में . .

भाग्य लेटे का सदा लेट रहा है,
जो खड़ा है भाग्य उसका उठ खड़ा है,
चल पड़ा जो भाग्य उसका चल पड़ा है,
मान तू ऋषि वचन यह। [२२]

उन्होंने झूम- झूम कर सुख और दुःख में हमेशा मानव की मानवीयता का गान गाया है -

कवि श्री बच्चन जी ने अपने काव्य से यह अधिकार पा लिया कि स्वान्तः सुखाय सोचकर भी वे समाज की साधना में भी तल्लीन है वे सदैव सबके मंगल की कामना करते रहे। मानव में यदि मानवोचित गुण की कमी है तो वह मानव कहलाने का हकदार नहीं है। यदि वह सुख को गले लगाता है और दुःख से कतराता है तो वह मानव है ही नहीं। उनके अनुसार सुख और दुःख मानव जीवन के दो पलड़े है जो नाप

तौल कर बारी बारी से मानव के भाग्य में उसके कर्मानुसार आते हैं । वे आकुल अंतर में लिखते हैं . . . .

यह स्वस्थ आग, यह स्वस्थ जलन,
जीवन में सबको प्यारी हो,
इसमें जल निर्मल होने का,
मानव-मानव अधिकारी हो ! [२३]

बच्चन जी की आरंभिक कविताएँ सर्वे भवन्तु सुखिनः का उपदेश भी देती थीं। जो कि मानवीयता का प्रमुख आधार स्तंभ है। बच्चन जी के काव्य का विषय मनुष्य की मानवीय संवेदनाओं का भी प्रतीक बनकर दिखाई पड़ता है। उन्होंने लिखा है मैंने मानव के हृदय को देखा है, मनुष्य के दुःख, शोक, विषाद, हर्ष, विर्मश, संर्घष उसके अंतर का प्राणों का मंथन सब कुछ महसूस किया है। वे कहते हैं कवि के मंच का अभिनेता केवल इंसान है, इंसानियत उसकी नियति है। बच्चन जी ने अपनी उन कविताओं से अधिक प्रेम किया जिनमें अधिक मानव हित और साधना हो, और सभी मनुष्यों के लिए आनंद तृप्ति का सुख हो।

उनकी नजर में पूर्ण काव्य वह है जो निम्न वर्ग को भी तृप्ति दे सकने वाला हो। उनकी संवेदना सबके प्रति एक सी है। आर्थिक कष्टों को झेलकर भी उन्होंने नैतिक मूल्यों के मान सम्मान को बनाए रखने में कोई भी लापरवाही नही बरती है।

उनका व्यक्तित्व ही कुछ ऐसा था वे कहते हैं कि काव्य वही है जो मनुष्य की महानता की नींव पर अपनी मानवीय विशिष्टताएं लिए हुए जो मानवता के गुणों से परिपूर्ण हो वही शुद्धता पवित्रता से ओत प्रोत हो। उसकी इच्छा उसे पग पग पर ठगती है, पर वो हर संभव प्रयास कर अपने को उबारनें की कोशिश में लगा हुआ है, इसकी एक झलक मिलन यामिनी की इन पंक्तियों में देखने को मिलती है . . . . . .

मनुष्य विश्व प्रेम में पगा हुआ,
मनुष्य आत्म युद्ध में लगा हुआ,
हरेक प्रण प्रयास में ठगा हुआ,
मनुष्य हर स्वरुप में पवित्र है। [२४]

वे इतना कहकर रुके नहीं उनके व्यक्तित्व में आस की ताकत कुछ इस प्रकार देखने को मिलती है। हमें अपने आप पर विश्वास रखना चाहिए, अगर प्रण कर लें तो कुछ भी असंभव नही है -

लहरों से डरकर नौका पार नही होती,
कोशिश करने वालों की हार नही होती।
असफलता एक चुनौती है स्वीकार करो
क्या कमी रह गई सोचो और विचार करो,
कुछ किए बिना यूँ ही जय जय कार नहीं होती
कोशिश करने वालों की हार नहीं होती। [२५]

वे आगे यह भी सोचते हैं कि इन्सानियत की सीमा नन्हें से दिल में न होकर संपूर्ण वसुधा में प्रसृत है। कवि बच्चन ने इन्सान की इन्सानियत को जीवित रखने क लिए ही अपने समय में फैली सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक अत्याचार, अनाचार, अन्याय तथा भ्रष्टाचार का डटकर मुकाबला किया है। कवि की युग चेतना के स्वर बंगला का काल, खादी के फूल, सूत की माला, बुद्ध और नाचघर इत्यादि कविताओं में विशेष रुप से लिखे गए हैं।

बच्चन जी का मेल काव्य प्रणय गान भी रहा है -

छायावाद के बिरवें के नीचे बच्चन जी का बचपन व्यतीत हुआ था, आशा का भ्रमिक जाल सर्वत्र बिखरा था। उनकी पारिवारिक तथा सामाजिक परिस्थितियाँ ऐसी थीं कि प्रेम भावना के प्रति उनका आकर्षण बढ़ गया था। यौवनावस्था में ही उनकी हृदयस्थली में प्रणय की लालसा उत्पन्न हो गई। यही प्रणय का आकर्षण कवि के काव्य रचना का मूल स्त्रोत बना। अपने प्रेम को उन्होंने कुछ इस प्रकार प्रकटित किया है -

प्यार किसी को करना, लेकिन कहकर उसे बताना क्या ?
प्रेम हार पहना, लेकिन प्रेम पाश फैलाना क्या ?
देकर हृदय पाने की, आशा व्यर्थ लगाना क्या ? [२६]

प्रेम प्रणय के लिए प्रेमी में हृदय की मार्मिक भावना इस प्रकार व्यक्त की है। उनका मानना है कि प्रेम एक अनदेखा आनंद है जिसे केवल महसूस किया जा सकता है प्रत्यक्ष न दिखकर यह मन में फलता-फूलता है प्रेम वासना नहीं त्याग का स्वरुप है, समर्पण का मूल है, जो ब्रम्हानंद सहोदर की अनुभूति करवाता है।

उन्होंने यौवनावस्था के प्रणय काल में प्रियतम और प्रिया को लेकर अद्‌भुत रचनाएँ रची हैं। जैसे मेरा धर्म , तुम से, विरह स्मृति, दुखिया का प्यार, कलियों से, विरह विषाद, मूक प्रेम, उपहार, आत्म संदेह, प्रेम का आरंभ आदि कविताएँ प्रणय से संबंधित है, यहाँ कवि द्वारा लौकिक प्रणय का महत्व प्रदर्शित किया गया है, जो कि सृष्टि का मुख्य आधार तथा सत्य है।

बच्चन जी कभी भी अपने प्रेम को प्रकट करने में लज्जित नहीं हुए। अपने प्रणय के दु:ख, एकाकीपन को, अपनी विरहाग्नि का शमन अपने काव्यास्त्र से किया। उनका कवित्व, उनका व्यक्तित्व अपने प्राण प्रिया से बिछड़ कर छटपटा गया। जो विरहाग्नि के काव्य रुपी मोती शब्द रुप में लिखे गए, वे हिन्दी काव्य जगत के अनमोल हीरे बन गए। निष्ठुर समाज इस भाव को समझ पाने में असमर्थ था।

बच्चन युग के कवि व्यक्तिगत प्रणय भाव को इंसानियत की लय के साथ जोड़कर और उदात्त बनाने का प्रयास करतें हैं। यही नहीं इस काल के रचनाकारों ने मनुष्य में भगवान का स्वरुप देखने का स्वर प्रमुख रुप से मुखरित हुआ है।

गीति काव्य का प्रधान्य भी यत्र-तत्र परिलक्षित होता है -

गीति काव्य की नींव में व्यक्तिगत अनुभवों के स्वर हैं। विषय अपना हो या परायों का रचनाकार सदैव उसे अपनत्व के साथ लिखता है। सदियों से गीति काव्य की गंगा हिन्दी साहित्य जगत में अविरल तथा अबाध गति से बह रही है। छायावादी युग में गीति काव्य एक नन्हें से पौधे के रुप में था, उसका विकास छायावाद के चारों आधारस्तंभों ने किया (जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी, निराला, सुमित्रानंदन पंत, तथा महादेवी वर्मा)। इस काव्य का जो संगोपन हुआ था उसका प्रभाव कहीं कहीं बच्चन जी के काव्य में भी दिखाई पड़ता है। गीति काव्य बच्चन जी के काल में ही अधिक पल्लवित हुआ।

इस गीति काव्य में भले ही बच्चन जी की पृष्ठ भूमि व्यक्तिगत हो पर जब वे अपनी अनुभूति के समाज के सामने काव्य रुप में अभिव्यक्त कर देते हैं तब उनके भाव पाठकों के भाव सभी एक रस हो जाते हैं। पाठकों को उसमें अपने सुख दु:ख प्रतिबिंबित होते जान पड़ते हैं। बच्चन जी कहते हैं - कवि आसमान से नहीं टपकता है मैं उसी समाज में पैदा हुआ, बूढ़ा हुआ उसी से सहयोग विद्रोह करता रहा, उसी से लड़ा झगड़ा जिसमें मेरे पाठक पैदा हुए। बूढ़े खपे, मरे। यदि मैं बहुतों के लिए प्रतीक,

माध्यम बन गया तो मैं अपना विशेष क्या रहा? मेरी विशेषता तो औरों की सामान्यता नापने का उपकरण मात्र थी। [२७]

राष्ट्रीयता के भाव के भी दर्शन बच्चन जी के काव्य में दर्शित होते हैं -

बच्चन जी का बचपन स्वतंत्रता के लिए जीने मरने वाले क्रांतिकारी युग में इलाहाबाद में हुआ था। यह शहर क्रांतिवीरों के लिए जाना जाता था। तो फिर बच्चन जी की कविता कैसे इससे अछूती रह सकती थी। जवाहर लाल नेहरु की जन्म व कर्म भूमि यही थी। अपने चाचाजी से जलियाँवाला बाग हत्याकांड भी जाना था। यह सब बातें सुनकर बच्चन का बालक मन सोचने पर विवश हो गया कि क्या सरकार को इतना अधिकार हे कि वो जब चाहे, जिस पर चाहे गोली चला सकती है। उसी समय उनके मन में देश की स्वतंत्रता का बीज उनके मन में रोपित हो गया।अपने देश प्रेम को उन्होंने झंडा कविता में लहरा कर दिखलाया है . . .

अहे ! नही फहराता झंडा वायु वेग से चंचल हो,
हमें बुलाती है माँ भारत हिला कर अंचल को। [२८]

बच्चन जी का काव्य शीशे सा पारदर्शी है जिसमें पार्थक्य की कोई रेखा नही है। बच्चन जी का काव्य एक पूर्ण काव्य कहा जा सकता है। अस्तु मेरा यह कहने को जी चाहता है परम् श्रद्धेय बच्चन जी के लिए

अरे बच्चन आप युग के सागर समान,
मैं उसमें की लहर अनजान।
तुम युग के वायु से वेगवान,
मैं उसका झोंका अनजान।

(बृजबाला सूरी)

संदर्भिका (अध्याय १) -

अ) आधार स्त्रोत -

[१], [९] बच्चन; मधुशाला; परिचय कविता, कविता १
[२] मुसोलिनी के भाषण का संवाद;२१ जनवरी १९२१
[३],[४], [२७] बच्चन; क्या भूलूँ क्या याद करुं ;आत्मकथा
[५] जीवन प्रकाश जोशी; बच्चन व्यक्तित्व और कृतित्व
[६], [२४] बच्चन; मिलन यामिनी; कविता १०
[७] बच्चन; एकान्त संगीत; कविता ७३
[८], [११], [१९] सं. बॉके बिहारी भटनागर; बच्चन व्यक्ति तथा कवि; सुमित्रानन्द पंत के लेख से उद्धृत
[१०] बच्चन; मधुशाला; कविता ४
[१२],[१४] बच्चन; निशा निमंत्रण; कविता ४२, ४१
[१३] जयशंकर प्रसाद ; कविता- आंसू
[१५] बनारसी दास चतुर्वेदी ; सरस्वती पत्रिका - लेख
[१६], [१७], [२५], [२६] बच्चन; बच्चन की प्रतिनिधि कविताएँ
[१८] बॉके बिहारी भटनागर: बच्चन व्यक्ति तथा कवि; बच्चनजी के काव्य में भारतीय संस्कृति के लोक मांगलिक स्वरुप की छवियाँ
[२०] दीनानाथ शरण; लोकप्रिय कवि बच्चन; लेख
[२१] बच्चन; आरती और अंगारे; गीत ४६
[२२] बच्चन; चार खेमे चौंसठ खूंटे
[२३] बच्चन; आकुल अंतर ; कविता ५७
[२८] बच्चन; कविता - झंडा

ब) अन्य स्त्रोत -

- बच्चन; मधुशाला; नया संस्करण २००८; मधुशाला के गौरवशाली ७५ साल
- बच्चन; प्रवास की डायरी
- डा. सुधाबहन पटेल; जीवन और साहित्य
- डा. दशरथ राज ; बच्चन निकष पर
- नवनीत पत्रिका २००९
- साहित्य संदेश बच्चन विशेषांक

अध्याय - दो

हालावाद

अध्याय - दो

हालावाद

बच्चन जी किसी वाद - विशेष के कवि नहीं हैं। उनका कहना था कि मैंने वादों का प्रभाव नहीं ग्रहण किया। ग्रहण किया जीवनानुभूतियों से । यदि मेरी कृतियों में उनका प्रभाव आप देखते हैं तो आप सिद्ध करें। क्योंकि प्रभाव अनजाने में ही आता है। बच्चनजी वस्तुतः अपने भीतरी सत्य, अपनी अनुभूति और अपनी घुटन के कवि हैं। उस समय समाज की परिस्थितियाँ ही ऐसी थी कि उनकी भावनाएँ उनके मर्म की पीड़ा बन गई। वे स्वच्छन्द रुप से सौन्दर्य, मस्ती और प्रेम के गीत गाने लगे। उनमें कहीं भी न तो आदर्श का छल था और न ही दीनता और हीनता थी। लेकिन देश की पराधीनता, सामाजिक रुढ़ियों और आर्थिक रिक्तता के परिवेश ने उन्हें अंतर्मुखी बना दिया। यद्यपि आलोचकों ने इस काल के कवियों में नियतिवाद, निराशावाद, क्षणभंगुरतावाद, भोगवाद आदि की प्रधानता को खोज निकाला तथापि इन कवियों ने भावनाओं के माध्यम से पूर्ण जीवन को उल्लासमय बनाने का प्रयास किया। इनका यही उल्लास और आनंद का आवेग हालावाद कहलाया।

बच्चन जी का विकास छायावाद और प्रगतिवाद के संधिकाल में हुआ, लेकिन उनका कवि आदर्श और यथार्थ के पुलिनों पर न रुक कर "तीर पर कैसे रूकूँ मैं आज लहरों में निमंत्रण" को चरितार्थ करता हुआ अपनी आत्मनिष्ठता की भावना के उत्कर्ष पर चढ़कर जीवन की संघर्षमयी तरंगो से स्वयं को रगड़ता - घिसता हुआ अपने मन के आंतरिक सौंदर्य के आनंद - इंगित पर लक्ष्यविहीन लक्ष्य की ओर बढ़ता ही गया।

इस युग की रचनाओं में कवि के प्राणों में इतनी ज्यादा आनंद की मात्रा तथा भावना का मदहोश करने वाला भाव मिलता है कि वह बिना कारण एवं अनायास निर्मल झरने की भाँति मन के भावों में नीर की धारा बनकर बहने लगता है। छायावाद के युग में बच्चन जैसे कवियों का हृदय विशिष्ट स्थान रखता है, जो स्वयं में महत्वपूर्ण है। छायावाद अपनी उदाग्र कर बाहों में चांद को पल्लिवत पोषित कर ही रहा था पर वह धरती पर उतर कर उसकी वास्तविकता एवं मूर्तिमन्त का स्पर्श भी संग्रह करना चाहता था। आदर्शवादिता तथा वास्तविकता के ऐसे संधि युग में बच्चन जी कल्पना की आकाशीय मृणाल तारों की हृदयतंत्री का मोह छोड़कर, जीवन साँसो की वीणा में झंकार भर कर जिस मोहक स्वर में गाने लगे, उससे जीवन की धरती तो रोम हर्ष से भर ही उठी छायावादी कवियों के कानों को भी उसकी छायावादी ध्वनि आकर्षित किये बिना नहीं रही।

छायावाद के प्रेरणा - पंखों तथा प्रगतिवाद के भारी ठोस चरणों पर हिन्दी कविता के अनंत साम्राज्य में बच्चन अपने लिए मानव भावनाओं का अग्निपथ चुनकर मिलने बिछ़ड़ने की मधुर तीव्र आग से तपते अकेले पक्षी की भाँति जीवन के पंख सुलझाते हुए, सुख - दु:ख की धूप - छाँव से भरे हृदय के उन्मुक्त आकाश में उड़ते और गाते रहे।

व्यक्ति का स्वत: के बारे में किया गया आकलन सर्वाधिक रुप सत्य ही होता है, इसलिए बच्चन जी ने स्वत: के बारे में ठीक ही कहा है- मेरा हृदय सदैव से भावनाद्रवित रहा है । अपने और दूसरों के भी सुख - दु:ख, हर्ष - विषाद को मैने़ अपने हृदय के अन्दर देखा और लिखा है। दूसरों के हृदय को देखने का मेरे पास एक ही साधन है और वह मेरा अपना हृदय। मुझे यह जानकर संतोष होता है कि मैं भावनाओं का कवि हूँ। जैसा मैं अनुभव करता हूँ, वैसा दूसरे भी करते होंगे। यही बल सदा मुझमें रहा है। मैं अपनी बहुत सी रचनाओं को देखने का प्रयत्न करता हूँ, तो मुझे लगता है कि उनका जन्म मेरे अनुभवों से हुआ है। मैंने अनुभवों की परिधि व्यापक रखी है। मैंने उनके अन्दर कल्पना को भी जगह दी है। अनुभवों की प्रक्रिया के समान कल्पना की प्रतिक्रिया भी असहाय होती है। अभिव्यक्ति में सुख का अनुभव होता है तो एक तरह की राहत मिलती है। अनुभवों में डूब और अभिव्यक्ति के माध्यम पर यथा संभव अधिकार प्राप्त करके मैंने अपने आपको प्रेरणा पर छोड़ दिया है।[२९]

छायावादी कवियों को कल्पना प्रधान कहा जा सकता है। बच्चन जी ने इसमें एक कड़ी और जोड़ते हुए अपने कविता लेखन को अनुभूति प्रधान किया। उनकी आरम्भिक रचनाओं पर छायावादी शैली और भाषा का प्रभाव बहुत अधिक है। भाव कवि के स्वत: के हैं और सच्चे हैं, पर बच्चन जी का व्यक्तित्व उनमें इतना अधिक झलक नहीं भरता कि उन्हें बच्चन जी के स्वाभाविक कृतित्व में प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सके। वह रचनाएँ छायावाद के बरगद की घनी छाया में अंकुरित हुई है, इसलिए वह स्वतंत्र व्यक्तित्व की क्षमता से वंचित है। बच्चन जी का व्यक्तित्व भी क्षमता से वंचित है। बच्चन जी शुरुवात में छायावाद के शब्द संगीत तथा द्विवेदी युगीन काव्यात्मकता के सुधरेपन से प्रभावित अवश्य होते हैं और बंगाल का काल तथा कुछ अन्य मुक्त छंद की रचनाओं में उनके भीतर प्रगतिवाद की बर्हिमुख झिल्ली की झनकार भी यहाँ-वहाँ मिलती है, पर उनका कवि मुख्यत: गायक ही की मादकता लेकर प्रकट हुआ है और उसने आँगन के पेड़ पर अधिकार बना कर अपने सबल कर्कश स्वरों से इस संक्रान्ति युग में लोगों को जगाने के बदले उनके हृदय में कोमल नीड़ बना कर उनके सुख - दु:ख को सहलाना ही श्रेयस्कर समझा। वह देवदूत या जननायक न बन कर मानव

प्राणों के रंगसखा के रुप में अवतरित हुआ है और भारी भरकम मानव वीणा की जटिल सूक्ष्म झंकारों के बदले राग की हरी - भरी बाँसुरी से प्रणय सुरों से मदमस्त स्वरों के फनों की गरल - मधुर फुत्कार छोड़ कर लोगों के कामना दग्ध रहस्य को आनंद - दंशत से तृप्त कर आत्म विस्मृत करता रहा है।

बच्चन की भाषा में परम्परा का सौष्ठव है, वह साहित्यिक होते हुए भी बोलचाल के निकटस्थ है। अपने अनुभव के इस सोपान पर खड़े होकर कवि ने जैसे अपनी व्यथा के बहाने हृदय की अटलस्पर्शी व्यथा तथा युग के शंका-विषाद और निराशा के सागर को मथ कर उसके गरल को अमृत में बदल डाला। बच्चन का संगीत एक अपूर्ण झंकार बन कर हृदय में बैठ जाता है और विभिन्न अनुभूतियों के झरोखों से झाँककर विभिन्न संवेदनाओं में फिर जीवित हो उठता है।

जीवन में घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं तथा दु:ख ने कवि को गायक बना दिया। वेदना काव्य में साधारण भाव और उससे भी साधारण पद गीत बन गये। सरल पंक्तियाँ और सहज उक्तियाँ, जो स्वत: ही जैसे दु:ख में गल ठल कर संगीत-मुखर बन गई है- कहते है तारे गाते है, साथी सो न कर कुछ बात, कोई गाता मैं सो जाता, कोई नही, कोई नही, तब रोक न पाया मैं आँसू आदि ऐसे अनेक चरण या वाक्य खण्ड हैं, जो काव्य की पंखड़ियों से पराग की तरह ठन कर भावों के गंध पंख फड़का व्यथा सजल गीत बन कर हृदय में समा जाते हैं।

बच्चन जी की कविता छायावादी कविता की भाषा की तरह अलंकृत, सौंदर्य पूर्ण, कल्पना पंखी एवं ध्वनि विलक्षण नहीं है, अपितु वह साहित्यिक होते हुए भी सहज रसभीनी, गति द्रवित, प्रेरणा स्पर्शी, अर्थ कल्पित, व्यथामथित, आनंद गंधी भाषा है। बच्चन स्वभावत: इस पीढ़ी के सबसे अधिक लोकप्रिय कवि हैं। खड़ी बोली को लोक बोध के स्तर पर जन साधारण के हृदय में बिठाने में इतनी बड़ी सफलता काव्य जगत में शायद उन्हीं को मिली है। यह अपने में महान उपलब्धि है।

उत्तर छायावाद

हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग में छायावाद के समानान्तर एक दूसरी काव्य धारा प्रवाहित होती है। इसमें छायावाद की ही भाँति हिंदी स्वच्छंदता वाद का ही प्रकाश है तथापि वह अपने रंग, प्रभाव और उपलब्धि में छायावाद से स्पष्ट रुप से भिन्न है।

साहित्यकारों ने इस विधा को अनेक नाम दिये जिनमें व्यक्तिपरक स्वच्छंदतावाद, पलायनवाद, हृदयवाद, हालावाद, हालावाद प्रेम और मस्ती का काव्य, मस्ती और यौवन का काव्य उत्तर छायावाद का छयावादोत्तर काव्य। यह बड़े से लघु के प्रति प्रतिक्रिया है और इसका प्रार्दुभाव बाहरी वातारवण से नहीं हुआ , परंतु कवियों के व्यक्तित्व के मतमतैक्य से हुआ। छायावादोत्तर काल में जो काव्य रचना बच्चन, नरेन्द्र शर्मा और अंचल ने की उसमें और छायावादी काव्य में भौतिक अन्तर है। उत्तर छायावादियों ने कुछ बातों को सिरे से नकार दिया, जिनमें दार्शनिकता, अध्यात्मिकता एवं रहस्यात्मकता है। वे कर्मठ देशभक्त भी है, लेकिन धार्मिक पौराणिक का सहारा लेकर उन्माद नहीं उत्पन्न करते। इस युग के लोग वास्तविक रुप से जमीनी सच्चाई से जुड़ा महसूस करते हैं। धरती का गान करते हैं, और इसलिए उन्हें भूख का एहसास है और रोटी की कीमत भी। इस वर्ग के लोगों के दु:खी यंत्रणाओं और अभावों को स्वयं भोगा है। उन्हें न तो कल्पना के पर लग सकते हैं और न ही कहीं जा सकते है, बल्कि वे धरती के वास्तविक सुख को भोगते हुए जीते है।

कवि द्वारा स्वत: की गई अनुभूति, उनकी भावनाएँ उनके हृदय की पीड़ा बन गयी। वे स्वतंत्र रुप से सौन्दर्य, मस्ती और प्रेम के गीत गाने लगे। उनमें दीनता-हीनता के लक्षण नहीं थे और उनका आदर्श किसी को छलता भी नहीं था। देश की परतंत्रता-सामाजिक विद्रुपताएँ जिनमें रोटी-बेटी का सम्बन्ध महत्वपूर्ण था ऐसी परिस्थिति में जागृत युवा लकीर का फकीर नहीं बना रह सकता था। उनके अन्दर समाहित व्यक्तित्व के गुण जिनमें यौवन का उल्लास आज की कलंक का मार्गनिर्देशक या दिशा निर्देश कराने वाला कोई नही था, इसलिए वे अंतर्मुखी हो गये।

उत्तर छायावाद का प्रादुर्भाव उत्तर छायावादी काव्य को समझना और उसे यथोचित स्वरुप प्रदान करना था। इस काल की प्रमुख प्रवृत्तियों को चिन्तित करना ताकि नियतिवाद, निराशावाद, क्षणवाद, भोगवाद आदि की प्रमुखता को खोज निकाला जाय।

साहित्यिक प्रवृत्तियाँ

उत्तर छायावाद को समझने से पूर्व आवश्यक है कि उस काल की साहित्यिक प्रवृत्तियों का सिंहानुवलोकन कर लिया जाये, जो निम्नलिखित है :-

१. जड़ता एवं सामाजिक विद्रुपता के विरुध्द मनुष्य की वास्तविक शक्तियों का उद्‌गान
२. मनुष्य के मानवोचित गुणों से परिचय
३. मनुष्य के जीवन का मुख्य राग का प्रणय ज्ञान
४. राष्ट्रीय मूल्यों एवं भावनाओं का विकास
५. गीतात्मक काव्य की प्रधानता

जड़ता एवं सामाजिक विद्रुपता के विरुध्द मनुष्य की वास्तविक शक्तियों का उद्‌गान

जड़ता मानव के अन्दर निहित उन सभी क्षेत्रीय परिस्थितियों से है, जो मानव को कुंठित, हताश बलहीन एवं शारीरिक रुप से मृतप्राय बना देती है। ऐसी परिस्थिति में मानव का जीवन समाज की मुख्य धारा से कट जाता है। समाजिक, आर्थिक, नैतिक परिस्थितियाँ व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में अवरोध उत्पन्न करती हैं। ऐसी स्थिति में वह अस्तित्वहीन बनने की ओर अग्रसर होता जाता है। छायावादोत्तर कवि मध्यम वर्ग से सम्बन्धित है। उनका विकास इसी परिस्थितियों में मध्यम वर्ग के अभाव में हुआ है। इस युग के कवि की प्रतिभा अन्तर्मुखी हो गयी। इनके जीवन में कठिन परिस्थितियाँ अवश्य आयीं, पर अपने दृढ़ निश्चय के बलबूते ये अपने जीवन के संकीर्णतम् से संकीर्णतम् दौर पर विजय प्राप्त कर सके। इस युग में कवि के मन में निराशा - विषाद और संशय का अन्धकार घनीभूत होकर उसे एकाकी क्रौंच की तरह गीत-क्रंदन को विवश करता है। वह कहता है कि ------

कर लेता जब तक नहीं प्राप्त,
जग - जीवन का कुछ नया अर्थ,
जग- जीवन का कुछ नया ज्ञान।
मैं जीवन की शंका महान।
मैं खोज रहा हूँ अपना पथ,
अपनी शंका का समाधान। [३०]

छायावादोत्तर कवियों ने सामाजिक रुढ़ियों एवं निरर्थक प्रथाओं को भी नकार दिया। इसकी जगह जीवन में बंधनों को स्वीकार किया। इस काल की प्रारंभिक रचनाओं में अतीत की प्रतिध्वनियाँ, मरघट आदि में व्यक्तिगत, सामाजिक, प्राकृतिक एवं युगीन सभी प्रकार के स्वर हैं। आशा - निराशा द्वंद भी हैं, लेकिन मधुशाला और मधुबाला जैसी रचनाओं से इसकी मधुरिमा और बिखर जाती है।

जड़ता के विरुद्ध जिस अमरता का गायन इस काल के कवि करते हैं उनकी अटूट दृढ़ता इस प्रकार है ----

काँटों को मैं कभी न अब तक समझ सका हूँ
फ़ूल कहे बली या निर्बल
उन्हें चुभा रहने देता हूँ, देता नहीं निकाल। [३१]

उन्हें इस बात की जानकारी है कि-

पानी केरा बुदबुदा अस मानस की जात,
देखते ही छिप जायेगा ज्यों तारा प्रभात। [३२]

इसलिए जीवन के प्रति असुरक्षित सोच उन्हें जीवन में मिलने वाले बहुमूल्य क्षणों को आनंदपूर्वक व्यतीत करने की सार्थकता पर बल देते हैं। यही कारण रहा कि इस काल के कवियों के चिंतन का लक्ष्य बन गया। कवियों ने जीवन की जड़ता को

और अधिक पहचाना तथा व्यक्तिगत और पारिवारिक निराशाओं से अंधकार में डूबकर उन्होंने साहित्य समाज को न भूलने वाले गीत दिये।

मानव द्वारा संकल्प व्यक्ति और दृढ़कल्पना द्वारा निराशा व हताश के कालिमापूर्ण क्षणों से निजात पाते हुए मनुष्य की अमर आन्तरिक शक्ति का शंखनाद इस काल के कवियों ने किया है। इसी दृष्टि से जड़ता को महत्व दिया है, क्योंकि इसमें जागृति का मूल और नवीनता का आहवान रहता है ---

जड़ से मिश्रित जागृति मैंने जो अब तक अनुभव की है,
खालिस जागृति के क्षण को भी क्या जीवन में आना है। [३३]

इस काल के कवि स्वयं चेतनाशील एवं संघर्षशील हैं इसीलिए मनुष्य को भी वे जड़ नहीं होने देते --

किन्तु मेरे स्वर निरर्थक, यदि न पर्दों को घटाते
है न दिल को खटखटाते है, न मुर्दों को हिलाते ओ जगाते।
मै अभी मुर्दा नही हूँ और तुमको भी अभी मरने न दूँगा।
मै अभी जिन्दा अभी यह शव परीक्षा मैं तुम्हें करने न दूँगा। [३४]

मनुष्य के मानवोचित गुणों से परिचय

मानव के अन्दर सबसे बड़ा यदि कोई गुण होता है तो वह है मानव के अन्दर छिपी हुई उसकी संवेदना। यही एक ऐसा गुण होता है जो मानव को पशु की श्रेणी से अलग करता है। यदि मानव पर पीड़ा से आनंदित हुआ तो वह मानव कहलाने लायक नहीं हो सकता।

छायावादोत्तर काल के कवियों में मानवीय वृत्ति की उदात्त भावना के पीछे व्यक्ति का अस्तित्ववादी दृष्टिकोण है। संवेदना के गुणों से परिपूर्ण व्यक्ति मानवीयता के स्तर पर विषपान करता है और समस्त सृष्टि को विष के गुणों के विषय में न बताकर उसका अमृत वर्णन करता है। विष का पान सुकरात एवं मीराबाई दोनों ने

किया लेकिन एक को मौत तो दूसरे को कृष्ण की भक्ति स्वरुप प्रदान किया। कवि बच्चन की संवेदना भी निम्न वर्ग के प्रति है। मानवीयता की रक्षा के लिए बहुत कुछ खोना और सहना पड़ता है लेकिन सच्चे अर्थों में जो मनुष्य है वह उस खोने में ही सब कुछ पा जाता है। कवि बच्चन मानवीयता के गान मनुष्य के दु:ख, दर्द, पीड़ा की अनुभूति को आत्मसात करके ही इतने महान गीत दे सके हैं -

गिरे को उठाना
कितनी ऊंचाई का काम है,
जिसे सब नफरत करते हैं,
उसे प्यार करने के लिए
कितनी हिम्मत चाहिए,
जिसे दूसरे के धब्बे धोने हैं,
उसे अपना कितना रक्त देना पड़ता है। [३५]

कवि बच्चन जी ने अपनी संवेदना समाज के सबसे निचले पायदान पर जीवन जीने वालों के प्रति व्यक्त की है। आर्थिक असमानता के बावजूद, नैतिकता के मूल्यों को अनदेखा नहीं किया है।

जगती की जलती छाती पर
क्या शीतल रख बन बरसेगा
मेरे नयनों का जल कण भी। [३६]

मानव के द्वारा मानवीयता के प्रति प्रदर्शित विशिष्ट गुण ही मानव को शुद्ध एवं पवित्र करते हैं -

मनुष्य विश्व प्रेम में पगा हुआ
मनुष्य आत्म-युद्ध में लगा हुआ
हरेक प्रण प्रयास में ठगा हुआ
मनुष्य हर स्वरुप में पवित्र है। [३७]

मानव को अगर मानव नही रहने दिया है तो इसके केन्द्र में एक ही बात है और वह धन है। धन की लोलुपता ने मानव - मानव के अन्दर एक बहुत बड़ी दीवार बना दी है। महानगरीय जीवन तो और ज्यादा इससे अभिषप्त है। इस आपाधापी में मानवीयता पीछे टूट गयी है --

महानगर में मानवता छोड़नी नही पड़ती
खुद - ब - खुद छूट जाती है।
धनी वर्ग का हृदय टटोलो
उसकी छाती सोने-चाँदी सी ठस ठण्डी।[३८]

मनुष्य के जीवन के मुख्य राग का प्रणय गान

कवि की रचनाओं पर अपने देश काल, परिस्थिति का पूर्ण रुप से असर होता है। वह वैसा ही लिखता है जैसा वह देखता या सोचता है। छायावादोत्तर काल में कवि के रुप में अपना विशिष्ट स्थान रखने वाले बच्चन जी पारिवारिक एवं सामाजिक परिस्थितिओं के वशीभूत होकर उनका प्रणय के प्रति आकर्षण बढ़ता गया। यही प्रणय का आकर्षण कवि के काव्य का मूल कारण बना।

तुम से क्या पाने को तरसा करता हूँ कैसे बतलाऊँ,
तुम को क्या देने को आकुल रहता हूँ कैसे जतलाऊँ .....

प्रेमास्पद के प्रति प्रेमी के हृदय की मार्मिक इस प्रकार व्यक्त हुई है --

तू है सूखी -- यही तो मेरे जीवन का आधार।[३९]

इस काल की प्रारंभिक रचनाओं में प्रेम विषयक अनेक कविताएँ लिखी गयीं - मेरा धर्म, तुम से, विरह स्मृति, दुखिया का प्यार, कलियों से, विरह विषाद, मूक प्रेम, उपहार, आत्मसंदेह प्रेम का आरम्भ आदि कविताएँ प्रणय से संबंधित है।

व्यक्तिगत जीवन में भी कवि जहाँ अपने प्रेमगीत गाता है, वह शर्मिन्दा नहीं होता। कवि का दु:ख इसमें है कि समाज उस पीड़ा को कवि के कवित्त भाव को नहीं समझता।

है सहसा जिह्वा पर आई,
घन घमण्ड वाली चौपाई,
जहाँ देव भी काँप उठे थे,
क्यों लज्जित मानवता मेरी !
है पावस की रात अँधेरी ! [४०]

राष्ट्रीय मूल्यों एवं भावनाओं का विकास

बच्चन जी की जन्मस्थली तत्कालीन राजनीतिक गतिविधियों का प्रमुख केंद्र था। स्वतंत्रता आंदोलन में अग्रणी नेता रहे पं. जवाहर लाल नेहरु बच्चन के गृह नगर इलाहाबाद के ही थे। बाल उम्र से ही छेदी चाचा द्वारा जलियाँवाला बाग काण्ड का वृत्तान्त सुनकर उनके बाल मन पर स्वतंत्रता आंदोलनों के प्रति प्रभाव पड़ना शुरु हो गया था। जालियाँवाला बाग हत्याकाण्ड से बच्चन का मन हमेशा सोचता था कि सरकार कभी भी क्रूर हो कर जनता पर गोली कैसे चला सकती है ? स्वतंत्रता आंदोलन के तमाम घटनाओं का प्रभाव पड़ा और देश भक्ति के बीज का अंकुरण हुआ। अपने देश प्रेम को स्पष्ट करते हुए उन्होनें झण्डा कविता में कवि उसके लहराते अंचल में भारत माता का आहवान सुनता है --

अहे ! नहीं फहराता झंडा वायु वेग से चंचल हो,
हमें बुलाती है माँ भारत हिला -- हिलाकर अंचल को। [४१]

कारागार को स्वतंत्रता के द्वारा बताते हुए बंदी कविता में कहा है -

शीश पर मातृभूमि ऋण भार
उसे हूँ रहा उतार।
देश हिल कारागार
कारागार नही वह तो है स्वतंत्रता का द्वार। [४२]

बच्चन जी महात्मा गांधी के अनन्य भक्त थे और अपनी श्रद्धा को उन्होंने इस प्रकार व्यक्त किया है -

तुम्हारा चर्खा प्यारे पुत्र
सुदर्शन का ले ले अवतार
शत्रुओं का मत काटे शीश
शत्रुओं का कर दे संहार। [४३]

गीतात्मक काव्य की प्रधानता

गीतकार हमेशा पराये के सुख - दु:ख को अपने सुख:दुख से जोड़कर देखता है। गीत काव्य का आधार वैयक्तिकता है। वह चाहे बाह्य जगत का हो या अन्त:जगत का सबका आधार वैयक्तिकता होता है। छायावाद के चार प्रमुख कवि स्तम्भ के रुप के प्रसाद, पंत, निराला तथा महादेवी वर्मा के काव्य में हुआ। इस युग की एक नई शाखा फूटी उसका, चरम विकास, गीत काव्य धारा को एक नया आयाम बच्चन जी के द्वारा हुआ। अपने निजी अनुभव, अपनी पीड़ा, पत्नी श्यामा की मृत्यु के बाद उनका कवित्व मन गीत काव्य की तरफ अग्रसर हुआ।

साथी, घर-घ्रर आज दिवाली !
फैल गयी दीपों की माला,
मन्दिर - मन्दिर में उजियाला,
किन्तु हमारे घर का, देखो, दर काला, दीवारें काली।
साथी, घर-घर आज दिवाली ! [४४]

सामाजिक विषमता और वर्णनाओं को पराजित करती मधुबाला के गीतों में मन की मादकता है -

सुरा-सुषमा का पा यह योग नहीं यदि पीने का अरमान,
भले तू कह अपने को भक्त, कहूँगा मैं तुझको पाषाण;
हमें लघु मानव को क्या लाज, गये मुनि-देवों के मन डोल
सरसता से संयम की जीत रही बुलबुल डालों पर डोल। [४५]

इस प्रकार हमने देखा कि छायावादी काव्य सांस्कृतिक नवजागरण लेकर आया था, किन्तु सन् १९३० के बाद उसमें परिवर्तन के कुछ लक्षण दिखाई दिए थे। वस्तुत: उत्तर छायावाद नाम से जिस काव्य प्रवृत्ति को रेखांकित किया जाता है, वह एक अल्पकालिक काव्य प्रवृत्ति रही,उसका कार्य छायावादी काव्य को बदलना तथा एक जागृत युग की पृष्ठभूमि तैयार करना था।

इस काल की कविताएँ मुख्यत: लाक्षणिक, चित्रात्मकता, नवीन प्रतीक, व्यंग्यात्मकता, प्रेम सौन्दर्य आदि गुणों के कारण ही छायावाद हिन्दी के पाठकों के बीच अपने लिए एक जगह बना पाया। शोध के दौरान मैंने पाया कि छायावाद शब्द का प्रथमत: प्रयोग पंडित मुकुटधर पाण्डेय ने किया था। जयशंकर प्रसाद निराला, सुमित्रानंदन पंत, हरिवंशराय बच्चन तथा रामधारी सिंह दिनकर भी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहे। बच्चनजी ने हालावाद के राग को जन्म देकर उसे आगे बढ़ाया और दिनकर ने विद्रोह की आवाज दी।

हालावाद

हालावाद को चलाने का पूरा श्रेय बच्चन जी को जाता है। बच्चन जी सन् १९३२ के आसपास से लेकर सन् १९३७ तक हालावाद की काव्यधारा में तीव्रता से आगे बढ़ते रहे, सन् १९३४ यानि खैय्याम की मधुशाला के अनुवाद से उनके काव्य का सृजन हुआ। बच्चन जी के जीवन में इस हालावादी या मधुवादी काव्य के अभिशाप रुप में एक दुर्भाग्य का भी आगमन हुआ कि उन्हें हालावादी मदिरा प्रचारक, पियक्कड़, धर्मपंथ भ्रष्ट और छिछोरा कवि कहा जाने लगा। यह दुर्भाग्य बच्चनजी के काव्य विकास में बाधक तो न हो सका पर इससे एक अहित अवश्य हुआ कि हमारे हिन्दी के सुधी आलोचक वर्ग ने जीवन के अत्यन्त मर्मस्पर्शी कवि के महत्वपूर्ण काव्य का उचित मूल्यांकन नहीं किया।

हालावाद के प्रणेता के भीतर सहजता तथा सम्वेदनशीलता का गुण उनकी कृतियों में सहज और स्पष्ट नजर आता है। उनकी भाषा शैली काफी सहज और वास्तविकता के निकट थी। उन्होंने अपने मधुकाव्य में जाति, धर्म, भाषा की खोखली

दीवार को अपनी सशक्त हालावाद की लहर में बहा दिया और हिन्दी साहित्य जगत को मधुकाव्य का उपहार दिया।

हालावाद ने हिन्दी साहित्य के पथिक को एक नई दशा और दिशा दी। आश्चर्य यह है कि इतनी कम उम्र में उनकी रचना सारी युवा धड़कनों के दिल में मधुर रस का स्त्रोत अनवरत बहाने लगी। दुनिया की लाचारी कल्पना जगत में मधुकाव्य मुँह पर एक करारा तमाचा था। जाति, भाषा, धर्म की राह पर के कंटको के लिये एक कड़ा कदम था। आज इतने सालों बाद भी ऐसा कोई वाद न आया जो हालावाद की बराबरी कर सके। जीवन को जीने के लिये प्रेरित करती मधुशाला हिन्दू के मंदिर का दिया और मुसलामन के मस्जिद का चिराग और ईसा के गिरजे की मोमबत्ती सा रोशनी दे रहा है। उसके गृह में केवल हाला और प्याला नहीं, साकी बाला भी है। अनेकानेक प्रतिबिम्बों का जो सफल प्रयोग उन्होंने किया था, शायद ही कोई बिरला करता। हो सकता है शतकों तक मधुशाला की मधुबाला जवान ही रहे। दो बातें हालावाद के बारे में कहीं जा सकती है - कई लोग इस संग्रह के बारे में कहते है कि यह केवल मदिरा को प्रधानता देता है। जिंदगी के लिये Metaphore बहुत बढ़िया हैं।

पंत जी कहते है कि बच्चन जी मुख्यत: मानव भावना अनुभूति प्राणों की ज्वाला तथा जीवन संघर्ष का आत्मनिष्ठ कवि हैं। [४६]

कुछ आलोचकों की मान्यता अथवा धारणा है कि बच्चन जी ने तो झूमते उन्मत्तता से सुरों के गान गाए बच्चन तो नारी सौन्दर्य के आसपास चक्कर लगाते नजर आते हैं। ऐसे में बच्चन को जीवन संघर्ष का कवि किस प्रकार माना जा सकता है? मैं इस बात से तो सहमत हूँ कि बच्चन जी ने मानवीय प्रेम को केवल मानसिक और आत्मिक ही नहीं माना है, यह भी मुझे स्वीकार है कि बच्चन जी ने प्रेम को केवल भंगिमाओं के आदान प्रदान तक सीमित नहीं रखा और मैं यह भी स्वीकार करने को तैयार हूँ कि वे उन्मुक्त प्रणय के लिए अधर रसपान की बेलाग घोषणा भी करते है। उनकी मधुशाला के काव्य-संसार में जिसने ललायित अधरों से हाला नही चूमी, हर्षित हाथों से मधु का प्याला, लज्जित साकी का हाथ पकड़ उसे अपने पास नही खींचा, उसने जीवन की मधुमय मधुशाला को व्यर्थ ही सुखा डाला। इसी जीवन दर्शन के कारण वे बिना किसी लाग लपेट के अपनी कामना की अभिव्यक्ति करते हैं। [४७]

हरिवंश राय बच्चन की प्रमुख रचना मधुशाला थी। जिसमे उन्हें काफी प्रसिद्धि मिली। हरिवंशराय बच्चन ने मधुशाला में मधु, मदिरा, हाला (शराब), साकी (शराब

परोसने वाली), प्याला (कप या ग्लास), मदिरा की मदद से जीवन की कठिन जटिलताओं के विश्लेषण का प्रयास किया है।

मधु के अनेक अर्थ हैं। यह एकार्थी या एकपक्षीय अर्थ वाला शब्द नहीं बल्कि जल, थल, चराचर, देव-मनुष्य, भूत-भविष्य-वर्तमान सभी में समाया है। कवि बच्चन का यही लक्ष्य है कि, इस सर्वव्यापी तत्व को जन-मानस ग्राह्य बना सके। संग्रह के आरंभ में कवि ने इसी मधु का प्रसाद प्रभु को भी समर्पित किया है जिससे उसकी बनाई सृष्टि इसका सम्यक भाव विचारात्मक उपयोग कर सके -

मृदु भावों के अंगूरों की आज बना लाया हाला,
प्रियतम अपने ही हाथों से आज पिलाऊँगा प्याला;

पहले भोग लगा लूँ तुझको फिर प्रसाद जग पायेगा;
सबसे पहले तेरा स्वागत करती मेरी मधुशाला। [४८]

कवि बच्चन को स्वतंत्र, सृष्टि के प्रत्येक कण में प्रियतम साकी की रमणीय छवि के दर्शन होते हैं। मधुशाला में आये हाला, प्याला, साकी, बाला आदि शब्दों को प्रतिकात्मक अर्थो में प्रयुक्त किया गया है। मधुशाला में धर्म और दर्शनके गूढ़ रहस्य समाहित हैं।

कवि बच्चन के अनुसार ईश्वर प्राप्ति के अनेक रास्ते हैं। लेकिन विश्वास और श्रद्धा से कोई भी एक रास्ता पकड़कर मनुष्य प्रभू को पा सकता है। जीवन में दुख भुलाकर अपने लक्ष्य को मस्ती भरे गीत गाते हुए प्राप्त किया जा सकता है।

कवि बच्चन की इस मधुशाला का आनंद वे ही लोग उठा सकते हैं जिनके हृदय में भेदभाव और विषमता नहीं है, जो धर्मग्रन्थों और मंदिर - मस्जिद के चक्कर में नहीं पड़ता उसी का यहाँ स्वागत है।

धर्म - ग्रंथ सब जला चुकी है जिसके अंतर की ज्वाला,
मंदिर, मस्जिद, गिरजे सबको तोड़ चुका जो मतवाला,
पण्डित, मोमिन, पादरियों के फन्दों को जो काटचुका
कर सकती है आज उसी का स्वागत मेरी मधुशाला। [४९]

हालावाद बीसवीं सदी की, देश की भिन्न-भिन्न भाषाओं में रची हुई सर्वाधिक प्रसिद्ध कृतियों में से एक है। खड़ी बोली की पहली काव्य पुस्तक है, जिसका अनुवाद

अंग्रेजी में हुआ। इस संग्रह की बनावट पर उमर-खैयाम के भोगवादी दर्शन का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। परंतु हालावाद का कवि बच्चन भोगवादी न होकर एक ऐसा कवि है जो समाज सुधारक भी है और क्रांतिकारी भी।

हालावाद का मूल स्वर मस्ती का है यह मस्ती केवल एक आयु, वर्ग, काल तक सीमित न रहकर गहन भावों, कल्पनाओं और विदग्धता की सहज अभिव्यंजना है। इस संग्रह में व्यक्ति, समाज, राष्ट्र दर्शन तथा साहित्य के स्वर नई दिशा में मुखरित हुए हैं। यह नयी दिशा धर्म, समाज और राजनीति की रुढ़ि को तोड़ने का स्वर है।

कवि बच्चन इस माटी की उपज है। अत: यहाँ का दुख - दर्द, छटपटाहट, बेचैनी, वाह्य और आंतरिक घुटन, उस सबको तोड़कर अंतर्मुखी प्रदान करने वाली दिशा की खोज है। जीवन नश्वर है, बंधनों से जकड़ा व्यक्ति कब तक इससे मुक्त होने के लिए छटपटाता रहेगा। अनेक प्रकार की रुढ़ियों और आडंबरों को तोड़कर कवि ने ऐसी मस्ती और अल्हड़ता की मधुर वीणा बजाई है कि सरल पदावली और स्वाभाविक संगीत में डूब कर पाठक श्रोता अपने गम भूल जाते हैं।

कवि बच्चन ने भटके राही और पथभ्रष्ट मनुष्य को झकझोरा है। जीवन की सच्चाई से उसका परिचय कराकर आंतरिक जीवन तल जोश की मदिरा को चैतन्य की मादकता को ललकारा है। बाह्य परिस्थितियाँ मनुष्य को शक्ति शून्य क्यों न कर दे, अगर वह आंतरिक चेतना जागृत रखता है, तो वही जीवन की मादकता, मदिरा बन उसे समाज मार्ग के अवरोधक तत्वों को तोड़ने की अद्‌भुत क्षमता दे देती है।

हालावाद काव्य के संपूर्ण रुप में बच्चन जी ने ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के चौदहवें अध्याय का 90 वाँ सूक्त रखा है -

मधु वाता ऋतायते
मधु क्षरन्ति सिन्धव:
माध्वीर्न: सन्त्वोषधी:।
मधु मधु मधु
तृप्यध्वम् तृप्यध्वम् तृप्यध्वम् ।

हालावाद के प्रर्वतक कवि बच्चन ने २७ वें वर्ष में मधुशाला लिखी। किशोर कवि बच्चन की भावनाएँ इसमें प्रकटित हुई हैं। जिसने भी हालावाद के इस मधु का पान किया, वह उसका रसिया बन गया। बच्चन जी की आकांक्षा छायावादी कवियों का पिछलग्गू बना रहना न था कालांतर में उन्होंने मधुशाला के बाद मधुबाला और

मधुकलश लिखी। हालावाद ऐसा युग था कि सभी कवि मन छायावाद के अवसाद से बाहर निकलने के लिये छटपटा रहे थे। मधुशाला रचने के समय बच्चन जी उन्मादिनी समाधि की दशा में थें। बच्चन की काव्य यात्रा अपनी जिंदगी के अनुभवों के साथ चलने वाली ऐसी यात्रा थी, जिनमें कई मोड़ आये, कई रंग आये, कई उतार-चढ़ाव आये उन्होंने लिखा भी है-

मैं तो इस बेरोक सफर में जीवन के
इस एक और, पहलू से निकल गया। [५०]

बच्चन की मधुशाला में उन्होंने न केवल आत्मसंघर्ष व्यक्त किया हैं, परंतु समाज में फैली सड़ान्धता के भी दर्शन करवाये है। मुकुटधर पांडे, प्रफुलचंद ओझा ने भी हालावाद की पताका को थामा, पर यह बहुत दूर तक न चल पाया। आखिर इस पथ पर बच्चन जी ही अग्रसर हुये। उन्होंने कभी इस बात की चिंता न की कि लोग मेरे बारे में क्या कहेंगे। उनका मानना था कि मुक्त छंद संयम-सुधर कलात्मक हाथों से संवर कर भविष्य में हिन्दी कविता में आधुनिक युग जीवन अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन सकेगा और उनकी उपलब्धि इस दिशा में उनके गीतों से कम महत्वपूर्ण नहीं होगी।

बच्चन जी का सारा हालावाद आम आदमी की तलाश का नारा दे रहा था, यह छायावाद की तरफ कविता से सामान्य जन को निराश की खाई की तरफ न ढकेलकर जीवन की उच्चतम राह की ओर ले जा रही थी। हालावाद की काव्य यात्रा साधारण व्यक्ति की असाधारण मनोवृत्ति को लोगों के सामने ले आये। हालावाद में जीवन संबंधी अवधारणायें जड़ और निश्चल न होकर सदैव परिवर्तनशील रही। हालावाद के समय रचित मधुकलश में बच्चनजी ने अपने अहम् को दिखलाया है। उनके अनुसार नर नारी से भरे जगत में कवि हृदय अकेला रह गया है और अपने अकेलेपन को स्वीकार भी किया है। मधुकाव्य के युग में भी बच्चन तन-मन के संघर्ष से मुक्त नितांत, निर्द्वन्द रहकर अप्रतिहत आनंद का उपभोग कर सके। अपने जीवन और काव्य की समानुरुपता को अनेक बार घोषित करने के बावजूद बच्चन ने अपने जीवन और काव्य के क्षतिपूरक संबंध को और भी संकेत किया है जिसे शांत चिंता विमुक्त घर नसीब नहीं हुआ था, उसने मधुबाला की कल्पना की थी, जिसे मनवांछित साथी नहीं सुलभ हुआ था, उसने साकी का हाथ पकड़ लिया था और जो एक निर्मल शीतल स्त्रोत से अपनी तृष्णा तृप्त नहीं कर पाया था, वह हाला के प्याले पर प्याले चढ़ा रहा था। जीवन कविता में प्रतिबिम्बित होता अवश्य है, पर यह प्रतिबिम्ब सदा सीधा ही नही पड़ता।

हालावाद जीवन के लिये एक रणभूमि नहीं रंगभूमि भी है। इसमें अगर युद्ध है तो प्रेमी भी है। उस क्षण में वह प्रेम के साथ अन्याय होने पर तलवार उठाने के भी सलाह देता है। आलाचकों ने हालावाद के काव्य में व्याप्त उदासी, निराशा, कुंठा को लक्ष्य किया, पर उनकी पक्तिंयों में जीवन जिजीवीषा की ओर उनका ध्यान बहुत कम गया। बच्चन जीवन और यौवन के कवि रहे हैं, "वह यौवन जो हो, युवक डूबे भले ही, पर कभी डूबा न यौवन", परंतु यौवन में विद्रोह के साथ विलास का भी सहअस्तित्व है1 केवल जीते रहने को ही बच्चन जीवन की कृतार्थता नहीं मानते। उन्होंने चिर गतिमय, स्फूर्तिमय और सृजनशील जीवन का अभिनन्दन किया है। वे स्वयं अपने जीवन में निरंतर गतिशील और परिवर्तनशील रहे हैं; जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण कभी जड़ता का शिकार नहीं बन सका। मैं जहां खड़ा था कल उस बल पर आज नहीं, कल इसी जगह पाना मुझको मुश्किल है। जीवन में मिट्टी के पल भी आए, सोने के दिन भी आए, वे कभी हँसे भी और कभी रोएँ भी। चिता की राख से लेकर सिन्दूर की रेखा तक जीवन के सारे पट-परिवर्तनों में बच्चन ने कभी मृत्यु की पूजा नहीं की, वे सदैव जीवन की ही आरती उतारते रहे।

मैने जीवन देखा, जीवन का गान किया ! [५१]

कविवर बच्चन का स्थान उत्तर छायावादी कवियों में मूरधन्य हैं काव्य में भावना तत्व को ही महत्व देते है। वैसे भी बच्चन ने कहा है कि कवि को कविता न तो वाद को ध्यान में रखकर लिखनी चाहिए न ही पाठक को वाद को ध्यान में रखकर पढ़नी चाहिए। उनके अनुसार देश का समाज से किसी कवि की संगति बिठाने के लिये उसे किसी वाद में बांधने की आवश्यकता पड़ सकती है, पर यह हमेशा देखा गया है कि प्रतिभावान कवि और लेखक वाद में सहज नहीं बँधते। बच्चन जी की धारणा है कि वाद दूसरी, तीसरी, चौथी श्रेणी के कवियों के लिए उपयोगी होता है। प्रथम श्रेणी के कवि के लिए नहीं। कहने का तात्पर्य है कि युग की कुछ धारणाएँ होती है - कुछ लोगों को इसके साथ बहने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं रहता कुछ युग के साथ बहते हुए भी अपनापन रखते हैं, ये धारा के बाहर भी उतने ही रहते है, जितने धारा के बीच।

संक्षेप में जीवन वाद से बड़ा है और कविता पाठय-पुस्तक में रखने को नहीं लिखी जाती। कविता का व्यापक क्षेत्र जीवन है। उसे जीवन से ही लेना और जीवन को ही देना है। कवि का विचार है कि जीवन क्षणभंगुर है। न जाने कब मृत्यु का

आलिंगन करना पड़े, भूत एवम् भविष्यत् की चिंताओं से मुक्त रहना चाहता है, भूत के प्रति पश्चाताप एवं आगत का भय मानव को सुख से ही नहीं जीने देता।

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि बच्चन जी ने अपनी कविताओं के माध्यम से कोई वाद विशेष नहीं चलाया, किन्तु उन्होंने जो अपने जीवन में भोगा और जिया, उसी को काव्य के माध्यम से कुछ प्रतीकों को लेकर पाठकों के समक्ष अभिव्यक्त किया है।

निष्कर्षत: यही कहा जा सकता है कि बच्चन जी हालावाद के सफल कवि के रुप में हिन्दी साहित्य जगत के धरातल पर वे आसमान सूर्य की तरह आलोकित हुए। उनकी हाला सैंकड़ों नौजनवानों के गले की माला बन गई थी। उनकी मधुशाला, मधुबाला और मधुकलश की नींव उमर खैय्याम की रुबाइयाँ थी पर ख्यालात उनके अपने थे और उनका अपना अलग अन्दाज था।

बच्चन जी के पूर्व और पश्चात् भी कई कवियों ने हालावाद का दामन थामा, जिनमें हृदय नारायण पाण्डेय, बालकृष्ण शर्मा नवीन, मालवीय जी आदि प्रमुख है। इन सभी की कविताओं में बच्चन जी की कविताएँ लोकप्रियता के चरम शिखर पर पहुँची। हालावाद से एक साधारण व्यक्ति की सोच में भी अमूल्य परिवर्तन हुए। निराशावाद से निकलने के बाद आशावाद का मार्ग उनके हालावाद में दृष्टिगोचर होता है।

हालावाद के बारे में विभिन्न कवियों तथा लेखकों के विचार -

हालावाद के प्रवर्तक बच्चन जी ने हिंदी के साहित्य जगत को एक अनमोल भेंट मधुकाव्य के रुप में दी । जो कि जीवन को निराशावाद से आशावाद की ओर प्रतिपल अग्रसर होने का संदेश देने वाली कविताओं का संग्रह है, पर जैसा कि मैं समझती हूँ कि हर नवनिर्माण को पहले बदनामी का इनाम दिया जाता है फिर उसका मूल्य समझ में आता है। यही बच्चन जी के हालावादी काव्य का हाल था । किसी ने भी उसके अंदर की मधुरता जाने बिना उसे पल-प्रतिपल लांछित किया पर जैसे रात के बाद दिन आता है, उसी प्रकार साहित्य के जगत में, समय बीतने पर बच्चन जी के मधुकाव्य के साथ न्याय हुआ। मैंने जो कुछ भी उनके हालावाद के बारे में जाना, जो कि हिंदी काव्य जगत के जाने माने कवि या लेखक थे, उनकी टिप्पणियाँ यहाँ प्रस्तुत की हैं । वैसे तो अनेक लोगों ने उनके बारे में लिखा है, पर मुझे जो विशेष लगे उन्ही को मैं यहॉ प्रस्तुत कर रही हूँ ।

डॉ. दशरथ राज के अनुसार बच्चन जी ने हालावाद के साथ ही साामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक कुरीतियों की बखियाँ उधेड़ कर रख दी थीं । फिर भी उन्होंने अपनी कविता पर पराजयता का कलंक नहीं लगने दिया था । बच्चन जी के काव्य को बार-बार पढ़ने पर नया रस प्राप्त होता है, हालावाद ने बच्चन जी से अनेक प्रतीकों द्वारा अपनी बातें बेबाक कहलवाई हैं । [५२]

बच्चन जी ने हालावाद को केवल मदिरा का द्योतक नही माना है। उनके अनुसार बच्चन जी का हालावाद इतना रसात्मक और बोधात्मक है कि वह अलग रुप से पाठकों को आनंदित तथा वास्तविकता का बोध कराता है ।

डॉ.जीवन प्रकाश जोशी जी लिखते हैं कि बच्चन जी ने लीक से हटकर हालावाद का समर्थन कर अपना काव्य संसार रच डाला जो कि हालावाद के नाम से जाना गया पर यह भी उतना ही सत्य है कि वे केवल उसी से बँधे नहीं रहें । हालावाद में केवल भोगवादी दृष्टिकोण लक्षित नहीं किया है पर समाज में व्याप्त कुप्रथाओं कुरीतियों का पुरजोर विरोध उन्होंने इसके माध्यम से किया था । इतना सब होने के बाद भी वे किसी एक विशेष वाद से बंध कर नही रहे । वे मानते थे कि जीवन वादों से अधिक महत्वपूर्ण है, इसलिए उन्होंने जीवन की हाला की प्याला को ज्यादा महत्वपूर्ण जाना न कि वादों को । [५३]

बॉके बिहारी भटनागर जी: बच्चन जी ने अपने हालावाद के माध्यम से यह घोषणा कर दी कि जीवन की अनुभूतियों ने मुझसे जो लिखवाया है उसी को काव्य रूप में मैंने प्रस्तुत किया है । मैंने इसी कारण अपने को किसी फिलॉसाफी या वाद से नही बॉधा । [५४]

डॉ. के.जी. कदम जी ने लिखा है कि बच्चन जी हालावाद मे जिए हैं, उन्होंने जो कुछ भी लिखा था वह उस परिवेश, काल, का आइना है । बच्चन जी रसवादी कवि हैं । उनका समग्र काव्य हालावाद की उपलब्धि का काव्य है । करुण रस तथा श्रृंगार रस का प्रयोग एक साथ करना उनकी मौलिक विशेषता है । बच्चन जी ने हालावाद के साथ ही सामाजिक धार्मिक, राजनैतिक, कुरीतियों की बखियाँ उधेड़ कर रख दी । [५५]

डॉ.शिवदान सिंह चौहान जी के अनुसार हालावाद के बाद ही हिंदी काव्य जगत में अमूल्य परिवर्तन आया। इसके पूर्व की कविताएं केवल छायावाद के आंगन में रेंग रही थी, पर अचानक इसके आगमन से संपूर्ण जन जीवन के मन में आशा के प्रसून (फूल) खिलने लगे । लोग भ्रम की दुनिया को छोड़ कर वास्तविकता की दुनिया में विचरण करने लगे । [५६]

हालावाद के आगमन ने छायावाद की प्राचीन प्राचीरों की जड़ों को झक्झोर कर रख दिया । प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी वर्मा की कविताओं पर प्राचीन भारतीय अध्यात्म दर्शनों और रहस्यवाद का प्रभाव था, जिसके कारण उनकी कविता में व्यक्तिगत सुख-दु:ख और सामाजिक सुख-दु:ख में समत्व स्थापित करते चलने की उदात भावना निरंतर क्रियाशील दिखाई पड़ती है । इससे उनकी कविता में एक ऐसी निस्संगता, निर्वेयक्तिकता, सात्विकता और मर्यादा है, जो जीवन में फॅसे लोगों को मायावी, अशरीरि और काल्पनिक लगी ।

बच्चन जी का मधुकाव्य इस मायावी जगत से लोगों को बाहर निकालने में सहायक सिद्ध हुआ । लोगों ने इसे तरह तरह से बदनाम किया, किसी ने हालावाद को पिय्यकड़ों की सृष्टि कहा तो किसी ने दिशाहीन पथ का काव्य कहा, पर मुझे लगता है कि परिवर्तन की ऑधी को रोकना असंभव होता है । तभी तो हालावाद अपनी अल्पायु में ही सैकड़ों लोगों को अपना दिवाना बना गया । आज भी जिन्होंने उस वाद को जाना है याद करके वाह से आह तक आ जाते हैं ।

रेणु मल्होत्रा जी का कहना है -छायावाद की परवरिश पाकर भी बच्चन जी का झुकाव सदैव नवीन मुकामों की ओर लगा रहा अगल बगल की परिस्थितियों में दिखावटीपन में वे अपने को मजबूत मानते थे । हालावाद के उत्तुंग शिखर पर उन्होंने केवल मानव के सुख की कामना की है । बच्चन जी व्यक्तिगत अनुभूतियों में से जीते हुए भी समाज की वो इकाई थे, जो अपनी वास्तविकता को खुद जॉच परख कर सुतुष्ट होने में जीवन की सार्थकता मानते थे । वे यह भी कहती है, बच्चन जी हालावाद के प्रमुख रचनाकार थे पर वे उतने ही भावुक और संवेदनशील भी थे । बच्चन जी ने कहा भी है कि 'मैं मधुशाला में था या मधुशाला मुझ में थी, मैं जान नही पाया' । [५७]

जब भी उन्हें आवश्यकता हुई तभी वे प्रतीकों का प्रयोग करने से नहीं चूकते थे । इसी हालावाद के अंतर्गत मधुशाला, मधुबाला और मधुकलश की रचना उन्होंने की ।

डॉ.ललिता अरोड़ा:

ललिता जी के अनुसार बच्चन जी को उनके मधुकाव्य के आधार पर हालावादी कवि नहीं कहा जा सकता है 'हाला' शब्द का अधिक प्रयोग देख कर अथवा इसकी मस्ती का राग रंग देखकर गायक कवि को उस वाद का प्रवर्तक मान लेना और उसी दृष्टि से काव्य विवेचन करना न्याय संगत नहीं लगता । इतना अवश्य माना जा सकता है कि जिस विद्या को साहित्यिक आलोचकों ने छायावाद का मान दिया था उससे बच्चन जी की सभी रचनाएं सर्वथा भिन्न थीं। हालावाद ने जीवन की सच्ची घटनाओं को दिन प्रतिदिन के खट्टे मीठे अनुभवों के साथ अपने पाठकों तक बिना लाग लपेट के प्रस्तुत किया था। हर आदमी को उसमें अपना जीवन दृष्टिगत होता था । बच्चन जी की सरल सपाट भाषा ने हिंदी के पाठकों के लिए एक नया द्वार खोल दिया था। बच्चन जी की काव्य भाषा का प्राण हर जाति धर्म के दिलों में हालावाद के रूप में धड़कने लगा । मधुकाव्य के सर्जक बच्चन जी की रचनायें सच्चे अर्थों में जीवनवाद की कविता थी जिये,भोगे जीवन की सीधी अभिव्यक्ति थीं, और इसी के कारण समाज में अमूल्य परिवर्तन दिखने लगा। [५८]

डॉ.गणपतिचंद्र गुप्त :

बच्चन जी इस सदी के एक ऐसे कवि हुए है जिन्होंने युग की दकियानूसी प्रवृत्तियों से अप्रभावित रहकर, शुद्ध कविता लिखने, तथा उस पर किसी वाद विशेष का लेबल न लगवाने की भूल की है । वे ऐसी भूल करने के लिए प्रमुख भी माने जाते हैं । उनके कुछ हितैषी आलोचकों ने उनपर 'हालावाद' का लेबल लगाने का पुरजोर प्रयास किया था । यदि इस हालावाद को पल्लवित, पुष्पित करने का कोई योजनाबद्ध

प्रयास किया जाता और वह किसी प्रकार चल पड़ता तो बच्चन जी भी अब तक अमर हो चुके होते, पर विड़ंबना तो यह है कि वे आज बच्चन जी 'बच्चन' ही रहे । किसी वाद का दामन न थामकर मुक्त हस्त से कोरी कविताएं लिखते रहे। अपने को कभी ऊंचा दिखा कर दूसरे का कभी अपमान नही किया, पर हर स्थान पर अपनी काबिलियत के झण्डे गाड़ दिए ।[५९]

इन सभी कवियों तथा आलोचकों के विचारों को जब मैंने विश्लेषित किया तब जाना कि 'बच्चन जी कलम के सिपाही थे, शब्दों के शहंशाह थे, वाणी के सम्राट थे । उनके जैसा कवि कोई बिरला ही होगा जो कि क्षण प्रति क्षण अपने दु:ख के बादलों में से सतरंगीन इंद्रधनुष को देखने का स्वप्न देखता है । समाज, घर, मित्र, परिवार से टूट कर भी साहित्य की खान को भरने में तत्परता से लगा रहा । किसने क्या कहा इसका गम उन्हें न था, क्यों कहा इसका अफसोस था । हालावाद केवल उनके द्वारा नहीं चलाया गया था, कई लोग इसकी पताका थाम कर चले थे, पर अफसोस उसका संगेपान (पालन पोषण) बच्चन जी के कर कमलों से अधिक हुआ था । शैशवावस्था में डरकर रेंगने वाले हालावाद की पताका को लेकर उसे साफ और सुथरे तरीके से हिंदी के विशाल काव्य जगत में आसीन करवाने का सम्मान पात्र केवल और केवल बच्चन जी को ही मानती हूँ। उनके इस हालावाद के बिगुल ने नवयुवकों की महत्वाकांक्षी युवा पीढ़ी को परम्परा, पाखंड, थोथे आर्दशों, कर्मकांड, क्रूर राजनीति तथा खोखली नैतिकता के विरुद्ध विद्रोह करने का दायित्व सौंप दिया । उन सभी के लिए बच्चन जी के हालावाद के पात्र से निकली कविता किसी अस्त्र - शस्त्र से कम न थी, केवल सबके मन में भारतीयता का भाव, इंसानियत की भावना, वर्गभेद, रंगभेद सभी का विलय इसमें आसानी से हो गया । मुझे लगता है बच्चन जी के हालावाद ने वास्तव में एक सच्चे तथा अच्छे हिंदुस्तान की नींव डाली थी, जिसे तात्कालिक समाज न समझ पाया था ।

आज 75 वर्षों बाद भी उनके हालावाद का आनंद अशरीरि रुप में जन मन के भीतर व्याप्त है । मेरे अनुसार जिसने हिंदी का दामन थामा और बच्चन को न जाना उसे हिंदी के खेमें का कहा ही नहीं जा सकता है । बच्चन जी की हाला केवल अवसाद के गर्त में गिरनेवाली न कहकर उसके त्राण (ताकत) का साधन तथा आशावाद की ओर अग्रसर होने का प्रेरणा स्त्रोत कहें तो अधिक उपयुक्त होगा ।

बच्चन जी की कविता को घटनाओं का इतिहास मानना गलत होगा, उनकी हालावादी कविता तो घटनाओं से प्राप्त अनुभति को जगाने का साधन है ।

"हालावाद था बच्चन की जान,
उनके इस जज्बे को मेरा कोटिश: प्रणाम " ।

संदर्भिका (अध्याय २) -

[२९] बच्चन; बच्चन रचनावली - ९; भूमिका

[३०] बच्चन; आकुल अतर; कविता ६०

[३१] बच्चन; नये पुराने झरोखों से;

[३२] हजारी प्रसाद द्विवेदी; कबीर के दोहे

[३३] बच्चन; मरघट ; पद संख्या ९०

[३४], [५१] बच्चन; आरती और अंगारे;गीत सं १००, १७

[३५],[३८] बच्चन; उभरते प्रतिमानों के रुप

[३६], [३७] बच्चन; मिलन यामिनी

[३९] बच्चन; दुखिया का प्यार

[४०], [४४] बच्चन; निशा निमंत्रण; गीत ४१, २७

[४१] बच्चन; झंडा कविता

[४२] बच्चन; बन्दी कविता

[४३] बच्चन; बच्चन की प्रतिनिधि कविताएँ

[४५] बच्चन; मधुबाला;बुलबुल कविता ३

[४६], [५०] सुमित्रानंदन पंत; बच्चन निकष पर

[४७], [४८], [४९] बच्चन; मधुशाला; रुबाई १, १७

[५२] डा. दशरथ राज; बच्चन निकष पर

[५३] डा. जीवन प्रकाश जोशी; बच्चन व्यक्तित्व और कृतित्व

[५४] डा. बांके बिहारी भट्नागर; बच्चन व्यक्ति और कवि

[५५] डा. के जी कदम; कवि श्री बच्चनः व्यक्ति और दर्शन

[५६] डा. शिवदान सिंह चौहान; लोकप्रिय कवि बच्चन; डा. सियाराम शरण के लेख में लिखे गये विचार से लिया गया;पृष्ठ ३१

[५७] डा. रेणु मल्होत्रा; बच्चन अनुभूति और अभिव्यक्ति; लेख सामाजिक चेतना

[५८] डा. ललिता अरोड़ा; बच्चन एक अध्ययन

[५९] डा. गणपति चन्द्र गुप्त; बच्चन निकष पर

अध्याय - तीन

संवेदना पर आधारित हरिवंशराय बच्चन की काव्य रचनाओं का अनुशीलन

अध्याय - तीन

संवेदना पर आधारित हरिवंशराय बच्चन की काव्य रचनाओं का अनुशीलन

बच्चन जी के काव्य की ओर प्रारंभ से ही मेरी रुचि रही है लेकिन एक प्रश्न सदैव मस्तिष्क में बसा रहा कि बच्चन जी ने अपने काव्यों के आगे मधु शब्द का प्रयोग क्यों किया है ? अब जब मुझे ईश्वर की ओर से लम्बे अन्तराल के बाद शोध का अवसर मिला तो अपने विषय में इस मधु का सही अर्थ जानने की भी इच्छा थी। यही कारण था कि हालावाद के परिप्रेक्ष्य में मैने बच्चन जी के उन काव्यों का चयन किया जिनमें हाला और मधु का सही संबंध की जानकारी मिल सके।

खड़ी बोली काव्य में प्रतीक रुप में मधु विस्तृत अर्थों में प्रयुक्त होता रहा है। शायद ही कोई कवि इस मधु से अपने काव्य को वंचित रख सका हो। खड़ी बोली काव्य में मधु अधिकांशतः रस एवं माधुर्यता का ही पर्याय है। मधु शब्द सोमरस अथवा मदिरा या हाला के अर्थ में कहीं पर भी अभिलक्षित नहीं होता। मधु न जाने कब से लोगों का पेय द्रव्य बना चला आया है। ऋग्वेद में सोम देवता के रुप में चला आया है। हमारे पुराण इतिहास के अनुसार प्राचीन पुरुषों, देवों, सम्राटों आदि के सुख-भोग हेतु खुलेआम मधुपान किया जाता था। मधुवादी काव्य की परम्परा सदियों पुरानी है। सैकड़ों वर्ष पूर्व उमर खैयाम की मधुशाला खुल चुकी थी और मधुबाला प्रस्तुत की जा चुकी थी इतना ही नहीं सूफी फकीरों ने मस्ती मुहब्बत को मदिरा की संज्ञा से परे की चीज नहीं समझा। सूफी फकीरों का सम्पूर्ण आध्यात्मिक दर्शन सुरा और सुन्दरी के माध्यम से वाणी पा सका है। उर्दू के शायरों और उनकी शायरी पर सुरा-सुन्दरी का गहरा उन्माद चढ़ा हुआ है। मीराबाई और तुलसीदास का पवित्र-काव्य भी मधु से वंचित नहीं रहा है। इस उदाहरण से स्पष्ट है - मधुबन जाय भए मधुबनिया, हम पर डारो प्रेम को फंदा। [६०]

रीतिकाल के रस-सिद्ध कवियों ने मधु-काव्य का सृजन किया है। इन कवियों पर प्रायः उर्दू-फारसी के कवियों का नाजुक अन्दाज उक्ति चमत्कार और महफिली ठाठ हावी हुआ लगता है। यही नहीं अब से ढाई हजार वर्ष पूर्व चीन के कवियों ने जीवन की मस्ती के प्रतीक रुप में मदिरा का व्यंग्यमय वर्णन किया था।

इस प्रकार विश्व में मधु संबंधी काव्य की एक लंबी परम्परा और रचनात्मक स्थिति रही है यह बात दूसरी है कि इसे हालावादी काव्य नहीं कहा गया। सच तो यह है कि हालावादी काव्य कुछ भी नहीं है। काव्य में हाला की अभिव्यक्ति मन की मस्ती को

व्यक्त करती है। जिस अर्थ में काव्य में हाला, प्याला, मधुबाला, मधुशाला आदि का प्रयोग हुआ है, उसका रुढ़िवादी हल्का अर्थ लगा लेना उसके साथ अनर्थ करना ही है। अत: काव्य में मधु भावों के प्रतीक बनकर व्यक्त हुए हैं। खैय्याम के अनुसार ये मधु क्षणिक सुख-भोग का संगी बनकर व्यक्त हुआ है।

रोमांटिक कवियों पर खैय्याम के काव्य-दर्शन का अधिक प्रभाव पड़ा है। खड़ी बोली में खैय्याम की रुबाइयों के कई भावानुवाद प्रकाशित हुए हैं। किन्तु इन अनुवादों में कविवर बच्चन का अनुवाद जन साधारण तक अधिक पहुँचा है। बच्चन का किशोर कवि खैय्याम की मधुशाला से अत्याधिक आकर्षित हुआ था और संभवत: इसके परिणाम स्वरुप आगे उसके काव्य की एक मुक्तधारा ही बह चली। इस प्रकार खैय्याम बच्चन के प्रेरणा स्त्रोत रहे हैं लेकिन उन्होंने अनके जीवन दर्शन को नहीं अपनाया। खैय्याम की रुबाइयां जन्म से लेकर मृत्यु तक की जीवनचर्या को व्यक्त करती हैं। संसार की असारता, भाग्यवाद, शराब की तारीफ, संसार में व्याप्त दु:ख, पश्चाताप और बौद्धिक निराशावाद खैयाम के मुख्य विषय हैं। अत: नि:संदेह बच्चन के मधुकाव्य सृजन का मुख्य आकर्षण खैयाम का काव्य ही है। उनकी तरह बच्चन जी ने भी अपने काव्य में हाला, प्याला, साकी बाला और मधुशाला जीवन की प्रतीक बनाकर उतारे हैं। बच्चन जी की मदिरा गम को गलत करने या दु:ख को भुलाने के लिए नहीं है वह जीवन सौन्दर्य और चेतना की प्रतीक है। बच्चन जी की मधुविषयक कविताओं में मिथ्या धर्मोपदेश के प्रति कटाक्ष एवम् सुरा - सुन्दरी के प्रति भोगवादी पिपासा का खुलकर प्रकाशन हुआ है। उनके काव्यों में जीवन की बाह्य आन्तरिक घुटन है, मन की स्वच्छन्दता के लिए जो मन की छटपटाहट है, पीड़ा है, जो आन्तरिक वेदना है, मदिरा जनित क्षणिक सुख को प्राप्त करने की जो तीव्र लालसा है और धार्मिक सामाजिक रुढ़िबद्ध आचार -विचारों के प्रति घोर विद्रोह है, उसी में हमें कवित्व शक्ति का रहस्य भी निहित होता हुआ दृष्टिगोचर होता है। बच्चन जी के मधुकाव्य में जिन संवेदनाओं का आभास हुआ उन्हीं को अभिव्यक्त करने की चेष्ठा अपने इस अध्याय में की गई है जिनके द्वारा मधु और हाला का भ्रम तो दूर हुआ है और कवि की वास्तविकताओं का परिचय भी मिला है। उनके काव्यों में मुख्यत: संवेदनाएं जो बच्चन जी के हृदय से अभिव्यक्त हुई है, का अध्ययन का प्रयास किया है।

३.१ संवेदना का तात्पर्य

संवदेना मानव के आन्तरिक भावनाओं का उजागर करती है। संवेदना शब्द का जब संधि - विच्छेद किया जाता है, तो प्राप्त होने वाला शब्द होता है सम् अर्थात् समान, वेदना अर्थात् किसी का दर्द। संवेदना एक ऐसा भाव है जो मस्तिष्क से नहीं अपितु हृदय से प्रस्फुटित होता है। बच्चन जी का जीवन निरन्तर संघर्षो से घिरा रहा। जिन्दगी में उन्होंने बहुत कुछ खोया और उससे ज्यादा पाया। खोने-पाने के इस क्रम में उन्हें वक्त से लड़ने की शक्ति मिली। सुख के सुखद समय ज्यादा दिन याद नहीं रहते पर दु:ख के थपेड़े अर्न्तमन में बस जाते हैं। मानव दु:ख का दामन पकड़े रहता है और सुख की प्राप्ति हेतु मृग मरिचिका की भांति यहाँ - वहाँ भागता रहता है।

बच्चन जी ने अपने साथ घटने वाली घटना का सफलतापूर्वक अध्ययन किया और उससे अपने आपको मजबूत किया और जाना कि जीवन दु:ख के प्रति चिन्ता करने का नहीं अपितु उससे मुकाबला करने का नाम है। इसी इच्छा से अभिप्रेरित होकर वे अपने एकांत संगीत में लिखते है ---

एक पत्र-छाँह भी मांग मत, मांग मत, मांग मत
अग्निपथ! अग्निपथ! अग्निपथ! [६१]

संवेदना सिक्के की भाँति मानव के जीवन को प्रदर्शित करती है। जैसे सिक्के के दो पहलू होते है, उसी भांति जीवन के भी दो पहलू होते हैं एक सकारात्मक और दूसरा नकारात्मक दोनों पहलू का प्रभाव उसके जीवन पर पड़ता रहता है। संवेदना बरगद के पेड़ की तरह है जो कि अपने जड़ से निर्माण न कर अपनी शाखाओं से नयी सृष्टि को पुष्पित और पल्लवित करती है।

बच्चन की संवेदना ने सत्य को स्वप्न नहीं अपितु स्वप्न को सत्य बनाने का संदेश दिया है। जयशंकर प्रसाद की निम्न कविता का निर्माण अवश्य ही दु:ख से निर्मित हुआ होगा।

वियोगी होगा पहला कवि,
आह से उपजा होगा गान1
आँखों से निकलकर चुपचाप,
बही होगी कविता अनजान। [६२]

डॉ. गणपति चंद्र गुप्त कुलपति, हिमाचल प्रदेश विश्व विद्यालय शिमला, के अनुसार -

बच्चन जी की कविता में उनके मन की संवेदना इतनी प्रबलता से दिखलाई पड़ती है कि उन्हें शब्दों की लड़ी की कड़ी में पिरोना आसान नहीं है। उनकी रचना पढ़कर पाठकों की स्थिति गूँगे केरी शर्करा खाय और मुसकाय की सी हो जाती है। बच्चन जी की कविता प्राय: आत्मानूभूति से ही प्रेरित होती है। उनकी कविता तात्कालिक बाहरी वाद विवादों एवम् आंदोलनों से प्रेरित होने की अपेक्षा हृदय की गहराईयों में संचित संस्कारों, मानव चेतना की स्थाई रागात्मक प्रवृत्तियों एवं व्यक्ति की अंतरतम् भावनाओं से अधिक अनुप्राणित होती है। [६३]

हिन्दी के शीर्षस्थ समीक्षकों के द्वारा बच्चन साहित्य की एक - एक विधा एक-एक पक्ष प्रवृत्ति को लेकर किया गया विश्लेषण न केवल बच्चन के काव्य के अनेक गौरव पूर्ण आयामों का उद्‌घाटन करता है, अपितु हिन्दी साहित्य की विकास यात्रा के भी अनेक गौरव पूर्ण चरण चिन्हों को प्रकाशित, रेखांकित करता है। इस दृष्टि से बच्चन जी के काव्य पर किया गया अध्ययन हिन्दी आलोचना और अनुसंधान के क्षेत्र में भी एक उपलब्धि के रुप में स्वीकार किया जा सकता है।

बच्चन जी के जीवन संबंधी अवधारणाएँ, जड़ और निश्चल, चिर-परिवर्तनशील रहीं। उन्होंने अपने जीवन में जो भी देखा भोगा, उसी को शब्दों में पिरोकर कविता का स्वरुप दे दिया। पत्नी श्यामा की मृत्यु ने उनके जीवन को अकेलेपन से भर दिया। बहुत समय तक रुध्द बध्द कवि ने स्वभाव के विपरीत एकांत में अपना समय व्यतीत किया। वे अपने ऊपर पहाड़ सा भार महसूस करते थे। पत्नी की मृत्यु ने उनको तोड़कर रख दिया था। जीवन का हर मार्ग उनको एकाकी लगता था। अपनी विरह की वेदना को अपनी लेखनी से उन्होंने शब्द बध्द कर दिया। उन्होंने लिखा है कि श्यामा की मृत्यु के बाद मुझे इस बात का एहसास हुआ कि मेरा आधा अंग कट गया है। जीवन के इस कठिनतम दौर से गुजरते हुए जब वे पुन: लेखन कार्य करने लगे तो उनकी रसमय कविता शहद (मधु) की जगह नमकीन, गमगीन आँसू बहाने लगी। अपनी प्रियतमा के बिछोह ने उन्हे पंगु बना दिया। उनको अपना जीवन नितांत, नि:संग और व्यर्थ प्रतीत होने लगा।

जीवन में हम जिससे इतना ज्यादा स्नेह रखते हैं, उसके न रहते उसकी उतनी ही याद आती है और अकेलेपन का अहसास करवाती है। अपनी इसी विवशता को बताते हुए कवि बच्चन कहते हैं, कि अगर शाम हो रही है तो क्या करुं ? मै घर जाऊँ तो किसके लिए, मेरा है ही कौन इंतजार करने वाला ? श्यामा जी की मृत्यु के उपरांत वे अपने दु:ख को वाणी देते हुए कहते है -

मुझसे मिलने को कौन विकल ?
मैं होऊं किसके हित चंचल ?
यह प्रश्न शिथिल करता पद को,
भरता उर में विहवलता है !
दिन जल्दी-जल्दी ढलता ! [६४]

निशा निमंत्रण द्वारा कवि ने अपने अंतर की पीड़ा को प्रकट किया है। कवि ने संध्या से प्रात: तक की पीड़ा को व्यक्त किया है। प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों की पृष्ठभूमि पर अपने जीवन नि:संगता, शून्यता और व्यर्थता को विभिन्न रुपों में चित्रित किया है। प्रकृति - चित्रण कवि का लक्ष्य नही है, परन्तु तीव्र राग (एकाकी पन) चेतना के कारण कहीं- कहीं प्रकृति का रुप अत्यन्त भावूपर्ण और रेखाएँ बहुत गहरी हो गयी हैं। मंदिर के घण्टे की टन-टन भी हृदय पर तीव्र आघात करती है।

बच्चन जी की वेदनाभूति इतनी हृदय को छूने वाली और इतनी सरल है कि सभी को मंत्र मुग्ध कर देती हैं। कवि अपने एकाकी जीवन का प्रकृति से साक्षात्कार करता है। भाग्य के प्रति कवि को बड़ी गहरी शिकायत है। वह अपने हम उम्र साथियों को परिवार की सुख छाया में घिरा देखता है तो सहज ही अपने एकाकी अस्तित्व के साथ तुलना कर बैठता है और कहता है : -

वे सब साथी ही हैं मेरे
जिनको गृह - गृहिणी - शिशु घेरे
जिनके उर में है शान्ति बसी,
जिनका मुख है सुख का दर्पण!
बीता इकतीस बरस जीवन। [६५]

डॉ. दिनकर सोनवलकर (जीवन के समांतर एक असाधारण काव्य यात्रा**)** शासकीय महाविद्यालय जावरा, मध्यप्रदेश के अनुसार -

बच्चन जी की काव्य यात्रा अपने जीवन के अनुभवों के समानान्तर चलने वाली ऐसी यात्रा है जिनमें कई रंग है, कई मोड़ है, उतार-चढ़ाव हैं और कई खेमें और खूँटे भी हैं । [६६]

जैसा कि उन्होंने इन पंक्तियों में लिखा है . . .

मैं तो इस बेरोक सफर में जीवन के,
इस एक और पहलू से निकल गया।

बच्चन के आत्म संघर्ष में केवल उनका जीवन ही नहीं जगत में होने वाली हर घटना का वर्णन है, जो कि संवेदना से परिपूर्ण है। छोटी से छोटी घटना भी उनके मन की पीड़ा को ध्वनित करती है। वे केवल मधुशाला के ही गीत नही गुनगुनाते हैं, परंतु बंगाल के काल से भी द्रवित हो जाते हैं। उनकी आत्मा का कष्ट वहाँ के लोगो की अवस्था देखकर कविता के रुप में रुपायित हुआ है।

स्वतंत्रता के बाद देश में जो भी अराजकता फैली, भ्रष्टाचार फैला तो उनकी संवेदना आक्रोशित हो उठी। त्रिभंगिमा में उन्होंने इस प्रकार वर्णित किया है ,

टूटे सपने में
किन्तु इनको करुँ मै स्वप्न मेरे काँच के थे।
एक स्वर्णिम आँच में उनको ढला था,
एक जादू ने सँवारा रंगा था,
कल्पना किरणावली में वे जगर मगर हुए थे
टूटने के वास्ते थे ही नहीं वे।
किन्तु टूटे तो निगलना ही पड़ेगा।
आँख को यह क्षुर सुतीक्ष्ण यथार्थ दारुण सहना ही पड़ेगा। [६७]

वास्तविकता कभी कभी यथार्थ की सीमा को नाप लेती है। सपने सदैव टिके नहीं रहते कभी छिन्न भिन्न जरुर हो जाते हैं। उन्होंने अपनी संवेदनाओं को कभी उभरते प्रतिमानों में गढ़ा। उनकी आवाज सुनी और अपनी मन की संवेदना को उनपर उड़ेल दिया। बच्चन को तो सहना और कहना है, देखना और विश्लेषण करना है, भोगना और रचना है, चिन्तन करना है और भाष्य देना है। बच्चन समाज में होने वाले अंधविश्वासों के प्रति भी बहुत संवेदनशील रहे हैं। उनकी कविता में उनका आक्रोश स्पष्ट झलकता है जैसे अब्बरदेवी, जब्बर बकरा इस कविता में अपनी इच्छापूर्ति पर बकरे की बलि वाली प्रथा का मजाक उड़ाया है -

मेरे पूजन आराधन को, मेरे संपूर्ण समर्पण को
जब मेरी कमजोरी कहकर, मेरा पूजित पाषाण हँसा,
तब रोक न पाया मै आँसू । [६८]

बच्चन के काव्य में मानव और जीवन के अनेक रुप अनावृत्त हुए है, अनेक पहलू भी उद्‌घटित हुए हैं, पर कहीं भी किसी भी रुप में मानव और जीवन का तिरस्कार नहीं है। चाहे कितनी ही घनघोर निराशा क्यों न हो, कितना ही कठोर संघर्ष क्यों न हो, वह जीने की ललक नहीं छोड़ पाता है।

जीवन है जीने के लायक,
जीवन कुछ करने के लायक। [६९]

बच्चन के संवेदना काव्य में साधारण भाव तथा उससे भी साधारण पद गीत बन गए हैं। कितनी सरल पंक्तियाँ है जो स्वत: ही जैसे व्यथा में गलकर ढलकर संगीत को मुखरित करते है जैसे :-

कहते है तारे गाते है, साथी सो न, कर कुछ बात
रात आधी हो गई है, कोई गाता मैं सो जाता । [७०]

तब रोक न पाया मैं आँसू जैसी अनेक कविताएँ उनके मन की भीनी संवेदना को प्रकट करती हैं। ऐसे अनेक चरण का वाक्य खंड है जो काव्य की पंखुड़ियों से पराग की तरह छनकर भावों के गंध, पंख फड़का कर, सजल गीत बनकर, हृदय में समा जाते हैं या फिर अब मेरा निर्माण करो तुम्हारा लोह चक्र आया -- अग्नि पथ, अग्नि पथ, अग्नि पथ ---- । प्रार्थना मत कर, मत कर मत कर जैसे अग्नि शलाका से लिखे गए हृदय की कटु मर्म संवेदना में डूबे पद तीर की तरह छट कर जनसाधारण को विस्मय-आहत कर पूछते हैं।

तूम तूफान समझ पाओगे
गंध भरा यह मंद पवन था।
लहराता इसमें मधुबन था
सहसा इसका टूट गया
स्वप्न महान समझ पाओगे ? [७१]

अपने अनुभव के इस सोपान पर खड़े होकर कवि बच्चन जैसे अपनी व्यथा तथा युग के शंका विषाद और निराशा के सागर का मंथन कर उसके जहर को अमृत में बदलने का प्रयत्न करते हैं। संवेदना की जो सरिता उन्होंने बहाई है वह अनवरत कविता के माध्यम से हिन्दी के साहित्य जगत में प्रवाहित हो रही है। बच्चन जी का काव्य वैयक्तिक अनुभूतियों का काव्य है, प्रेम की मधुरता एवम् अल्हड़पन के चित्रण का काव्य है। परिवेश, परिस्थितियों एवम् मन:स्थितियों की भिन्नता के अनुकूल प्रेम की भी भिन्न - भिन्न स्थितियाँ बच्चन जी के काव्य में मुखरित हुई हैं।

३.२ संवेदना पर आधारित काव्य चयन

बच्चन जी ने अपने जीवन की यथार्थता को अपनी रचनाओं के माध्यम से मुखरित किया है। बच्चन की काव्य-चेतना सजग एवं संवेदना वृहद है। कवि बच्चन के काव्य में विशाद, निराशा, हर्ष, आशा, उल्लास, अवसाद, यौवन, मस्ती, प्रेम, मानवता, आल्हाद आदि के स्वर मुखरित हुए हैं। बच्चन जी ने अपनी कविताओं में जीवन के खट्टे - मीठे, सुखद - दुखद अनुभूतियाँ को बहुत ही ईमानदारी से संप्रेषित किया है। संबोधन, मंगलाचरण आदि प्रारंभिक कविताओं के बाद की रचनाओं में

आपने आशा को प्रमुखता दी है। उनका जीवन अनुभव जैसे - जैसे गहन होता है उनकी कविताओं का संप्रेषणीयता, प्रांजलता और प्रयोग धर्मिता में वृद्धि होती गयी। मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश के बाद की कविताएं इसका स्पष्ट प्रमाण हैं।

दीप अभी जलने दे, भाई ! निद्रा की मादक मदिरा पी,
सुख-स्वप्नों में बहलाकर जी, रात्रि-गोद में जग सोया है,
पलक मेरी नही लग पाई ! दीप अभी जलने दे, भाई ! [७२]

मानव की आशावादिता को ध्यान में रखकर वे दीप को जलाए रखने को अनुरोध कर रहे हैं। बच्चन जी कर्मवादी है न कि भाग्यवादी। वे कर्म ही पूजा है वाले सिद्धांत को मानते है। बच्चन जी सभी कष्टों, हर्ष, विषाद के बावजूद भी स्वयं को सहज तथा संतुष्ट मानते थे।

विश्व में वह एक ही है, अन्य समता में नहीं है।
मूल्य से मिला नहीं, वह मृत्यु का उपहार
जीवन खोजता आधार । [७३]

बच्चन जी ने जीवन की खोज का वर्णन किया है कि किस तरह वह आधार की खोज में है। वह मृत्यु का आवाह्न कर रहा है, परंतु उसे प्राप्त करने में असफल रहा है। बच्चन जी ने मृत्यु को इतनी निकटता से जाना है कि वे उसको निमंत्रित कर रहे हैं। उन्होंने जीवन की नि:सारता को नकारते हुए मानवीय जीवन के सारत्व को स्वीकार किया है। उनके काव्य में जन्म, मृत्यु आस्तिक, नास्तिक, आशा और निराशा तथा कल्पना और यथार्थ में द्वन्द स्पष्ट रुप से दृष्टिगोचर होता है।

भोलानाथ तिवारी रीडर, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्व विद्यालय, के अनुसार-

वस्तुत: मेरे विचार में बच्चन वे कवि हैं ही नहीं, जो केवल आसमान का हो। वे तो धरती के लिए हैं पर अनेक स्थलों पर खड़े खड़े उन्होंने आसमान की ऊँचाइयाँ भी नाप ली हैं। वे प्राय: जवानी में प्रेम और जीवन में छिपी संवेदना को शब्द बद्ध कर जीवन को सहज भाव का गीत गाते उदात्तता का स्पर्श इस ढंग से कर जाते हैं, जैसे

उन्होंने कोई विशेष बात कही ही न हो। इसी को दृष्टि में रखकर मैने उन्हें आसमान का कवि कहा है। [७४]

मेरे विचार से बच्चन जी की संवेदना केवल दु:ख के क्षणों में भी बड़ी प्रबलता से दिखाई पड़ती है। उनकी संवेदना के महासागर को नापना एक चुनौती है। हिन्दी साहित्य के जगत के लिए उनके इस संवेदना के सिंधु में दुख, विषाद, नैराश्य, क्रोध, पिपासा, विरक्ति, विरहाग्नि के दर्शन होते हैं। वे सभी संवेदनाएँ काव्य की नाव में बैठकर पाठकों के मन को आल्हादित करती है, मधुकाव्यार्तगत तथा निशा निमंत्रण और आकुल अंतर, एकांत संगीत में दिखाई पड़ती हैं। बच्चन जी मुख्यत: मानव भावना, अनुभूति तथा जीवन संघर्ष के आत्मनिष्ठ कवि है।

संवेदना पर आधारित निम्नलिखित काव्यों का चयन :-

१. मधुशाला (१९३५)
२. मधुबाला (१९३६)
३. मधुकलश (१९३७)
४. निशा निमंत्रण (१९३८)
५. एकान्त संगीत (१९३९)
६. आकुल अन्तर (१९४०)

कविता हृदय और मस्तिष्क की सम्मिलित, सामंजस्यपूर्ण प्रक्रिया का परिणाम है। हृदय अनुभवजनित भावना में विलीन होता है, मस्तिष्क मूलक शब्दों में उसे आकार देता है। अनुभव से तटस्थ रहने पर अभिव्यक्ति सरल, निकटस्थ होने पर कठिन और एकात्म हो जाने पर असंभव हो जाती है।

मेरे अनुसार कवि की महत्ता इसी में है कि वह हृदय और मस्तिष्क को एक-साथ सजग और सक्रिय रखे। पाठक भी इन सभी अनुभवों का भागी होता है, पर मस्तिष्क की उसक प्रक्रिया को नही जान पाता जिसके द्वारा कवि का अनुभव उसे सुगम होता है। इसे जानना समालोचक का कार्य है, जिससे सहृदय होने के साथ ही समस्तिष्क भी होना चाहिए कवि के समान ही समालोचक का हृदय और मस्तिष्क एक साथ सजग और सक्रिय होना जरुरी है।

कल्पना एवं अनुभूति का रागात्मक प्रस्तुतीकरण कविता है। कवि की आत्मनुभूतियों का व्यक्तिनिष्ठ एवं आत्मकेन्द्रित चित्रण एक ओर जहाँ अहंवाद का प्रतिपादन करता है, जो दूसरी ओर अतिशय वैयक्तिक रचनाओं को जन्म देता है । आत्मकेंन्द्रित, अहंनिष्ठ वैयक्तिक कविताओं में प्रेमानुभूतियों की अभिव्यंजना का समावेश सहज हो जाता है। बच्चन जी का काव्य आत्मनिष्ठ तथा वैयक्तिक भावनाओं से सम्पुष्ट होने के कारण प्रेम भावना को प्रबल प्रवृत्ति के रुप में स्वीकारता हुआ इसके विविध स्तरों एवं आयामों को मुखरित करता है। प्रेम का स्वरुप सार्वभौमिक है। काम सहज प्रवृत्तियों से उत्पन्न होता है, तो प्रेम उसी का विकसित एवं परिष्कृत स्वरुप है। साहित्य में विशेषकर पद्य साहित्य में प्रेम का चित्रण अपने अनेक रंगरुपों में मिलता है। बच्चन जी का काव्य भी अधिकांशत: यौवन के प्रथमोन्मेष का काव्य है। कालान्तर में बच्चन के काव्य में प्रेम का स्वरुप किंचित परिवर्तित होता गया तथा अपने फलक में अन्य मानवीय संवेदनाओं को भी समाविष्ट करने लगा।

३.३ बच्चन का मधुकाव्य

हिन्दी काव्य में बच्चन का प्रवेश खैय्याम की मधुशाला के माध्यम से हुआ। सुमित्रानंदन पंत ने उमर खैय्याम की मधुशाला तथा बच्चन जी की मधुशाला में अन्तर स्पष्ट करते हुए लिखा है कि खैय्याम का जीवन दर्शन वर्तमान को पकड़ने एवं भोगने का दर्शन था। कल किसने देखा है, अत: वर्तमान का जी भर कर उपभोग करना चाहिए। ऐसी स्थिति में क्षणिक सुखवाद का सिद्धान्त सहज ही उभर कर सामने आता है। किशोर कवि बच्चन के हृदय में खैय्याम की भावनाओं एवं सुखवाद तथा भोगवाद के दर्शन ने एक विशेष आकर्षण पैदा किया जिसका प्रभाव मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश आदि काव्यों पर पड़ा। उमर की मदिरा जीवन - स्मृतियों की मदिरा है और बच्चन की जीवन स्वप्नों की - एक में अतीत का मधुतित्क मोह है तो दूसरे में भविष्य की सुनहली भावना और आशा है। बच्चन जी का मधुकाव्य रंगों और ध्वनियों का काव्य है, प्राणों के आनन्द विभोर, जीवन का काव्य, यौवन की उन्माद, आकांक्षाओं तथा सौन्दर्य का काव्य है। इन रचनाओं (मधुशाला, मधुबाला और मधुकलश) में भोगवादी प्रेम का चित्रण हुआ है। सौन्दर्यलिप्सा में डूबा हुआ कवि यथार्थ के धरातल की कौंध भी कहीं-कहीं दिखाता है। उसने एक ओर यौवन की लालसा को अपनाया है तो दूसरी ओर उसी स्तर पर सामाजिक संवेदना को भी मुखर करने का प्रयास किया है। बच्चन जी के मधुकाव्य का प्रेम छायावादी प्रेम के शान्ति अमूर्त एवम् अव्यक्त न होकर मूर्त एवम् व्यक्त अधिक है। बच्चन जी आज हमारे बीच जिंदगी के बाद भी जी रहे हैं। उनके अमर काव्य उनके लेख, कविताएँ कुछ न कुछ संदेश देते हैं। परिस्थितयाँ चाहे जैसी भी हों, पर अपने इन्हीं सूत्रों के द्वारा कमल सदा कीचड़ में खिलते हैं और सदैव लक्ष्मी जी के चरणों में स्थान पाते हैं। अपने काव्य में बच्चन जी की तरंगमयी यौन चेतना खुलकर प्रकट हुई। उन्होंने पुरानी रुढ़ियों - जड़ताओं और प्रतिबन्धों को ललकारा और यौवन को गाली देने वाले परम्परावादी समाज को पागल कहा।

प्राय: हालावाद को निरंतर बच्चन जी के मधुकाव्य से जोड़ा गया है। माना कि मधुशाला तथा मधुबाला का संबंध हाला से है, पर इन कृतियों का संदेश उनका मूल स्वर हालावाद से बहुत ऊपर है। यदि हालावाद को मधुकाव्य का प्रतीक मान भी लिया जाये तो वह केवल आशापूर्ण संदेश वाहिनी ही कही जा सकती है। मरने की आस बन सकती है। जैसा कि उन्होंने लिखा है -

लालायित अधरों से जिसने,
हाय, नहीं चूमी हाला,

हर्ष विकंपित कर से जिसने,
हा, न छुआ मधु का प्याला,
हाथ पकड़ लज्जित साकी का,
पास नहीं जिसने खींचा,
व्यर्थ सुखा डाली जीवन की
उसने मधुमय मधुशाला। [७५]

अर्थात् कविवर बच्चन बतलाना चाहते हैं कि जो सामने खड़े सुखद क्षणों को लालायित हो देखते हैं पर पास नहीं जाते, समय का सदुपयोग नहीं करते, सुख के क्षण सामने होते हुए भी उनका उपभोग नही करतें, वे जीवन भर दुख से डूबे रहकर पछताते हैं। मधु हमेशा ही सुखकारी होता है।

छायावाद - रहस्यवाद के गर्त (अंधेरे) को चीरकर मधुकाव्य की उत्पत्ति हुई। छायावादी कवि जेसे जयशंकर प्रसाद, निराला, महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत जी ने अपनी अनेकानेक कविताओं में अपनी सहज भावनाओं को दबे स्वर से कुंठित और अप्रभावी अभिव्यक्ति दी थी। उन लोगों में उस साहस का अभाव था जो मानव भावना को पवित्र मानते हुए बिना आग लपेट के उसे पूरे जोश खरोश के साथ हमारे सामने रख सकें। बच्चन जी ने अपने मधुकाव्य से हिन्दी साहित्य जगत में तथ्य, वास्तविकता तथा कथ्य (कथन) के रुप में अपने मधु जगत का विस्तार किया। इस दु:साहस के लिए बहुत जलील भी किए गए (मधुशाला पृष्ठ 33) पर फल अच्छा मिला जैसा अंग्रेजी में कहा जाता है No gain without pain ऐसा कुछ मधुकाव्य के साथ घट रहा था।

मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश ये कविता संग्रह मधुकाव्य की श्रेणी में समाहित किए गए। मधुकाव्य अपने काल के शीर्ष पर अपने अनेक विरोधियों के विरोधों को झेलते हुए अपना परचम (झंडा) मधुकाव्य के रुप में हिन्दी जगत में आज भी फहरा रहा है। सृजन की दृष्टि से बच्चन जी का मधुकाव्य अपने में मौलिक अधिक है - प्रेरणा कहीं से भी प्राप्त करने का कवि को अधिकार है।

बच्चन जी का काव्य अनुभूति में डूबी हुई आत्मभिव्यक्ति का काव्य है। उनकी अनुभूति की मूल प्रेरणा है, कवि का अपना जीवन। बच्चन एक ऐसे व्यक्ति हैं, जिनका जीवन ही काव्य हैं और ऐसे कवि हैं जिनका काव्य ही जीवन है। उनका काव्य न तो जीवन से पलायन है, न उससे विद्रोह, उसकी समीक्षा भी नहीं। वह तो उनके जीवन का स्पष्ट दपर्ण है। उनका जीवन और काव्य इसी से एक दूसरे का पूरक रहा है। वे व्यक्तिवादी नहीं, पूर्ण वैयक्तिक है । प्रसिद्ध अंग्रेजी कवि ब्लैक के शब्दों में -

विशिष्ट वैयक्तिकता ही काव्य-कला की उच्चतम परिपक्वता है। बच्चन का काव्य भी इसी विशिष्ट वैयक्तिकता की भूमिका पर प्रतिष्ठित हुआ है। [७६]

सहज अभिव्यक्ति और अकृत्रिम सौन्दर्य बोध ही बच्चन जी का काव्य है। उसमें कोई बनावटी और आरोपित संवाद या साज-सज्जा नहीं है। काव्य उनके जीवन की विवशता है जिसमें अनुभूति और अभिव्यक्ति के रचनात्मक तादात्मय का बोध होता है। अनुभूति और अभिव्यक्ति की सच्ची प्रेषणीयता ही बच्चन की काव्य रचना का मूल प्रयोजन है।

बच्चन जी का काव्य सन् १९३० से प्रारंभ होता है और यहीं से तेरह वर्षीय युवक का जीवन संघर्ष भी। जैसे - जैसे जीवन का स्वरुप बदलता गया, संघर्ष के आयाम और संदर्भ बदलते गये। कवि का काव्य भी सजीव छाया की भान्ति उसका अनुकरण करता गया।

उनके काव्य कृतियों में जिन काव्य कृतियों का (मधुशाला, मधुबाला, मधकलश, निशा निमंत्रण और एकान्त संगीत) चयन किया है उनका सविस्तार विश्लेषण किया गया है।

३.३.१ मधुशाला - परिचय

मधुशाला का प्रकाशन आधुनिक हिन्दी काव्य की एक ऐतिहासिक घटना है - इसलिए नहीं कि उसने हालावाद चलाया, वरन् इसलिए कि जितनी लोकप्रियता इस काव्य को मिली उनकी किसी भी कृति को नहीं मिली। इसी के आधार पर बच्चन जी ने कवि सम्मेलनों की एक नई परप्मरा निर्धारित की। वस्तुत: सामान्य पाठकों में हिन्दी कविता को लोकप्रिय बनाकर काव्याभिरुचि जागृत करने का प्रचुर श्रेय मधुशाला को ही है।

मधुशाला बच्चन में यौवन की मस्ती और आल्हाद का मधुकाव्य है। इसकी रचना सन् १९३३ में हुई। इसका प्रथम प्रकाशन सन् १९३५ में किया गया। बच्चन के मधुकाव्य के जगत् में मधुशाला सर्वाधिक लोकप्रिय काव्य रचना है। यह निम्नलिखित पंक्तियों से ही स्पष्ट है -

भावुकता अंगूरलता से खींच कल्पना की हाला,
कवि साकी बन कर आया है भरकर कविता की हाला
कभी न कण भर खाली होगा, लाख पिएँ, दो लाख पिएँ।
पाठकगण है पीने वाले, पुस्तक मेरी मधुशाला। **[७७]**

इसकी कविताएँ सर्वप्रथम बी.एच.यू. अर्थात् बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के शिवाजी हाल में पढ़ी गई थीं। डॉ. मनोरंजन जो कि अंग्रेजी के प्रोफेसर थे, उन्होंने इस कार्यक्रम के सभापति का पद सुशोभित किया था। यह छायावाद के अस्त तथा हालावाद के उदय का काल था। आज तक मधुशाला की जितनी प्रतियाँ बिकी हैं, शायद ही किसी काव्य संचय की बिकी होंगी। प्रारंभ से आज तक मधुशाला को बुरा कहकर उपहास करने वाले, उसकी उपेक्षा करने वालों की कमी नहीं रही है, पर सबसे अधिक कवि सम्मेलनों में चुना जाने वाला काव्य यही था। इनकी रचनाओं में ऐसी कशिश थी कि विरोधी और प्रेमी दोनों एक साथ झूम उठते। शायरी इस काव्यसंग्रह की विशेषता थी। इस प्रकार बच्चन और मधुशाला एक दूसरे के साथी थे।

मधुशाला बीसवीं सदी की एक ऐसी कृति है जो देश की विभिन्न भाषाओं में अनुवादित की गई। खड़ी बोली की पहली काव्य कृति होने का श्रेय इसे प्राप्त है। इसमें की कृतियों में मानव तक की जो संवेदनाएँ प्रकट हुई है, वे अकथनीय है, इसका अनुवाद अंग्रेजी में भी हुआ। इस काव्य संग्रह पर उमर खैय्याम का प्रभुत्व जान पड़ता है। डॉक्टर जयप्रकाश भाटी जी के अनुसार मधुकाव्य जो कि उमर की मूलरचना है,

उसका अनुवाद राष्ट्रकवि स्व. मैथिलीशरण गुप्त और स्वर्ण चेतन के सुमित्रानंदन पंत ने भी भावानुवाद किया था पर जो मान-सम्मान बच्चन को मिला था वह अतुलनीय था। खैय्याम ने निराशा में रुवाईयाँ रचीं, बच्चन ने उसे आशा का रुप दे दिया था। खैय्याम की मधुशाला में भोगवाद के दर्शन होते है पर बच्चन जी की मधुशाला में भोगवाद न होकर समाजसुधार और क्रांतिकारी विचार हैं।

बच्चन जी ने अपनी कालजयी रचना मधुशाला की रचना कर हिन्दी साहित्य जगत के प्रांगण में खलबली मचा दी थी1 एक ऐसी धारा बहा दी थी जो केवल हमारे लिए ही नही परंतु पूरे हिन्दी के साहित्य जगत के लिए नई थी। जो नया देखने की चाह रखते थे। बच्चन जी ने उस बदलाव को कर दिखाया। हमारी यहाँ की संस्कृति के लिए भी अनापेक्षित बदलाव था। जिसने बच्चन जी को हिन्दी साहित्य जगत के आसमान पर चमका दिया था। इसका निर्माण भी घनीभूत पीड़ा से हुआ था। कई लोगों ने इस पर बड़े आक्षेप लगाए। मधुपान करने वालों के लिए लिखी गई कविता कहा1

सन् १९३५ में जब इसका अर्विभाव हुआ तो बच्चन रातों रात हिन्दी काव्य जगत के शीर्षस्थ कवियों की श्रेणी में जा बैठे।

मधुशाला के बारे में श्री अमिताभ बच्चन जी कहते है मुझे मधुशाला जीवन की शाला लगती है। उन्होंने (बच्चन) हिन्दी की साहित्यधारा में एक नई धारा का प्रवर्तन किया । इस हालावाद में उन्होने सिर्फ मदिरा का बखान नहीं किया है किन्तु मधुशाला के माध्यम से जीवन को समझाया है, जीवन के मूल सिद्धान्तों पर रोशनी डाली है।

मधुशाला में कई स्थानों पर विभिन्न संवेदनाओं को कवि बच्चन ने अलग-अलग संदर्भों में प्रस्तुत किया है। कहीं जाति, धर्म, मंदिर, मस्जिद, पंडित-मुल्ला, पादरियों में से किसी को नहीं बक्शा है। जाति धर्म के विचारों को गिराने के लिए मधुशाला का निर्माण किया। भाई चारा बढ़ाने में भी मधुशाला सहायक बनी रही। जैसे बच्चन जी ने लिखा है . . .

मुसलमान औ हिन्दू हैं दो,
एक मगर उनका प्याला,
एक मगर उनका मदिरालय,
एक मगर, उनकी हाला;
दोनों रहते एक न जब तक

मस्जिद - मंदिर में जाते;
बैर बढ़ाते मस्जिद - मंदिर
मेल कराती मधुशाला! [७८]

मधुशाला के भाव और स्वर की तरंगमयी गूँज सारे देश में फैल गयी। जितनी तीव्र गति से बच्चन जी का नाम हुआ शायद इतना ज्यादा किसी कवि का हुआ हो और यह बिना कारण नहीं हुआ। पूरी सहजता, स्वच्छता और स्पष्टता के साथ मानव हृदय की मूल काम चेतना इस रचना में खुलकर अभिव्यक्त हुई है। जिस प्रकार मधुशाला में सादापन, भावना और ताजगी के तत्व इसमें एक साथ दिखाई पड़ते हैं, वैसा शायद ही किसी दूसरे काव्य में मिले हों। नि:संदेह मधुशाला ही वह रचना मानी जा सकती है जिसे बच्चन का काव्य प्रारम्भ कहा जाय। जनमानस ने भी बच्चन जी के इस काव्य में स्वर मिलाया। यही कारण था कि जितनी लोकप्रियता इस महाकाव्य को मिली उतनी शायद ही किसी को मिली हो।

मधुशाला का मूल स्वर मस्ती का है यह मस्ती एक आयु, वर्ग काल तक सीमित न रहकर गहन भावों, कल्पनाओं और विदग्धता की सहज अभिव्यंजना है। इस काव्य में व्यक्ति, समाज, राष्ट्र, दर्शन तथा साहित्य के स्वर नई दिशा में मुखरित हुए। जीवन-मृत्यु के बंधनों से जकड़ा मानव कब तक इससे मुक्ति होने के लिए छटपटाता रहेगा। यही छटपटाहट, दु:ख-दर्द, बेचैनी अन्दर और बाहर के घुटन उन सबको तोड़कर अन्तर्मुखी प्रदान करने वाली दिशा की खोज है। इसी से प्रेरित होकर कवि बच्चन ने मस्ती और अल्हड़ता की ऐसी मधुर मनभावन तान बजाई है, कि अत्यन्त सरस एवं सरल पठनीय और स्वाभाविक संगीत में डूब कर पाठक श्रोता अपने जीवन के समस्त गम भूल कर इसमें मदमस्त हो जाते हैं। बच्चन जी का मानना था, कि वाह्य परिस्थितियाँ कितनी भी कठिन क्यों न हो अगर व्यक्ति के अन्दर की शक्ति रहती है, तो वही चेतना उसके जीवन में मदिरा बन जाती है। यह समाज की कुप्रथाओं, जीवन में आने वाली हर कठिनाई, हर बाधा से लड़ने की प्रेरणा प्रदान करती हैं।

कवि बच्चन मधुशाला के द्वारा जन मानस को एक संदेश देना चाहते है कि जीवन संघर्षों से हार मानने का नाम नहीं है, बल्कि विपरीत परिस्थितियों में लड़कर ही जीवन की नौका किनारे पर आती है। समाज में ऐसे भी लोग है जो दिगभ्रमित करना चाहेंगे, लेकिन अपना एक रास्ता बनाना और उस रास्ते पर दृढ़ निश्चय होकर बिना झुके, बिना थके मार्ग पर चलते रहना चाहिए। अपने विश्वास और श्रद्धा के बल पर अपने आराध्य को प्राप्त किया जा सकता है।

मदिरालय जाने को घर से
चलता है पीने वाला,
किस पथ से जाऊँ ? असमंजस
में है वह भोला भाला;
अलग-अलग पथ बतलाते सब
पर मैं यह बतलाता हूँ -
राह पकड़ तू एक चला चल,
पा जाएगा मधुशाला। [७९]

३.३.२ मधुशाला का अनुशीलन

मधु शब्द का अर्थ ही मीठा होता है, जो मन को तृप्त करे। बच्चन जी की मधुशाला उतनी ही मीठी थी। इसमें कवि ने दु:ख -दर्द, छटपटाहट, बैचेनी, बाह्य और आंतरिक घुटन उन सभी को अपनी संवेदना की कड़ियों के रुप में प्रस्तुत किया है।

बच्चन जी कहते है कि ईश्वर के अलग-अलग रास्ते हैं, लेकिन विश्वास और श्रद्धा से कोई भी एक रास्ता पकड़ कर चले जाएँ तो मनचाहे रुप में अपनी मंजिल मिल ही जाती है।

धर्म ग्रंथ सब जला चुकी है
जिसके अंतर की ज्वाला,
मंदिर, मस्जिद, गिरजे सबको
तोड़ चुका जो मतवाला
कर सकती है आज उसी का
स्वागत मेरी मधुशाला । [८०]

इसका आनंद वे ही उठा सकते हैं, जिनके दिलों में भेदभाव और विषमता का भाव न हो। जो मंदिर- मस्जिद के चक्कर में नहीं पड़ते उसी का यहाँ स्वागत है।

भाग्यवादी स्वर के साथ-साथ कवि का क्षणवादी स्वर भी मस्ती के हिंडोले झूले पर बहुत झूला है। जीवन में सुख-दुख महत्वपूर्ण होता है। जब दु:ख के थपेड़े पड़ते हैं, तब इस संसार में अन्याय अनीति की मार पड़ती है। जिस के जीवन की मस्ती में तराबोर मधु का मतवाला अपनी मधुशाला से मस्ती पाकर, प्रेरक शक्ति पाकर सब कुछ सह जाता है।

सजें न मस्जिद और नमाजी कहता है अल्लाताला,
सजधज कर, पर, साकी आता, बन ठन कर, पीने वाला,
शेख, कहाँ तुलना हो सकती मस्जिद की मदिरालय से,
चिर-विधवा है मस्जिद तेरी, सदा-सुहागिन मधुशाला! [८१]

बच्चन जी की जन्मशती पर इलाहाबाद में आयोजित संगोष्ठी में वक्तओं ने कालजयी रचना मधुशाला सर्जक हरिवंशराय बच्चन को याद किया। संगोष्ठी के प्रथम दिवस ही प्रख्यात समालोचक व कथाकार निर्मल जैन ने कहा था, कि 'स्व. बच्चन जमीन से जुड़े आदमी थे। अंगेजी के विद्वान व प्राध्यापक होने के बावजूद हिन्दी के प्रति उनका समर्पण प्रेरणास्पद है। उनका उद्देश्य अपनी कविताओं को श्रोतओं तक पहुँचाना रहा है। बच्चन की उस दौर में लोकप्रियता चरमबिंदू पर थी। जब हिन्दी के मध्यकाल पर निराला, पंत, महादेवी वर्मा प्रसाद जैसे सूर्य पूरी प्रखरता के साथ अपनी आभा का बिखेर रहे थे।'

बच्चन जी ने शराब और मयखाने के माध्यम से प्रेम, सौंदर्य, दु:ख, मृत्यु और जीवन की सभी झाँकियों को शब्दों में पिरोकर जिस खूबसूरती से पेश किया उसका सुंदर नमूना और कहीं मिलता। उनकी लेखनी ने हमेशा आम आदमी के लिए सरल और सहज भाषा में लेखन किया।

मधुशाला की रचना के बाद हिन्दी के साहित्य जगत में साधारण और सहज भाषा में कविता रची जाने लगी। बच्चन जी की किसी व्यक्तिगत आंदोलन से नहीं जुड़े थे। उन्होंने हर विधा को अपनाया।

इंदौर के हिन्दी साहित्य अधिवेशन के दौरान गांधीजी ने हाला, प्याला की बातें सुनकर बच्चन जी से सवाल किया कि सुना है आप अपनी कविताओं के जरिये शराब के सेवन का प्रचार-प्रसार कर रहे हो। गांधीजी को बच्चन जी से यह शिकायत थी कि वे मधुशाला के जरिए मद्यपान का प्रचार कर रहे हैं। यह वह समय था जब मधुशाला अपनी लोकप्रियता की चरम सीमा पर थी। उनकी मधुशाला की रुबाइयां लोगों की जुबान पर चढ़ी थी। मधुशाला की सीढ़ियाँ चढ़कर बच्चन हिन्दी के साहित्य जगत में उतने ही लोकप्रिय हुए जितने की हिन्दी फिल्मों की दुनिया में उनके पुत्र अमिताभ बच्चन।

जब महात्मा गांधीजी को मधुशाला की कविताओं में निहित अर्थ समझाया गया तब उनका भ्रम दूर हो गया कि बच्चन शराब का प्रचार नहीं कर रहे हैं। वे समझ गए कि मधुशाला की कविताएँ यौवन और मस्ती की परिचायक है। परंतु यह मधुशाला का दुर्भाग्य है कि पिछले पचास वर्षों में भी हिन्दी के आलोचकों का भ्रम दूर नहीं हुआ है, जिसके चलते वे बच्चन को बड़ा लेखक मानने को तैयार नहीं हैं।

बच्चन जी की रचनाओं के संपादक तथा हिन्दी के प्रख्यात कवि अजित कुमार का कहना है कि मधुशाला के कारण उनके साथ त्रासदी यह हुई थी कि वे न तो प्रगतिशीलों को पसंद आये न ही प्रयोगवादियों को, जबकि मधुशाला इस शताब्दी की सबसे अधिक बिकने वाली काव्यकृति है। अब तक इसके ५० से अधिक संस्करण निकल चुके हैं। परंतु विडंबना यह है कि इसे आज भी पाठयक्रम में शामिल नहीं किया गया है। बीसवीं सदीं में हिन्दी की कोई ऐसी पुस्तक नही है जिसके इतने संस्करण निकले हो, प्रेमचंद का गोदान पाठयक्रम में हो सकता है। लेकिन देवकी नंदन खत्री की चंद्रकांता की संतति के बाद मधुशाला ही ऐसी कृति है, जिसने अहिंदी प्रदेशों में भी लोगों के भीतर हिन्दी में आकर्षण पैदा किया है। सन् १९४९ से बच्चन जी के सम्पर्क में रहे अजित जी का कहना है कि बच्चन एकमात्र ऐसे कवि है , जो अपने प्रथम काव्य से ही हिन्दी काव्य के आसमान पर सूर्य जैसा छा गए। कवि बच्चन की मधुशाला के शब्दों के धागे इतने सीधे थे जो अपने श्रोतओं को बांधते चले गए और काव्यास्वादन करवाने लगे।

समाज के व्याप्त आडंबर त्योहारों की धुन को उन्होंने कुछ इस प्रकार व्यक्त किया है, अपनी मधुशाला में -

एक बरस में एक बार ही, जगती होली की ज्वाला,
एक बार ही लगती बाजी, जलती दीपों की माला,
दुनियावालो, किन्तु, किसी दिन आ मदिरालय में देखो,
दिन को होली, रात दिवाली, रोज मनाती मधुशाला। [८२]

कविवर **सुमित्रानंदन पंत** ने लिखा है . . बच्चन की मदिरा चैतन्य की ज्वाला है, जिसे पीकर मृत्यु भी जीवित हो उठती है। बच्चन की मदिरा गम गलत करने या दुखः भुलाने के लिए नहीं है, वह शाश्वत जीवन सौंदर्य तथा शाश्वत प्राण चेतना - शक्ति की प्रतीक है। [८३]

बच्चन जी ने जब भावों की मधुशाला का सृजन किया तो उसमें व्यक्ति साक्षेप प्रतिक्रिया के साथ समाज की प्रवृत्तियों को भी झकझोरा। उन्होंने एक ओर दुनिया भर की ठोकर खाकर ही मधुशाला का गान किया, तो दूसरी ओर तात्कालिन सामाजिक विसंगतियों और धार्मिक कुंठाओं को विद्रोह जनित स्वर में हमारे सामने रखने का प्रयास किया है। बच्चन जी का कवि मन कह उठता है कि मानवता के धरातल पर यद्यपि मुसलामन और हिन्दू दोनों एक हैं, मगर सारे झगड़े मंदिर - मस्जिद तक ही सीमित हैं।

कवि बच्चन जी ने छुआछूत की ओर भी मधुशाला के अंतर्गत हमारा ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है और लिखा है कि यह भावों की मधुशाला ही है जो सौ सुधारकों का काम अकेले करती है। मानव-मानव के बीच के भेद को कम करती है ।

कभी नही सुन पड़ता इसने हा, छू दी मेरी हाला,
कभी न कोई कहता उसने जूठा कर डाला प्याला,
सभी जाति के लोग यहाँ पर, साथ बैठकर पीते हैं,
सौ सुधारकों का करती है, काम अकेली मधुशाला। [८४]

यह कवि जीवन की वास्तविकता है, कि कविता का आगमन अन्तर मन से या आत्मवेदना या आत्मानूभूति से होता है। अपनी इस रुबाई में सरल पक्तियों से वे अपने मन की अभिलाषा व्यक्त कर रहे हैं -

मदिरा पीने की अभिलाषा ही बन जाए जब हाला,
अधरों की आतुरता में ही, जब आभासित हो प्याला,
बने ध्यान ही करते - करते जब साकी साकार, सखे,
रहे न हाला, प्याला, साकी, तुझे मिलेगी मधुशाला। [८५]

बच्चन जी को पूर्ण विश्वास था कि समय से पहले, और मुकद्दर से अधिक न मानव ने कुछ पाया है न ही पाएगा। अपनी कविता संग्रह मधुशाला की निम्न रुबाई में लिखा है कि, अपने भाग्य से मानव नही लड़ सकता है।

लिखि भाग्य में जितनी बस
उतनी ही पाएगा हाला,
लिखा भाग्य में जैसा बस
वैसा ही पाएगा प्याला,

लाख पटक तू हाथ-पाँव, पर
इससे कब कुछ होने का,
लिखी भाग्य में जो तेरे बस
वही मिलेगी मधुशाला।[८६]

मधुशाला को पढ़कर हमने देखा कि वास्तव में उनके काव्य का मूलस्वर मस्ती का है, यह मस्ती बच्चन के अर्न्तमन की मस्ती है। जिसकी कामना, वासना, भावना और कल्पना तथा उसकी सभी प्रकार की जीवनगत लालसाओं को इस रुढ़िवादी समाज ने कुचल दिया। मधुशाला का अध्ययन करने पर हमारे समक्ष उनका साहत्यिक, दार्शनिक, राष्ट्रीय, व्यक्तिवादी और सामाजिक दृष्टिकोण परिलक्षित होता है।

साहित्यिक दृष्टि से मधुशाला के अन्तर्गत्, प्रतीकों एवम् रुपकों का आधार लेकर छायावादी काव्यधारा को अपने काव्य में प्रवाहित किया। उन्होंने सिन्धु को घट और जल को हाला तो कहीं बादल साकी और भूमि मधुशाला, वर्षा को मदिरा और मधुऋतु को मधुशाला कहा है।

दार्शनिक दृष्टिकोण से मधुशाला को हालावादी काव्यकृति कहा गया है, जो मेरी दृष्टि में उपयुक्त नहीं है, क्योंकि कवि ने अपनी मधुवादी कृति में हाला, प्याला, मधुबाला आदि के माध्यम से उसी तरह धार्मिक असहिष्णुता, कट्टरता एवम् कठोरता को चुनौती दी है। बच्चन जी की दृष्टि में ईश्वर का सर्वोच्च स्थान है, जहाँ पहुँचने के लिए विद्वान पंडितों ने अलग अलग राह सुझाये हैं लेकिन बच्चन जी ने केवल एक ही राह बताई और वह राह है मधुशाला, मानो मधुशाला ही उनका गूढ गंभीर ग्रन्थ हो।

बच्चन जी ने मधुशाला के माध्यम से समाज में, जनता में देशवासियों में बलिदान, त्याग और अपनत्व अर्पण करने की प्रेरणा को सजग किया है। मधुशाला में अन्तरनिहित राष्ट्र-प्रेम की भावना के फलस्वरुप ही देशभक्तों और स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों और बलिदानियों ने अपने मन के अन्दर एक नवीन क्रान्ति व नवीन प्रेरणा शक्ति का अनुभव किया था।

बच्चन जी ने संसार के उन समस्त क्षीण, शूद्र, दुर्बल मानव जाति के प्रति, अपनी सच्ची सहानुभूति प्रकट की है, जो कि जीवन में सदैव प्रतिपल, काल के कठोर एवम् निर्दयी प्रहारों को सहन करते हैं। बच्चन जी ने व्यक्ति के जीवन की दु:खमय

स्थिति को अपने ध्यान में रखते हुए दु:खमय जीवन का सहारा हाला को बताया है और रोग की दवा मधुशाला को माना है।

मधुशाला का अध्ययन करते हुए प्रतीत हुआ कि इसकी सभी रुबाइयाँ प्रतीकात्मक है, इन रुबाइयों में कवि ने हाला, प्याला, सुराही और साकी को प्रतीक बनाकर सामाजिक रुढ़िवादिता एवम् नैतिकता के विरुद्ध अपनी आवाज को जिन्दा किया और साथ ही उस समय के जन-जीवन में व्याप्त निराशा, असन्तोष, अर्कमण्यता आदि को खुलकर चुनौती दी। समाज में निरन्तर भेदभाव की भावना उग्र रुप धारण कर रही थी। समाज में ऊँच-नीच, अस्पृश्य-स्पृश्य और छुआछूत का बोलबाला था। समाज में नित्य ही नवीन वर्गों की संख्या बढ़ती जा रही थी जिसके फलस्वरुप समाज की संगठित शक्ति व एकता भिन्न-भिन्न होती जा रही थी। इस प्रकार मधुशाला अथवा मदिरा को समाज के खोखले आदर्श अथवा आडम्बर के विरुद्ध प्रतीक रुप में यदि हम माने तो उसके भूल में हमें कवि की व्यक्त-आसक्ति, उसकी अस्मिता की ही प्रतिध्वनि हर ओर टकरा-टकरा कर प्रतिध्वनि होती दिखाई देगी।

जहाँ तक मैं मानती हूँ बच्चन जी की सारी मधुशाला को मानवीय संवेदना, भावना अर्थात् अनुभूति का काव्य कहा जा सकता है। यही कारण है उसमें मन के सारे राग-आवेग की प्रवृत्तियों के दर्शन किये जा सकते हैं। उन सभी का वर्णन उन्होंने सरल और सहज भाषा में मधुशाला में किया है। मानव के हृदय से निकली अनुभूतियाँ मानव जाति के हृदय की परिचारिका हैं। संवदेना की अभिव्यक्ति अनुरूप सहज और सरल शब्दावली में इस प्रकार व्यक्त की गई है -

मेरे साकी में सबने, अपना प्यारा साकी देखा,
जिसकी जैसी रुचि थी, उसने वैसी देखी मधुशाला। [८७]

जिसके मन में मधुशाला के प्रति रुचि थी, आस्था थी उसे ही मधुशाला प्रिय लगी अर्थात् सुन्दरता देखनें वालों की आँखों में है, न कि रखी वस्तु में। मधुशाला को जिसने जिस दृष्टि से देखा वैसा ही पाया।

बच्चन जी को सर्वत्र सृष्टि के हर कण में प्रियतम साकी के सुन्दर दर्शन होते हैं। मधुशाला में आये प्याला, साकीबाला आदि शब्दों का उन्होंने प्रतीकात्मक रुप में प्रयोग किया है, मधुशाला ऐसा काव्य है, जिसमें धर्म दर्शन, मानवीय संवेदना के गूढ़ रहस्य समाहित है। जैसे -

जीवन के संताप, शोक सब इसको पीकर मिट जाते;
सुरा - सुप्त होते मद-लोभी, जागृत रहती मधुशाला! [८८]

जीवन के सुख दुख को यदि मानव भूलना चाहता है, तो उसे सुरा का सहारा लेना पड़ता हैं, जिसमें आन्तरिक लोभ, चाह भी सुप्त नहीं होता, वह अविरल रहना चाहता है। मन की कामेच्छा को शान्त करने में भी कवि की मधुशाला सक्षम है। मधुशाला के गीतों में केवल प्रणय भाव या कुष्ठा ही नहीं है अपितु मधुशाला के गीतों के माध्यम से समाज, जनता वे देशवासियों में बलिदान, त्याग और समर्पण का भी समावेश है।

बच्चन जी ने मधुशाला में समाज, धर्म को जीर्ण-शीर्ण रुढ़ियों को तोड़ने का श्री गणेश कर देशवासियों को क्रान्ति की प्रेरणा दी और सरल व बोधगम्य भाषा में लिखी गई मधुशाला के माध्यम से बच्चन जी ने अपनी अनुभूतियों का एक स्वस्थ पथ तैयार किया। लेकिन आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी मधुशाला को बेकार युवकों के लिए एक प्रलोभन मानते है। डा. शिव कुमार मिश्र के अनुसार बच्चन जी ने इसमें अपनी निराशा, मस्ती और मौज के कृत्रिम आवरण में प्रकट की है। वस्तुत: मधुशाला सभी दृष्टियों से एक क्रान्तिकारी रचना है। सुमित्रानंदन पंत ने तो इसे नवीन स्फूर्ति, प्रेरणा और आनन्द-चैतन्य भर देने वाली कृति कहा है। **डा. कृष्णचन्द्र पंडया** के मत से मधुशाला सौन्दर्योपासक बच्चन के जीवन-प्रेम रस से लबालब भरा मादक प्याला है। [८९]

मेरे अनुसार जो भी मधुशाला में लिखा गया वह कोई मिटा नहीं पाएगा। अनागत भविष्य में अमीर-गरीब, मालिक-नौकर, हिन्दू-मुस्लिम, पंडित-मौलवी का मेल अगर किसी काव्य कृति द्वारा किया गया तो वह है बच्चन जी की मधुशाला।

मुझे लगता है कि हिन्दी साहित्य जगत के भास्मान सूर्य हरिवंशराय बच्चन जी को हिन्दी साहित्य में वह जगह न मिल पाई जिसके वे हकदार थे। उनका काव्य जगत समुद्र की तरह अथाह था, जिसमें उन्होंने सारे हिन्दी साहित्य जगत को डूबो रखा था। उनकी मधुशाला में प्रेम की मस्ती, घनीभूत निराशा, धर्म नैतिकता के प्रति विद्रोह और सामाजिक सरोकार दिखाई पड़ता है-

उदाहरणार्थ :

बिना पिए जो मधुशाला को,
बुरा कहे, वह मतवाला
पी लेने पर तो उसके मुँह
पर पड़ जाएगा ताला। [९०]

अर्थात् वे कहते हैं बिना अनुभव के किसी बात का निर्णय करना कठिन है, बिना आनंद की अनुभूति को अनुभव किए उसका वर्णन करना असंभव है। मधु पीकर ही उसके स्वाद की अनुभूति की जा सकती है।

मधुशाला में १३५ रुबाईयों का संकलन किया गया है। इस पढ़ते हुए श्रोता अपने को मधुरस में तराबोर पाता है। मैंने यह महसूस किया कि हर कवि अपने काल परिवेश का आइना होता है जो अपने अगल-बगल होने वाली पीढ़ी को उसका रुप वर्णित कर बतलाता है। बच्चन जी अपने युग के एक अखंड कवि माने जाते थे। ७-८ दशक पूर्व उन्होंने अपनी मधुशाला के माध्यम से धर्म, जाति, वर्ण भाषा के भेद को मिटाने की शंख ध्वनि का जोरदार नाद किया। अगर कोई समाज, राष्ट्र, या धर्म पर भारी पड़ने वाला काव्य रच सका तो वे थे कविवर बच्चन । जिसके किए उन्हें बहुत कुछ सहना पड़ा। मधुशाला का निर्माण उन्होंने एकता, सर्वधर्म समभाव की ईटों से सजाकर बनाया था। सभी तीज त्योहारों ने गले लगाकर उसका स्वागत किया था। उन्होंने जिस नई धारा का सूत्रपात किया था, वो अब भी अविरथ हमारे दिलों में बह रही है।

कभी कभी मैं ऐसा, अनुभव करती हूँ कि यदि कवि बच्चन जी की कविताओं का विश्व की विभिन्न भाषाओं में अनुवाद करवाया गया होता तो अवश्य ही वे नोबल पुरस्कार के हकदार होते।

उनकी मधुशाला बिहारी के व्यंग्योक्तियों से कम नहीं थी। जिसमें हर रुबाई संदेश देती है। मैं समझती हूँ यदि इसे पाठ्यक्रम में शामिल किया जाता तो यह छात्रों पर बहुत अच्छे संस्कार डाल सकती थी, क्योंकि इस रचना में समाज में फैली सामाजिक रुढ़ियां तोड़ने का आवाहन किया गया है। सामाजिक वैमनस्य की भावना फैलाने वाले तत्वों के विरुद्ध बच्चन जी ने अपनी आवाज उठायी है। हमारी सामाजिक कुरीतिओं से बचने के लिए मधुशाला एक गाइड है, निर्देशिका है।

३.३.३ मधुबाला - परिचय

मधुकाव्य की श्रृंखला में मधुबाला बच्चन जी की दूसरी काव्य रचना है। इसका रचनाकाल १९३४ से १९३५ क बीच का था। कवि बच्चन जी की अनुभूति से संचित जिन भावों का क्षरण मधुशाला में हुआ था, वह अधूरा था। वह क्षरण मधुबाला में काफी कुछ पूरा हो गया और शेष मधुकलश में हुआ। जब मधुबाला का सृजन बच्चन जी कर रहे थे, तभी छायावाद के विरोध में प्रगतिवाद की चर्चा और उन यत्र-तत्र चल रही थी। उसी दौरान श्यामा जी का स्वर्गवास हुआ और उन के बिछोह के क्षण बच्चन जी के लिए बेहद त्रासदायक थे। उन क्षणों में भी बच्चन जी ने कविताओं की रचना की। बिडम्बना कहें या दुर्भाग्य, लोगों ने उन्हें समझने की चेष्ठा नहीं की।

बच्चन जी ने अपनी मधुबाला कृति के आठवें संस्करण की भूमिका में लिखा है कि कविताएँ तो मैंने उच्च कोटि की लिखीं, पर जनता में उसे समझने की बुद्धि ही नहीं है। मुझे समझने वाली जनता का अभी जन्म ही नहीं हुआ। मुझे तो लोग दो सौ बरस बाद समझेंगे। मेरी कविताएँ तो इतनी मौलिक हैं कि उसे परखने के लिए एक विशेष वर्ग का पाठक चाहिए।

मधुबाला का स्वरुप बहुत विस्तृत नहीं है। उसमें बच्चन जी १५ कविताओं का संकलन दिया है, जिसके अन्दर अलग-अलग रुबाइयों का समावेश किया गया है। पहली कविता मधुबाला से अन्तिम कविता आत्म परिचय तक मधुबाला के हर रुप के दर्शन अलग-अलग प्रकार से दिखाई देते हैं। मधु की वर्षा करती मधुबाला, मालिक मधुशाला के यहाँ पहुँच कर मधुवायी बनकर दुखियों के दुख हरती है, पथ के गीत गुनगुनाती है, थके-हारे पथिक को मधु का शीतल स्वाद चखाती है, सुराही की सौंधी खुशबू से ललचाती है और जब प्याले में उड़ेली जाती है , तो क्षण भर में पीने वाला मस्ती में खो जाता है, हाला तो प्रतिपल अपना परिचय देती है, पाखंडों को दूर भगाने का प्रयत्न करती है। मानव को मानव के पास लाने की कोशिश करती हैं। जाति-धर्म के बोझ से मुक्ति दिलाती है, जीवन तरुवर पर झूमने का अवसर भी देती है, प्यासों की प्यास भी बुझाती है, दुनिया की परवाह भी नहीं करती। बुलबुल के डालों पर बोलने पर मुस्कराती है, उसके सुरीले कंठ का सम्मान करती है,इस पार के प्रेमी उस पार का नजारा देखने के लिए मचल उठते है पाँच पुकार सुन कर घबरा जाते हैं, जब पियो-पियो की बोली सुनते हैं तब मधुबाला की जगध्वनि सुनकर फिर विव्हल हो उठती है और अपना परिचय इस प्रकार दे देती है।

मधुबाला की हर कविता में नपा-तुला सा सन्देश है। मधुशाला की भांति ही इसमें भी सामाजिक, धार्मिक व नैतिक बन्धनों को काटते हुए मनुष्य मात्र को उसके

अधिकार सौंपने के लिए छटपटाहट है। मधुबाला काव्य संग्रह संसार की तमाम मुश्किलों को भुलाकर मस्ती और उल्हाद में डूबने का आमन्त्रण अपने पाठकों को दे रही है। मधुबाला नारी के उस कोमल रुप को दिखाती है, जो सारे दु:ख और तापों का हरण करके सुख देने वाली है। अँधेरे में रोशनी दिखलाकर पथ को उजाला देकर पथिक को सही राह दिखलाती है।

मधुबाला में बहुत सी कविताएँ बच्चन जी ने व्यक्तिऔर समाज के झूठे आडम्बरों को तोड़, मन की संवेदना को प्रमुखता दी है। उनका मानना है कि यह संसार नश्वर है, जितनी भी जिंदगी मिली है, उसे जी लो। कल क्या होगा, यह कोई नहीं जानता । मालिक मधुशाला कविता उसका सर्वोत्तम उदाहरण है।

मधुबाला की लिखी हर पंक्ति हमारे अर्न्तमन को हिला देती है। सुंदरी मधुबाला अपने तप यौवन से सबको मदमस्त तो करती है पर यह भी बतलाती है कि वह केवल छलावा है, वह मन की आग को शान्त करने में असमर्थ हैं। मधुबाला जीवन का असली गान है। इस कृति पर उमर खैय्याम की रुबाइयों का पर्याप्त प्रभाव है। फिर भी खैय्याम के निराशावाद से कवि बचा है और उसमें जीवन के आशावादी, सुखद और रचनात्मक पक्ष को उभारा है। चार दिन की चाँदनी भी जीवन का सत्य है, भले ही वह अल्पायु ही क्यों न हो। कहना न होगा कि वह सुख अल्पायु होने के कारण ही सर्वाधिक सम्मोहक होता है।

३.३.४ मधुबाला का अनुशीलन

मैं चित्त चुराने वाला हूँ,
मैं ही मालिक मधुशाला हूँ। [९१]

मधुबाला की **मालिक मधुशाला** कविता में, बच्चन जग जीवन और समाज के सभी प्रतिबंधों को अंगूठा दिखाते हुए मदिरा-मस्ती का संदेश सुना रहा है। एक अभाव ग्रस्त कुंठित दमित पारम्परिक लालसा पीड़ित पीढ़ी है, जिसके अधिकतर सदस्यों को मालिक मधुशाला जान पहचान गया है, कि वे मदिरा की मस्ती की उत्कट कामना रखते हैं। वे चाहकर भी कामना पूर्ण नहीं कर पाते हैं।

मधुबाला के पद मन को पीड़ा दे जाते हैं -

कटु जीवन में मधुपान करो,
जग के रोदन को गान करो,
मादकता का सम्मान करो। [९२]

मधुबाला की कविताओं में प्रतीक रुप में मधु संबंधी उपकरण, इसी आक्रोश विद्रोह को ध्वनित करते जान पड़ते हैं। इस नजरिये से अगर देखा जाय तो अगली मधुपाई कविता संवेदित कही जा सकती है। जो धार्मिक, सामाजिक, नैतिक, दार्शनिक तथा आध्यात्मिक कमजोर पक्ष पर आघात करती है। मधुपाई (मधुपान) करने वाले वे व्यक्ति है, जो अपने वर्तमान समाज में सब तरफ पाखंडों और आडंबरों का जाल फैला हुआ देखते हैं। उन्हें मधुपथ ही ऐसा मालूम होता है जो बदनाम और आपत्ति जनक ही सही पर वास्तविकता से भरपूर है, जहाँ पुण्य के पीछे पाप नहीं लगता। जहाँ सच के पीछे झूठ नहीं होता। जहाँ आदर्श के नाम पर अनीति या आपत्ति की व्यथा कथा नहीं होती। जहाँ संवेदना में मारकता नही झलकती, यहाँ केवल पाखंड के प्रति आक्रोश नजर आता है। बच्चन जी उन युवाओं का पथ प्रदर्शन कर रहे हैं जो पाखंडी पोथी-पत्राधरी पंडितो के चालिकता का बहिष्कार करते है। जीवन के वास्तवकिता के दर्शन करवाने के लिए वे लिखते है -

हमने छोड़ी करकी माला, पोथी पत्रा भू पर डाला,
पथ भ्रष्ट जगत को मस्ती की, अब राह बताने हम आये। [९३]

कवि बच्चन का नश्वरतावाद दृष्टिकोण यहाँ भी अभिव्यक्त हुआ है। कवि की मधुशाला वाली संवेदना मधुबाला में भी बनी हुई है।

मधुपाई कविता की शब्द योजना में छायावाद भाषा - भंगिमा के क्षरित होने का पता ही नहीं चलता परंतु यहाँ से भाषा एक नवीन लोक प्रचलित साँचे में ढली हुई मालूम पड़ती है, जैसे-

'बस हम दीवानों की टोली मदिरालय के दरवाजों पर आवाज लगाने हम आए'

'खुले खजाने जीवन का सौदा खत्म करें मुक्ति हमें मिल जाए सस्ती'

इत्यादि। [९४]

मधुबाला की प्रत्येक कविता का अंतिम पद सदैव प्रभाव पूर्ण लगता है। बच्चन जी की अधिकतर कविताओं के अंतिम पद में ही कविता का मुख्य सार समझ में आता है केन्द्रीय भाव भी प्रकट होता है।

सुराही में कवि बच्चन ने कामेच्छा का वर्णन किया है। इस कविता में पुरातन काल से चली आ रही कामेच्छा मानव की वेदना, संवेदना को छलावा देती आ रही है। सत-रज-तम इसमें अधीन है। तम गुण इसका दास है। सतोगुण इसमें शिकार है। रजो गुण इसका स्वामी है, (बच्चन और कवि) अगर दूसरे शब्दों में कहा जाय तो सुराही और मानव की माया एक ही समान है। जिसमें जिंदगी की अभिलाषाओं तथा अतृप्ति विविध रंगों की झलक झलकाने वाली, झिलमिल-झिलमिल लौ जलती है, किन्तु बच्चन जी जानते है कि विश्व इसकी क्षणभंगुरता की सूक्ष्मतम संवेदना को भी नहीं समझ पाता। उनका मन केवल कविता में मधुपान को प्रचार मात्र नहीं मानता पर जीवन की वास्तविकता को भी दिखलाता है।

तुमने समझा मधुपान किया ? मैंने निज रक्त प्रदान किया!
उर क्रंदन करता था मेरा, पर मुख से मैंने गान किया!
मैंने पीड़ा को रुप दिया, जग समझा मैंने कविता की! [९५]

आलोच्चय कविता में भाषा बोलचाल की है। प्रतीक रुप में सुराही का कथन जर्जर यथार्थों व आडम्बरों के प्रति विद्रोही व्यक्ति का तीखा स्वर है।

मधुबाला की प्रथम पांच कविताओं को पढ़कर लगता है कि कवि बच्चन ने इनकी रचना के समय अपने मन के आवेग संवेग को मन में रचा बसा कर लिखा है जैसे -

था एक समय, थी मधुशाला,
था मिट्टी का घट, था प्याला,
थी, किन्तु, नहीं साकी बाला,
था बैठा ठाला विक्रेता दे बंद कपाटों पर ताला।
मैं मधुशाला की मधुबाला । [९६]

मिट्टी का घट और प्याला मानव की आत्मा व शरीर का प्रतीक है पर अंतर का सुख आनंद मधुशाला में बंद है और उसकी मालकिन से साकीबाला के रुप में उसमें कैद है, बाहर आना चाहती है पर परिस्थितियाँ उसे बाहर नहीं आने देती है।

मधुबाला की रचना में मध्यकालीन, झूठे धर्माडम्बरों, नई राजनीतिक विषमताओं, जर्जर सामाजिक परम्पराओं, रीतियों, नीतियों के प्रति कवि विद्रोह भड़काकर समाजमें बदलाव लाना चाहता है -

उद्दाम तरंगों से अपनी, मस्जिद, गिरजाघर देवालय।
मैं तोड़ गिरा दूँगी पल में, मानव के बंदीगृह निश्चय।
जो कूल, किनारे, तट करते, संकुचित मनुज के जीवन को।
मैं ठहा-बहा दूँगी क्षण में, पाखंडों के गुरु गढ़ दुर्जय। **[९७]**

जाति धर्म के नामर पर होने वाले आडंबरों पर करारा व्यंग्य किया गया है, इस प्याला कविता शीर्षक में जो दिखता है वह होता नहीं, जो होता है वह दिखता नहीं, अंतर्मन के आक्रोश को, जाति धर्म के नाम पर होने वाले बंटवारे से नाखुश कवि ने अपनी मंशा (इच्छा) व्यक्त की है।

हाला शीर्षक कविता में हाला मनुष्य जीवन की तीव्र इच्छा का प्रतीक है। उपरोक्त पंक्तियों से यही स्प्ष्ट होता है।

मधुबाला वस्तुत: जीवानुराग के पक्ष में धार्मिक नैतिक और सामाजिक पाखंडों के प्रति इतना अधिक विद्रोही स्वर, इस कविता में पहली बार दिखलाई पड़ा है।

मधुबाला की **जीवन तरुवर** शीर्षक कविता अस्तित्ववादी दृष्टिकोण से अत्यंत सशक्त और सुंदर कविता है। यह जो जीवन का तरुवर इस कविता में दिखाई पड़ता है। कवि के रचनारत जीवन का प्रतीक है। पहले पद में जीवन की सुंदरता को बनाए रखने का सुंदर तरीका मंड़ित किया गया है। दूसरा पद शिव अर्थात् कल्याणकारी कर्तव्य साधना की व्यंजना है और सबसे महत्वपूर्ण अंतिम पद में सभी तरह की मुश्किलों में जीवन में अस्तितव को सक्षम बनाए रखने तथा आत्मसम्मान की खुशी में लिप्त रहने की मधुर व्यंजना है। कवि बच्चन और व्यक्ति बच्चन के जीवन के रचनात्मक पहलू का सहज आभास इस कविता में पाठक के सामने खुलकर आया है। जीवन और व्यक्ति के अस्तितव की रागात्मक ध्वनिका उद्घोष इस कविता में कही क्षीण नही लगता . . .

विपदाओं की अंधवायु में, तने रहो, जीवन की तरुवर !
अपने सौरभ की मस्ती में सने रहो जीवन के तरुवर । **[९८]**

मधुबाला की **प्यास** शीर्षक कविता में प्यास मानव की तृष्णा का प्रतीक है। इस जीवन तृष्णा की व्यापक परिभाषा के लिए बादल, बिजली, निर्झर, सरिता, सागर आदि प्रकृति रुपों का प्रयोग किया गया है। तृष्णा मन की प्यास आवेग की व्यापकता सिद्ध करने के लिए तरह, तरह के प्रतिमानों का उपयोग किया है। 'प्यास' शीर्षक कविता की मूल शक्ति लघुमानव की असीम तृष्णा और उसमे अनंत संघर्षमयी - प्रणय के भावों - अभावों में है।

जिस -जिस उर में दी प्यास गई, दी तृप्ति गई उस-उस उर में;
मानव को ही अभिशाप मिला,पीकर भी दग्ध रहे छाती। **[९९]**

बुलबुल शीर्षक कविता में बुलबुल व्यक्ति की स्वच्छंदतावादी अभिव्यक्ति का प्रतीक है। इस कविता में प्रकृति के प्रति कवि ने मन की संवेदना को प्रतीकों के माध्यम से अपनी भावनाओं द्वारा व्यक्त किया है। कवि का मन रागात्मक अभिव्यंजना के लिए बहुत उच्च आस्था रखता है। इस बुलबुल के गले में क्रांति का राग भी है। इस राग से हमें प्यार भी होना स्वाभाविक है क्योंकि,

हमें जग-जीवन से अनुराग, हमें जग-जीवन से विद्रोह;
इसे क्या समझेंगे वे लोग, जिन्हें सीमा-बंधन का मोह। **[१००]**

इस जीवन में रागावली में बुलबुल की तन्मयता पूर्णत: समर्पित है न वह निंदा से नाराज होती है, न प्रशंसा से फूलती है। बस सबकुछ भूलाकर गाना ही उसका ध्येय है। बुलबुल दु:ख-दर्द भूलाकर अपने मोहक गीत लोगों तक पहुँचाकर उनके मनों को प्रसन्नता देने की चाह रखती है।

करे कोई निंदा दिन रात, सुयश का पीटे कोई ढोल,
किए कानों को अपने कंद, रही बुलबुल डालों पर बोल। **[१०१]**

इस पूरी कविता में भाव - तन्मयता है और शब्द योजना सरल और सरस है। मधुबाला की पाटल माल कविता इसकी सबसे दुर्बल या कमजोर रचना है। इस कविता का छठा पद वस्तुत: जीवन का एक मार्मिक एवम् भाव संकुल सत्य व्यक्त करता है -

नयन से नीरव जल की धार, ज्वलित उर का प्राय: उपहार।
हँसी से होता है व्यक्त, कभी पीड़ित उर का उद्‌गार। **[१०२]**

इस पार उस पार शीर्षक कविता बच्चन जी की लोकप्रिय कविताओं की श्रेणी में आती है। मधुशाला के बाद इसने बहुत प्रसिद्धि पाई। शायद ही कोई जानता हो कि इस लोकप्रिय कविता में कवि जीवन की कितनी आत्मानुभूति आत्म्पीड़न की चीत्कार सुनाई पड़ती है। पूरी कविता में इस पार के प्रति सिसकती आसक्ति है और उस पार के लिए गहरा संताप है। इस कविता में क्षयग्रस्त जीवन का विषाद, अपूर्ण सुखभोग के प्रति छटपटाहट, पूर्णभोग के लिए अदम्य लालसा, निर्मम काल, कठोर कर्म और कटु जगत के प्रति घोर चिंता व भय आदि संचारी भावों का ऐसा मेल है, कि कविता हृदय को तीव्रता से मथती चली जाती है।

इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा! [१०३]

मधुबाला पर छायावादी काव्य ने इस पार के आकर्षण के काल्पनिक उपकरणों से अपने आप को इतना उदात्त बना दिया था कि दुनिया के दु:ख सुख का सहज स्वर यहाँ नहीं सुनाई पड़ता था। शायद यही कारण था कि बच्चन ने इस पार - उस पार शीर्षक इतनी लम्बी कविता रची जिसमें रुमानियत भी है, वास्तविकता भी, किन्तु दोनों ही एक दूसरे की पोषक है।

उन मृदु चरणों का चुंबन कर,
ऊसर भी हो उठता, उर्वर
तृण-कलि-कुसुमों से जाता भर! [१०४]

इस कविता में आशावाद समाया है, भावनाओं का आवेग है, सूत्रबद्धता, कल्पना, कोमलकांत पदावली और गेयता के गुणों के शुद्ध समन्वय के सौंदर्य से मंडित है। इसमें कहीं रुकावट नहीं आती। इसमें प्रसन्नता की लहरियाँ लहरा रही हैं। इस कविता में मुक्त मनोरम कल्पना और जीवन के राग - रास से युक्त कविता में भी इस तरह की काल्पनिकता बहुतायत पाई जाती है। जैसे जायसी के पद।

मधुबाला की अंतिम १५ वीं कविता आत्म परिचय शीर्षक से है। इसमें कवि ने अपने काव्य सृजन के सूक्ष्म हेतुओं का संकेत दिया है। जीवन के अभाव ही जैसे बच्चन जी काव्य के माध्यम से साकार हुए हैं। कवि अपूर्ण संसार से मुक्ति पाने के लिए वह सपनों का स्वरचित संसार लिए फिरता है। फिर भी शांति नहीं पाता क्यों कि सत्य हमेशा कठोर होता है, सपने सदैव कोमल होते है, पर जब वे सत्य से टकराते हैं तो पानी के बुलबुले से फूट जाते है, शायद इसी को लोग गाना या छंद कहते हैं।

स्पष्ट है कि अपने आत्म परिचय वाली कविता में कवि ने अपने जीवन के वास्तविक पहलू को पाठकों के समक्ष रखा।

महादेवी वर्मा भी मन की संवेदना को लोक कल्याण से जोड़कर कहती हैं -

मेरे हँसते अधर नहीं, जग की आँसू लडियाँ देखो।
गीले पलक छुओं मत मेरे मुरझाई कलियाँ देखो।

जयप्रकाश भाटी के अनुसार संवेदना के संसार में बच्चन जी अपनी रचनात्मक और विघटक आवश्यकताओं के अनुसार ही जी पाता है। व्यक्ति के मनोविज्ञान ग्रंथ में व्यक्त 'इ-औनोकायला' के इस विचार प्रकाश में यदि मधुबाला के कवित्व की प्रतिक्रिया को समझा जाय तो सूक्ष्मत: बच्चन के रचना क्रम और कवि के विघटक जीवन का अन्योन्याश्रित संबंध ध्वनित हुआ लगता है।' [१०५]

बच्चन जी अपने जीवन में मधु की मादकता के अस्तित्व को व्यापक नहीं मानते, वह तो सिर्फ उसे स्वप्न सा क्षणिक मानते हैं। कवि की कविताओं और उसके सृजक के साथ-साथ उसका व्यंग्यकार भी जागरुक हो गया है। 'पथ का गीत' मधुमार्ग पर चलने वाले पथिकों का गीत है। इसका कवि एक ऐसा कवि है जो जीवन पथ की भ्रान्ति मिटाता है। जीवन रुपी मधुशाला में यदि हाला न होकर हलाहल भी होगा तो पीने वालों को अपने अस्तित्व पर आत्मविश्वास है कि वह उसे पी लेंगे। जीवन पथ की भ्रान्ति और अस्तित्व के बीज ओर व्यक्तित्व के वृक्ष को इस प्रकार स्पष्ट किया है -

सुन्दर-सुन्दर गीत बनाता, गाता, सबसे नित्य गवाता,
थकित बटोही का बहला मन, जीवन-पथ की श्रान्ति मिटाता। [१०६]

मधुबाला काव्य विशेषता की दृष्टि से पाठकों को उतनी नहीं भायी जितनी मधुशाला। पर उसमें के प्रतीक दबे घुटे परेशान- हैरान रहे। वे विद्रोही बन कर अपनी आंतरिक भावनाएँ तरह-तरह से प्रकाशित करते हैं। जिस समय हिन्दी के साहित्य जगत में मधुबाला का आगमन हुआ तब देश अपनी आजादी के लिए परकटे पक्षी सा फड़फड़ा रहा था। आजादी के लिए अहिंसात्मक आदर्शोन्मुख संघर्ष के परिणामों से कोई जीत की उम्मीद नहीं लग रही थी। भावुक मन, जन, मन के अंतर में विषाद और विद्रोह के साथ के कुंडली मार फन फैलाए बैठे थे। बच्चन के कवि मन ने तब मानसिक तनावों से मुक्ति पाने हेतु मधु के स्वरों का सहारा लिया। पारिवारिक

परिस्थितियों तथा विषम परिस्थितियों ने इस मधुबाला के लिए रचनाएँ रचवाई। अगर मधुशाला से मधुबाला की तुलना की जाए तो कल कल छल छल करती हुई मधु-सरिता का धीमा-मीठा प्रभाव दिखाई पड़ता है, पर मधुबाला में यही अभिव्यक्त भावातिरेक में आई बाढ़ जैसा तेज और खल-खल लगता है। मधुबाला के भावों का क्षेत्र व्यापक नहीं है। वहाँ की मधु की खेती नर्म नाजुक कोमल कन्या सी प्रतीत होती है। यहाँ मधुबाला की भाषा अल्हड़ना किए है। मधुबाला में जो भी स्वर है, वह साफ और सुलझे हुए हैं। उसकी लपेट में जहाँ भी जीवन की कोई वास्तविकता आ गई है, तो वह मनके अंत:स्थल को छू जाती है। मधुबाला में रचित कविताएँ एक दूसरे की प्रतिद्वंदी न होकर एक दूसरे की सखी सी लगती हैं। जैसे पग ध्वनि इस पार- उस पार ।

जब मैं मधुबाला का अनुशीलन कर रही थी तब मैंने अनुभव किया मधुशाला और मधुबाला में दीये और बाती का मेल है। दोनो एक दूसरे के बगैर आधी अधूरी हैं। मधुशाला में अगर मधुबाला न होती तो साकी प्याला रिक्त रह जाते। मधुबाला की पहली रुबाई से इसका अंदाजा लग गया।

मैं मधुबाला मधुशाला की,
मै मधुशाला की मधुबाला!
मैं मधुविक्रेता को प्यारी,
मधु के घट मुझ पर बलिहारी,
प्यालों की मैं सुषमा सारी,
मेरा रुख देखा करती है,
मधु प्यासे नैनों की माला।
मैं मधुशाला की मधुबाला! **[१०७]**

मैंने जब मधुबाला को पढ़ा तब सोचने पर विवश हो गई कि, शब्दों को अन्य कवियों की तरह बच्चन जी ने घूमा-फिरा कर काव्य नहीं निर्मित किया अपितु उन्हें शस्त्र बनाकर उनके अंतर को झकझोर कर रख दिया। इसमें यौवन की तरंगो की वाणी दिखाई पड़ती है। आशा, उल्लास के प्रतिमान उभरकर सामने आए हैं। इस काव्यसंग्रह में प्याला नामक कविता सर्वोच्च कोटि की प्रतीकात्मक रचना कही जा सकती है। हालांकि इसपर उमर खैय्याम जी के रुबाइयों का बहुत अधिक असर था, पर बच्चन जी ने उनके निराशावाद को इस मधुबाला में आशावाद के रुप में प्रस्तुत किया है। जैसे सुख दुख बनकर रहता है। मैं समझती हूँ कि मधुबाला अल्पकाल के लिए ही थी पर बहुत रसीली और मीठी थी। श्रोता इसके आँचल में सुख की अनुभूति पाते हैं जैसे -

इस नीले अंचल की छाया
मैं जग-ज्वाला का झुलसाया
आकर शीतल करता काया,
मधु-मरहम का मैं लेपन कर
अच्छा करती उर का छाला।
मैं मधुशाला की मधुबाला। [१०८]

'प्याला' नामक कविता को मैं सर्वश्रेष्ठ मानती हूँ क्यों कि उसके द्वारा बच्चन जी ने मानव के नश्वर शरीर की कल्पना को साकार किया है अपनी इस रुबाई से

बस एक बार पूछा जाता,
यदि अमृत से पड़ता पाला;
यदि पात्र हलाहल का बनता,
बस एक बार जाता ढाला;
चिर जीवन औ चिर मृत्यु जहाँ,
लघु जीवन की चिर प्यास कहाँ। [१०९]

हम सभी जानते हैं कि यह देह नश्वर है, पर उसमें का मन चंचल है। असंख्य जीवन क्रमों में नर देह एक लहर की तरह मिलती है। कैसे जिया जाए प्याला इसी जीवनक्रम की प्रक्रिया स्पष्ट करता है।

'प्याला' कविता मधुबाला के संग्रह की सर्वोच्च प्रतीकात्मक कविता मेरे अनुसार कही जा सकती है। प्याला कविता में प्याले का भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयोग किया गया है। [११०] जैसे . . .

1. प्याला - हृदय के प्रतीक स्वरुप में -
मधुर भावनाओं की सुमधुर नित्य बनाता हूँ हाला
भरता हूँ इस मधु से अपने अंतर का प्यासा प्याला।

2. प्याला- हृदय की समान अनुभवों के रुप में -
मुसलमान और हिन्दू दो हैं
एक मगर उनका प्याला ।

3. प्याला - नश्वरता का भी प्रतीक है -

क्षीण क्षुद्र क्षणभंगुर
दुर्बल मानव मिट्टी का प्याला।

4. प्याला - भाव और विचारों के स्वरुप (प्रतीक) में

कितनी आई और गई थी
इस मदिरालय में हाला,
अब तक टूट चुकी है कितने
मादक प्यालों की माला।

प्रतीकों को माध्यम के स्वरुप में प्रकटित करना बच्चन जी जैसे कवि की सबसे बड़ी उपलब्धि थी। मधुबाला काव्य संग्रह के द्वारा उन्होंने अन्यान्य प्रतीक प्रस्तुत किए हैं। अपने इस मधु बोल काव्य संग्रह में उन्होंने सुंदर और प्रखर शैली अपना कर अपने भावों को सशक्त प्रतीकात्मक रुप में श्रोता और पाठक के सामने रखा। कही भी भाषा को अशिष्ट नही बनने दिया है। व्यंग्यात्मक बोध कराना ही इनका मुख्य उद्देश्य था। इस पूरे काव्य संग्रह में उन्होंने सजगता और व्यंग्यनिष्ठा का परिचय दिया है। आज भी इसी व्यंग्य के रुप का बोलबाला है, जिसका प्रयोग सतर्क बच्चन ने मधुबाला में किया था। डॉ. जीवन प्रकाश जोशी के शब्दों में इतनी मुक्त मनोरम कविता और जीवन के राग-रस से युक्त कविता मुझे खड़ी बोल काव्य में दूसरी पढ़ने को नहीं मिली। निष्कर्षत : भाषा, शिल्प, शैली और गेयता की दृष्टि से यह काव्यकृति समृद्ध है।

३.३.५ मधुकलश - परिचय

मधुकलश की कविताएँ सन् १९३५-३६ में लिखी गई और सन् १९३७ में प्रकाशित हुई। इसके पूर्व मधुकाव्य की श्रृंखला में मधुशाला व मधुबाला प्रकाशित हो चुकी थीं। यह मधुकाव्य की अंतिम काव्य पुस्तिका थी। मधुकलश की कविताओं का मूल स्वर अस्तित्ववादी है। मधु का इस कृति में विशेष वर्णन केवल मधुकलश नाम की पहली कविता में ही हुआ है। बच्चन जी के सुख-दु:ख के पल, प्रेम-उन्माद के क्षण, निराशा-अभाव और विषाद में काव्य की अभिव्यक्ति उन्होंने करीब करीब मधुशाला और मधुबाला में सर्जित की। अपनी कविताओं के माध्यम से इस काव्य कृति की रचना के समय बच्चन जी के छोटे भाई की बच्ची की मृत्यु हो गई थी। बच्चन जी भी बच्चे नहीं थे। भाई की पत्नी भी देखते - देखते चार महिने बाद काल गाल में समा गई थीं। डाक्टर ने बताया कि बच्चन जी को क्षयरोग (T.B.) हो गया था। कविता रचने की ताकत ने हिलोरे लेना शुरु किया । उसी समय अपने भूतकाल की बातों से प्रेरित हो 'अतीत का गीत', 'मरघट' और 'हलाहल', जो हाला का विरोधी था, मेरे मन में यह विश्वास करा चुका था कि मुझे ये रोग मार नहीं सकता, यही मेरी अमरता का सबूत बनेगा और वही हुआ।

हलाहल से की है पहचान, लिया उसका आकर्षण मान,
मगर उसका भी करके पान, चाहता हूँ मै जीवन दान। [१११]

मधुकलश की रचना के पूर्व कवि बच्चन जी ने मरघट और अतीत का गीत अधूरा लिखकर छोड़ दिया था। यह ऐसा समय था जब मधुकाव्य को लेकर हिन्दी साहित्य जगत में बवंडर उठ रहे थे। मधुकलश की रचना का काल और परिस्थितियाँ दोनो ही बच्चन जी के लिए विषम थीं।

इधर मैं और मेरे परिवार के लोग दुर्भाग्य, मौत और बीमारी से सन्त्रस्त और आतंकित थे, उधर साहित्य की दुनिया में कलम और जबान दोनों ही मेरे खिलाफ चल रही थीं और कलम की काली करतूतें तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं की कलमों में अब भी जीव धारी खजाने की तरह ईर्ष्या, द्वेष, अहंमन्यता और स्पर्धा के सर्पों की संरक्षता में बंद पड़ी हैं। कोई मेरे उद्‌गार को वासनामय बताता, कोई मेरा उपहास उड़ाता तो कोई मुझे पथभ्रष्ट कहता। [११२]

श्यामा जी उस समय तपेदिक से पीड़ित थीं, पर सदैव बच्चन जी को कविताएँ लिखने के लिए प्रोत्साहित करती रहती थीं, जैसे ही बच्चन जी की तबीयत पहले से कुछ ठीक हुई, श्यामा जी ने चारपाई पकड़ ली और उसी पर अंतिम विदा भी ले ली। ऐसे आँधी - तूफान में मधुकलश का जन्म हुआ है। अंतत: श्यामा जी की मृत्यु के बाद ही इसका प्रकाशन हो पाया और बच्चन जी ने इसे श्यामा जी को समर्पित किया था।

मधुकलश में कई स्थानों पर उच्छृंखलता से भी गीत रचित हैं, उनकी बहुत आलोचना भी की गई। उन पर अनेक आक्षेप लगाए गये। उन सभी आलोचनाओं की फिक्र न करते हुए कवि बच्चन ने शुद्ध कविता स्वरुप में अपने ऊपर किए गए आक्षेप को कलम बद्ध किया। उन्होंने बतलाया कि रक्त और शराब को एक तुला (नाप) पर तौलने वाले महापंडित कितने पथभ्रष्ट हैं।

देखे भीगे होंठ मेरे, और कुछ संदेह मत कर,
रक्त मेरे हृदय का है, लगा मरे अधर ओं । [११३]

मैं मानती हूँ कि एक दार्शनिक जो चिंतन मग्न हो, उसे पागल कहने में जो भूल होती है ठीक वही भूल, आलोचकों ने बच्चन को पियक्कड़ मदिरा प्रचारक आदि कहने में की है। यहाँ सभी समीक्षक अपनी बुद्धि की उर्वरता भूलकर बंजरता ही स्पष्ट करते हैं।

कवि का उपहास भी मधुकलश की महत्वपूर्ण रचना है। जिन लोगों ने बच्चन की रचनाओं में वासना तथा निराशा देखी है, उनकी अनेक कविताएँ उसका मुँहतोड़ जबाब देती हैं। उन्होंने कभी भी अपने आपको महान कवि नही कहलवाना चाहा। उनके अनुसार अपने को समझने की शक्ति मनुष्य के अंदर बहुत महान होती है। जब मानव अपने अंतर मन को जान लेता है, तब उस पर की गई सभी आलोचनाएँ बर्फीली हो जाती हैं। मधुकलश की माझी कविता बच्चन जी के जीवन जीने की प्रवृत्ति को तवज्यो (प्रधानता) देने का संदेश दे रही है।

अवनि - अंबर की तराजू सामने रख दी गई है,
क्यों न तोलूं आज अपनी, शक्ति इस पर गर्व से धर। [११४]

मधुकलश व्यक्ति की विवशता के प्रति खीझ और आक्रोश के रागात्मक पदों-छन्दों में रुपायित करने का प्राणवंत प्रयास हे। उनकी विशेषता है कि इनमें संयम है, तटस्थता है, सहृदयता, सहजता और भावत्वता व सबंद्धता है।

जीवन में दोनों आते हैं, मिट्टी के पल, सोने के क्षण,
जीवन से दोनों जाते हैं, पाने के पल, खोने के क्षण । [११५]

मधुकलश के गीतों की उर में प्रतिध्वनित होती हुई यह कराह, यह चोट, यह चीत्कार कृति को लोकप्रियता प्रदान करती है। कवि मानवीय सहज आकांक्षाओं एवम् भावनाओं को खूब समझता है और उनकी कद्र करता है। बच्चन जी ने इतने पर भी जीवन के किसी पक्ष के प्रति नकारात्मक या उपेक्षा के भाव व्यक्त नहीं किये। कवि बच्चन की यही बात जो मेरे मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डालती है। एक आदर्शवादी आलोचक कुछ भी कहे पर युग की भीतरी-बाहरी विषमताओं को कवित्वमय वाणी देने में बच्चन की मधुकलश कृति ने कमाल किया है। इसके गीत कुछ लम्बे अवश्य हैं किन्तु विषय की दृष्टि से इनमें तन्मयता की ताल तथा स्वर लहरी का तार झंकृत होता प्रतीत होता है। मधुकलश के गीत पढ़ते हुए लगता है कि सहसा एक सपनिल समां बदल गया है, कि समाज ने एक सुखी दिल का झंकृत तार एक झटके में तोड़ दिया है और आभास करवाया है कि अब उस साज से चिंगारियां फूट पड़ेगी। वैसे तो मधुकलश सामाजिक परिवेश में व्यक्ति के अस्तित्व का तीखा भाव-बोध कराता है। मधुकलश के गीतों में व्यक्ति की मस्ती का नहीं अपितु उसकी कभी न मिटने वाली हस्ती तथा हौंसले का नाद है। मधुकलश अस्तित्ववादी दर्शन का गीतमय रुपान्तर है। उसके गीतों में गजब की गति है। कवि प्रत्येक मानसिक घात-प्रतिघात द्रुतता, एकतानता एवं तन्मयता के साथ ध्वनित करता जाता है। व्यक्ति के निषेधात्मक भाव-बोध को जितनी शक्ति के साथ मधुकलश में व्यक्त किया गया हे, उसका अन्यत्र जवाब नहीं है।

मधुकलश के गीतों में प्रतीक-रुपकादि का भावसंगत विशिष्ट प्रयोग हुआ है। सभी गीतों में सजीव चित्रों की सृष्टि मानसिक पटल पर सहज ही अंकित होती जाती है -

आज अपने स्वप्न को मैं सच बनाना चाहता हूँ,
दूर की इस कल्पना के पास जाना चाहता हूँ,
कुछ विभा उस पार की इस पार लाना चाहता हूँ। [११६]

बच्चनजी की कविताओं की यही विशेषता रही है कि जब पाठक उन्हें पढ़ता है, उस स्थिति के साथ स्वयं को तादात्मय करने लगता है और कल्पना लोक में विचरण

करने चला जाता है। मधुकलश के लम्बे गीतों की यह विशेषता रही है कि वह अपने आप केन्द्र से विश्रृंखलित नहीं होते। आलोचकों ने शायद यहाँ दृष्टिपात नहीं किया लेकिन मुझे लगता है कि मधुकलश इसी विशेषता के कारण खड़ी बोली के गीत-काव्य में अद्वितीय स्थान है।

मधुकलश का व्यक्तिवाद निश्चय ही व्यक्ति के अस्तित्ववादी दर्शन का शक्तिशाली राग बनकर मुखरित दर्शन का शक्तिशाली राग बनकर मुखरित हुआ है। सामाजिक मर्यादा के आतंकित हो उसे तुच्छ बतलाकर हम अपनी आत्महीनता के शिकार होने का अपराध करते हैं।

निष्कर्षत: मधुकलश के गीत व्यक्ति जीवन की साहसिकता, महत्वाकांक्षा का राग मुखरित करते हैं। कवि बच्चन जी ने इस प्रकार संकेत दिया है -

राग के पीछे छिपा चीत्कार कह देगा किसी दिन,
हैं लिखे मधुगीत मैंने हो खड़े जीवन-समर में। **[११७]**

३.३.६ मधुकलश का अनुशीलन

मधुकलश का मूल स्वर लघुमानव-मुखरित कहा गया। अपने अस्तित्व, अपने वजूद का बोध कराने वाला काव्य है, जो दु:ख, संवेदना से कहीं ओत प्रोत हो गया है। बच्चन जी की कृति मधुकलश संवेदनापूर्ण है।

अन्तरनिहित चुभन व टीस है। अब मधुकलश की यात्रा में कवि मिट्टी के पल और सोने के क्षण दोनों का अनुभव करने लगा है।

मधुकलश की दूसरी कविता 'कवि की वासना' शीर्षक से है। इस कविता को लिखने के जड़ में पंडित बनारसी दास चतुर्वेदी की एक टिप्पणी थी, जो उन्होंने बच्चन जी की कविताओं के विषय में 'विशाल भारत' नामक पत्रिका में लिखकर प्रकाशित करवाई थीं। उसी के प्रति उत्तर में बच्चन जी ने 'कवि की वासना' कविता 'सरस्वती' पत्रिका को भेज दी थी। उस कविता के साथ यह नोट भी भेज दिया था कि किसी संपादक ने मेरे विषय में ऐसा कहा था (वासना का कवि), उसी की प्रतिक्रिया में यह कविता लिखी गई। बच्चन जी ने जानबूझ कर चतुर्वेदी जी का नाम नहीं लिखा था पर जैसे ही चतुर्वेदी जी ने कविता प्रकाशित करवाई और अपनी आलोचना को स्वीकार करते हुए खेद व्यक्त किया और लिखा कि मैंने ही कवि बच्चन पर वासना का दोषारोपण किया था और 'विशाल भारत' में ही छपवाया था, तो क्षमा भी उसी के माध्यम से चाहता हूँ। इस बारे में उन्होंने बच्चन जी को व्यक्तिगत पत्र भी लिखा था। मधुकलश बच्चन के अनुभवों की संवेदना से परिपूर्ण है। कुछ तो ऐसा नश्तर था जो उनके सीने में शूल सा चुभ रहा था, अंतर की आकुलता मधुकलश से कविता के रुप में बाहर आ गई .....

प्राण प्राणों से सकें मिल किस तरह, दीवार है तन,
अल्पतम इच्छा यहाँ मेरी बनी बंदी पड़ी है,
विश्व क्रीडास्थल नहीं रे, विश्व कारागार मेरा। [११८]

उन्होंने दु:ख के सौंदर्य को पहचाना है, उसे वाणी दी है। इस स्तर पर उनके गीत व्यक्तिगत लगते हुए भी अपने हृदय स्थली को छू जाते हैं। बच्चन जी के मधुकलश की सारी काव्य रचनाएँ उनकी आत्माभिव्यक्ति की अनुभूतियाँ हैं। इसमें संयोजित पद

शब्दरुप इस रागात्मकता को लयबद्ध करने में पूर्ण रुपेण सक्षम हैं। वे अंतर की मार्मिकता जानकर अपने पाठकों से पूछ बैठते हैं –

क्यों बताऊं पोत कितने पार हैं इसने लगाये ?
क्यों बताऊं वृक्ष कितने तीर के इसने गिराये ?
उर्वरा कितनी धारा को कर चुकी यह क्यों बताऊं ? [११९]

इस काव्य में उन्होंने अपनी कल्पना शक्ति से अपने हृदय के भावों की उन अदृश्य अनुभूतियों को पूर्ण रूपेण भोगकर उन परिस्थितियों से सामंजस्य स्थापित करने की चेष्टा (कोशिश) भी की है। उनका मधुकलश आत्माभिव्यक्ति का कलश है, व्यक्तिगत प्रलाप है, पर वे अपने साथ जग की पीड़ा भी समझ रहे हैं। उसे अंतर मन में स्थान दिया है, तभी इस अनुभूति को अभिव्यक्ति दी है। उनकी शब्दानुभूति एक-एक पीड़ा को मुखर कर रही है-

विश्व की सम्पूर्ण पीड़ा सम्मिलित हो रो रही है,
शुष्क पृथ्वी आसुओं से पॉव अपने धो रही है
इस धारा पर जो बसी दुनियॉ यही अनुरूप उसके
इस व्यथा से हो न विचलित, नींद सुख की सो रही है। [१२०]

इसकी रचना के बाद बच्चनजी ने स्वयं कहा था। मेरा हृदय सदैव भावना द्रवित रहा है, अपने और दूसरों के भी सुख दु:ख, हर्ष, विषाद को मैंने अपने हृदय के अंदर देखा और लिखा है। दूसरों के हृदयों को देखने का मेरे पास यही साधन है और वह मेरा अपना हृदय। मुझे यह जानकर काफी संतोष होता है कि मैं भावनाओं का कवि हूँ जैसा मैं अनुभव करता हूँ। ऐसा शायद दूसरे भी करते होंगे। जहॉ मैं पीछे मुड़ कर देखता हूँ तो मधुकलश की रचनाएँ मेरे साथ जग के हृदय की बातें करती हैं। मुझे लगता है उनका जन्म मेरे अनुभवों से हुआ है .....

विश्व पूरा कर सका है कौन सा अरमान मेरा,
पूछता जग है निराशा से भरा क्यों गान मेरा। [१२१]

कवि की निराशा मधुकलश की एक महत्वपूर्ण रचना है। बच्चन के जीवन के दु:ख के क्षणों की बातों का वर्णन है। जब वे अकेले हैं, सारी दुनिया भरी है, पर वे

अपने दु:ख के साथ सारी दुनिया में भी अकेले हैं। जिंदगी और मौत के बीच का फासला उन्हें कम होता नजर आता है।

बच्चन असंभव स्वप्नों को लेकर सुख की टोह ले रहे थे, निराशा तो मिलनी ही थी.....

है वही उच्छवास कल के, आज सुखमय राग जग में
आज मधुमय गान, कला के दग्ध; कंठ प्रताप मेरे। [१२२]

मधुकलश से बच्चन जी की पीड़ा छलक – छलक कर पाठकों के सामने आई हैं। इसी चीत्कार और दु:ख ने उन्हें लोकप्रिय बना दिया। जीवन में बहुत लोग संघर्षो का सामना करते हैं, पर मन की व्यथा जब कविता रुप में बाहर आती है, तो हर दु:खी मन की कथा बन जाती है। बच्चन जी की विशेषता थी कि मानवीय सहज आकांक्षाओं को भावनाओं की बहुत गहराई तक जानकर उसे शब्दबद्ध करते थे।

बच्चन ने मधुकलश के द्वारा अपने जीवन में सशक्त संघर्षशीलता और संवेदनशीलता का विवरण दिया है। वे कई बार जीवन में टूटे हैं किन्तु अपने अस्तित्व को लघु (छोटा) जान कर भी दु:ख को महान समझते हैं।

अग्रसर होता अधर में कल्पना – खग पर सँवर जब
अश्व द्वादश अंशुमाली के, न पा सकते मुझे तब।
पल चढ़ा आकाश में हूँ, पल पड़ा पाताल में हूँ,
चंचला को भी चपलता मिल सकी, मुझ सी भला कब ?
आज मिट्टी के खिलौने हाथ हैं मुझ तक बढ़ो,
छू नहीं सकते कभी वे, स्वपन में भी छांह मेरी । [१२३]

स्वत: को समझने की शक्ति जो मनुष्य के भीतर होती है, वह बहुत महान होती है, जब मनुष्य अपने अहम् को समझ लेता है, तो उस पर की गई सभी आलोचनाएँ ठण्डी पड़ जाती हैं। बच्चन जी में अपने सृजन या निर्माण के प्रति एक दृढ़ सा आत्म-विश्वास है। कवि ने अपने आत्म विश्वास का संसार में आत्मप्रचार किया है, जो कि मधुकलश की कविता संग्रह के रुप में सच्चे सोने की तरह निखर कर हमारे सामने प्रस्तुत हुआ है।

मधुकलश की 'मांझी', तथा 'लहरों का निमंत्रण' कविताएँ कवि के संघर्ष तत्पर प्रवृत्ति को अभिव्यक्त करती हैं। 'मेघदूत' कविता में बच्चन जी ने कालिदास के मेघदूत के पद्यांशों का पदबद्ध अनुवाद किया है। मेघों द्वारा प्रियतम का प्रेम संदेश भेजना विरह की तपती अग्नि में जलने का सुंदर अनुवाद है। सर्वप्रथम यह रचना 'बिजली' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। यह पत्रिका पटना से निकलती थी।

मधुकलश की अंतिम कविता 'गुलहजारा' है। इस कविता में बच्चन जी ने अपनी पहली पत्नी श्यामा के जीवन की अंतिम घडिय़ों का वर्णन किया है।

बीज के जो कोष बाकी थे, गया ले तोड़ माली,
पीत होकर अब ठिठुरतीं, हैं पत्तियॉ नोक वाली
मृत्यु शैय्या पर पड़े अति रुग्ण की अंतिम हँसी सी,
यत्न करके खिल रही है, एक लघु कलिका निराली। [१२४]

उपरोक्त पंक्तियों में मधुकलश का कवि बड़ी असहाय स्थिति में है और अपनी दिवंगता पत्नी श्यामा की मृत्यु शय्या और उनकी अंतिम सयत्न मुस्कान की ओर ही हमें संकेत करता दृष्टिगत होता है। उनकी आत्मा दु:ख में डूब गई और संवेदना इन शब्दों से बद्ध हुई .....

आज उपवन से हमारे, मिट रहा है गुलहजारा। [१२५]

कुल मिलाकर मधुकलश टूटे सपनों का दु:ख की अभिव्यक्ति का काव्य संग्रह है। डॉ. पंडया के मत से मधुकलश के गीत संगीतात्मक, रस नियोजन, भावानुकूल भाषा आदि गुणों से परिपूर्ण है। इन्हीं सब कारणों से बच्चन आधुनिक हिन्दी गीत काव्य में सर्वोत्कृष्ट पद प्राप्त करने के अधिकारी हो गये।

अंतत: मेरे अनुसार मधुकलश मनोकूल जीवन जीने की अदम्य महत्वाकाक्षाओं, क्षमताओं, स्वछन्दताओं से पूर्ण है पर वह अटूट अस्तित्व व्यक्तित्व की प्रबल कविता में रुपांतरित करने का एक अनोखा प्रयास है। यदि उसे कवि बच्चन के अस्तित्व के चीत्कार की पुकार माना जाय, तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

मधुकलश के गीत पढ़ते हुए ऐसा अहसास हुआ कि सहसा स्वप्निल समां बदल गया है, दिल का तार एक झटके से खंडित कर दिया है और ऐसा लगता है कि अब

उस साज से चिंगारियाँ निकलेंगी। मधुकलश सामाजिक परिवेश में व्यक्ति के अस्तित्व का तीखा भावबोध कराता है। इसमें व्यक्ति की मस्ती का नहीं अपितु उसकी कभी न मिटने वाली हस्ती तथा उसके हौसले का नाद है। इसमें कवि बच्चन ने प्रत्येक मानसिक घात-प्रतिघात को द्रुतता, एकतानता एवं तन्मयता के साथ ध्वनित किया है।

आलोचकों ने मधुकलश के गीतों की इन विशेषताओं पर ध्यान ही नहीं दिया जब कि मेरे अनुसार इन कृतियों की इन्हीं विशेषतायों के कारण खड़ी बोली के गीत-काव्य में अद्वितीय स्थान है। मधुकलश का कवि अपने जीवन में सशक्त, संघर्षशील और संवेदनशील रहा है।

मधुकलश मधु काव्य का तीसरा और अन्तिम काव्य संग्रह है, इसमें बच्चन जी ने अत्यंत सहज तथा सदैव मन में रचने; बसने वाली सम्मोहक शैली में अपने विचारों को मूर्तरुप में आकार दिया है। मधुकलश की रचना बच्चन जी के जीवन में वाद बवण्डर और वज्राघात के दिनों में लिखी गईं और श्यामाजी के देहावसान के बाद उन्हें समर्पित की गईं।

जब इसका अवलोकन मैंने किया, तो पाया कि जगत के वृक्ष की डाल में बाँधकर यह काव्य कृति मधुकलश अपने प्रत्येक गीत में वास्तविकता की धरोहर को समेटे हुए है। मन के प्रेम, प्रताप, संताप, उत्साह सभी को इसमें संजोए हुए है। बच्चन जी ने निर्भयता पूर्वक समाज के नीतिवादी ठेकेदारी को ललकारा है और उन सभी को (नैतिक मूल्यों को) वास्तविकता की कसौटी पर कसवाने का आवाहन करता है। वे कहते हैं कि यदि छल-कपट रहित भावों और संवेदनाओं का प्रकटीकरण अश्लीलता है, तो उन्हें इसका उत्तर दिया जाय। मधुकलश की रचनाओं में अदृश्य मानव का विराट मानव से युद्ध है। बच्चन जी ने मधुकलश में अपने जीवन की पीड़ा, घटनाएँ तथा उनसे मुक्ति दिलाने वाली मानवीय शक्तियों को कविता के रुप में पाठकों के सामने रचकर रख दिया है।

कवि की निराशा मधुकलश की सबसे अहम रचना कही जा सकती है। बच्चन जी की निराशा की ध्वनि पाठकों के हृदय को झकझोर देती है। कवि बच्चन जी ने उस समय का भी वर्णन किया है जब वे स्वयं क्षय रोग से ग्रस्त हो खाट पर मृत्यु की घड़ियाँ गिन रहे थे।

एक दिन मैंने लिया था, काल से कुछ श्वास का ऋण,
आज भी उसको चुकाता ले रहा वह क्रूर गिन-गिन। [१२६]

३.३.७ निशा निमंत्रण - परिचय

खड़ी बोली के गीत संग्रहों में निशा निमंत्रण का अपना एक अलग अस्तित्व और महत्व है। निशा निमंत्रण बच्चन जी के विरह के आग में तपती कविताओं का संग्रह है। इसकी रचना १९३७-३८ की है। इसका प्रकाशन १९३८ में हुआ था। यह काव्यकृति पूर्णरुपेण कवि बच्चन की विरह वेदना से परिपूर्ण है। उनकी ऑखों के अश्रुओं ने कविता का रुप धारण कर लिया है। पत्नी श्यामा के देहानत के बाद करीब दो वर्षो तक वे अपने जीवन की रिक्तता और पीड़ा का दर्द सहते रहे जो कि हिन्दी काव्य जगत में पीड़ा के इतिहास के रुप में उभरकर आया। गांधीजी के सत्याग्रह के समय बच्चन जी ने अपनी एम.ए. की एक वर्ष की पढ़ाई छोड़ दी थी। श्यामा जी की मृत्यु के बाद बच्चन जी ने फिर अपना नाम कॉलेज में लिखा लिया था और अपनी एम.ए. की पढ़ाई पूर्ण की, जीवन की इस रिक्तता ने पीड़ा और अवसान से भरी भटकती हुई जिंदगी की अवधि में निशा निमंत्रण और एकान्त संगीत के गीत लिखे गए। दर्द के इन सजीव गीतों ने हिन्दी काव्य जगत में धूम मचा दी। पीड़ा की यह जीवंत अभिव्यक्ति पूरी उष्मा के साथ जीवित रही।

गीत संग्रहों में निशा निमंत्रण का गीत संग्रह अपना अनूठा अस्तितव रखता है। अस्तित्व की झलक इस बात में दिखाई पड़ती है कि, यह शाम से लेकर विरह और दु:ख भरी एक भयंकर काली रात का प्रभात होने तक का १०० कविताओं वाला महागीत है।

अपनी पहली पत्नी श्यामा के मृत्यु उपरान्त कवि बच्चन ने इसे रचा। इसके निर्माण के पीछे भुक्त भोगी कवि बच्चन की मृत्यु के देवता की निर्ममता तक की व्यथा का क्रंदन है जो चीत्कार के रुप में हृदय को विच्छेदित करता हुआ शब्द रुप में फूट पड़ा। निशा निमन्त्रण के गीत प्रणय की कोटि से अलग है, इन गीतों में न तो प्रसाद के ऑसू का प्रणय निवेदन है, न महादेवी वर्मा के गीतों जैसा रहस्यमय-प्रणय और न अंचल की विव्हलता, नरेन्द्र शर्मा तथा नेपाली के गीतों जैसा उद्दाम आवेग क्षयग्रस्त प्रणय से परिपूर्ण तथा अतृप्ति की आग से झुलसा राग ही है।

निशा निमंत्रण के गीतों में पत्नी के प्रति विरह-वेदना की अभिव्यक्ति में कवि ने नियति, प्रकृति, जग जीवन मरण तथा इन सबके ऊपर मानवतावाद का राग मुखरित किया है। जिसके कारण इस काव्य कृति ने रोमांस मात्र न रहकर जीवन के लिए जीने

वाले संदर्भो का साक्ष्य हमारे सामने प्रस्तुत किया है। निशा – निमंत्रण केवल विरह – विषाद के गीतों का संग्रह ही नहीं है, वरन वह असहाय एकाकी, विधुर मानव की, मानसिक प्रतिक्रिया के फलस्वरुप उतरे शब्द चित्रों का सजीव एलबम है। निशा निमंत्रण के कई गीतों में विशुध्द मानवीयता का स्वर है। परंतु खासियत यह है कि यह स्वर कल्पना और आदर्श पोषित या उस पर आधारित न होकर वास्तविकता पर आधारित है। भाव तथा शिल्प के समन्वय तथा रुप-विद्या से निशा निमंत्रण के अधिकांश गीत अमर हो गए हैं।

३.३.८ निशा निमंत्रण का अनुशीलन

निशा निमंत्रण मात्र कोष काव्य नहीं है। उसके सारे गीत आपस में एक दूसरे से संबद्ध हैं। स्वर्गीय श्यामा को समर्पित इसकी पृष्ठभूमि सन १९४० के सुषमा - निकुंज द्वारा प्रकाशित प्रति के परिचय में प्राप्त हैं। सन् १९३६ में श्यामा जी के देहांत के बाद उनका जीवन घोर अवसाद का, रिक्तता और पीड़ा का इतिहास रहा। इस रिक्तता और पीड़ा में उन्होंने निशा निमन्त्रण लिखा, दर्द के इन सजीव गीतों ने हृदय का झकझोर दिया, यही कारण रहा कि मेरा मन भी बच्चन जी की इन वेदनाओं को निशा निमंत्रण में उनकी प्रतिक्रिया के रुप में जानने की इच्छा से इस पुस्तक का चयन अनुशीलन हेतु किया गया।

डॉ. मुल्कराज आनंद ने अपनी पुस्तक में एक जगह लिखा है कि कविता एक प्रकार का साहसिक कृत्य है, निशा निमंत्रण में गीतों की श्रृंखला अपने आप बनती चली गई। यह आकार दो रुपों में था। सकारात्मक तथा नकारात्मक, स्वदु:ख और परदु:ख, आशा और निराशा, वैराग्य और हौसले, घात-प्रतिघात से इनका स्वरुप निखरा है।

आरम्भ के तीन गीत पूर्व की स्थिति दर्शाते हैं। दिन जल्दी-जल्दी ढलता है, कवि बच्चन चीखकर अपने साथी अर्थात् अपने मन के भीतर के रचनाकार को कहता है , साथी दिन बीत गया अब फिर अकेले रहने का समय हो गया-

> दिन जल्दी – जल्दी ढलता है, हो जाय न पथ में रात कहीं
> मंजिल भी तो है दूर नहीं – यह सोच थका दिन का पन्थी भी
> जल्दी - जल्दी चलता है, दिन जल्दी - जल्दी ढलता है। [१२७]

उपरोक्त पंक्तियॉं पढ़कर हमारे मानसिक धरातल पर एक सजीव चित्र उभरकर सामने आता है, कि ढलती हुई सॉंझ में थके पंछी की मंजिल पर पहुँचने के लिए तेज चाल, घोंसलों से झॉंकते पंछी की स्मृति में उड़ती चिडिय़ों के परों में अकथनीय चंचलता पर अन्त में उसके पैरों से उलझती हुई विकलता। उक्त गीत में यह सभी कुछ एक सजीव चित्र की भॉंति पाठक के मानसिक पटल पर उभर जाता है। मन की प्रेम की संवेदना जागृत हो जाती है और मन की वेदना की स्थिति एवम् प्रकृति के वातावरण की संयोगात्मकता अनेक मार्मिक मांसल चित्रों की सृष्टि निशा निमंत्रण के १०० गीतों में दिखाई पड़ती है।

उनके निशा निमंत्रण में श्रेष्ठ कविताओं में जहॉं भावों की अभिव्यक्ति हुई है वहॉं वे किसी भी प्रकार विखंडित नहीं होती। बच्चन जी के गीतों के अंतरो की टेक (दुहराना) की पंक्तियों का भाव – शिल्पगत और अनूठा होता है। जैसे रुबाई की अंतिम पंक्ति उसकी जान हेाती है उसी प्रकार बच्चन के गीतों के अंतरो की अंतिम पंक्तियॉं होती हैं।

निशा निमंत्रण के गीतों की पढ़ते समय पाठक उसमें इतना तल्लीन हो जाता है कि अपने को स्वयं उस कविता की नदी में डूबता तैरता पाता है। निशा निमंत्रण में कवि ने संध्या से प्रात: तक प्रकृति के विभिन्न परिवर्तनों को दु:खी मन की पृष्ठभूमि पर अपने जीवन की नि:संगता, शून्यता और व्यर्थता को अलग -अलग प्रकार से रेखांकित किया है। गिरजाघर के घंटे की टन-टन भी हृदय पर तीव्र आघात करती है। निशा निमंत्रण के सौ गीतों में वेदना, निराशा, अकेलेपन की भावना का इतना गहराई से संपुजन हुआ है कि उसके प्रभाव से अछूता बने रहना असंभव सा प्रतीत होता है । ये अंतरंग बच्चन की अपनी होकर भी दूसरों के लिए पराई नहीं रह जाती है।

निशा निमंत्रण की रचनाओं में निराशा की भावना अधिक घनीभूत रुप में व्यक्त हुई है। सवाल यह उठता है कि क्या इन कृतियों में वेदना इतनी जड़ीभूत हो गई है कि, कवि इस काली दीवार के आर पार देख नहीं पा रहा है। इसका मूल स्वर वेदना का स्वर है, कवि अपने एकाकीपन का प्रकृति की विविध रुप-रंगमयी चित्रावली में साक्षात्कार करता है। भाग्य के प्रति कवि को गहरी शिकायत है। वह अपने समवयस्क साथियों को परिवार की सुख की छाया में आत्मियों से घिरा हुआ देखता है, तो सहज ही अपने एकाकी अस्तित्व के साथ उनकी तुलना कर बैठता है। यह काल उनकी रचना निशा निमंत्रण में उनके आत्म साक्षात्कार के रुप में परिलक्षित हुआ हैं। इन कविताओं में भाग्य चक्र के नीचे कुचले हुए मानव के चीत्कार और ललकार दोनों के मिले जुले स्वर स्पष्ट सुनाई पड़ते हैं।

निशा-निमंत्रण के गीतों में भाव, भाषा की यथार्थता, कल्पना और वातावरण के चित्रण का परस्पर अटूट संबंध है। प्रत्येक कविता प्राय दुःख के मंथन से शुरु होती है, और प्रकृति के पथ के छाया प्रकाश में गूँजती हुई जग-जीवन के स्वर में घुल मिल जाती है। इन गीतों में एक दुःखी मन का निष्कपट रुदन गायन के रुप में है। यहॉ एक ऐसा शांत क्रंदन है, जिससे दुखियों का विशाल समाज अपने हर दुखिया को निजी दुःखी मन का निष्कपट रुदन गायन के रुप में है। यहॉ एक ऐसा शांत क्रंदन है, जिससे दुखियों का विशाल समाज अपने हर दुखिया को निजी दु:खी के दायरे में एकाकी नहीं छोड़ता। इसी संदर्भ में निशा-निमंत्रण के गीत की यह पंक्तियॉ हमारे मानसपटल पर उभर जाती हैं -

रो तू अक्षर-अक्षर में ही, रो तू गीतों के स्वर में ही,
शांत किसी दुखिया का मन हो, जिनको सूनेपन में गाकर !
क्यों रोता है जड़ तकियों पर ! [१२८]

दी गई पंक्तियॉ कितनी मार्मिक हैं। वस्तुत: निशा निमंत्रण के गीत दर्द भरे मन के गीत है। ये गीत दु:खियों के लिए आशीर्वाद है। किन्तु निश्चय ही निशा-निमंत्रण के गीत सुख में लिपटे सुखियों के लिए नही हैं। यह सत्य है कि अनुभूति, कल्पना और रागत्व का सहज-शिल्प सममत समन्वय जैसा निशा-निमंत्रण के गीतों में हुआ है, यथार्थ कल्पना बन गई है।

दुखित मन से निशा निमंत्रण की कविताऍं रची गई हैं। चल बसी संध्या गगन से पहले तीन गीत निशा के पूर्व की स्थिति, फिर तीन गीतों की परिणति स्वयं संध्या की मृत्यु में, और मृत्यु के बाद उस स्थान पर दीपक जलाने की परंपरा है, जहॉ शव को रखा गया था सातवॉ गीत है उदित्त संध्या सितारा - जाहिर है दीपक के मन का अंधकार बढ़ेगा ही। अंधकार में एक बड़ा गुण है कि वह सबको मिलाकर एक कर देता है। मगर यही गुण संध्या के रंगो की तरह कवि के पारदर्शिक मन को और उद्वेगित करता है।

मिटता अब तरु-तरु में अन्तर,
तन की चादर हर तरुवर पर,
केवल ताड़ अलग हो सबसे अपनी सत्ता बतलाता है। [१२९]

नौवें गीत के अंत तक कवि के हृदय में तिमिर (अंधेरा) अवसाद भली प्रकार से भर गया है।

बच्चन जी के निशा निमंत्रण में एक बात खास ध्यान देने योग्य है। जैसे-जैसे दु:ख बढ़ता जाता है, उसकी सीमाएँ टूटती जाती हैं। जब तक कि उनका दु:ख चर-अचर, चल-अचल, गत-अनागत सब में व्याप्त न हो जाए। पंछी, राही, कगार, ताड़ सब कवि के ही पर्याय बन जाते हैं। श्रृंखला के अंत तक आते आते कवि जग के दु:खों, में अपने दु:ख देख लेता है। यह संवेदना कवि और विश्व में एक ऐसा एकात्म पैदा करती है जो बड़ी खामोशी से किसी परछाई की तरह हमारे दिमाग के कमरे में से निकल जाती है, और कवि का मानना है कि अपने दु:ख से दूसरों के दु:खों को बचा लेना चाहिए। इसलिए विनाशकारी तूफान आने पर वह कहता है .....

हटो विहंगम, उड़ जाओगे। [१३०]

यह संवेदना और एकात्मभाव सर्वत्र है। स्वयं अपने पार्थक्य ने कवि को समस्त जड़ चेतन की व्यथा समझने की शक्ति दे दी है, कहीं तो वह समूह से पिछड़े पंछी से एकात्म स्थापित करता है, कहीं धार के द्वारा निरंतर काट जाने वाले कगार को गिरता देखता है, कभी संसार की निर्गम हँसी उस पंछी में सुनता है कि जो बहुत अफसोस कर कर के कह रहा है ...

लुट गये मेरे सलोने नीड़ के तृण पात ! साथी ! [१३१]

गीत बारह और तेरह सुखद कल्पनाओं को छूते हैं मगर सुखद वस्तुएँ पुन: दु:ख उत्पन्न करने लगती हैं, प्रेम की उत्कटता में विचारों की तीव्रता पहली बार मिल कर उग्र हुई है। गीत पन्द्रह से एक ही वस्तु एक समय सुख देने वाली और दूसरी बार दु:ख देने वाली हो सकती है। फिर भी निशा निमंत्रण का चिंतन अभी दु:ख पूर्ण है क्योंकि अकेले भोगा जा रहा है।

कविता १६, १७, १८, १९ बहुत गंभीर चिंतन के गीत है। संगीत के पर्दे बदल गए है। निशा निमंत्रण के १०० गीत मिलकर भावनाओं और संवेदनाओं का एक पूरा दस्तावेज है। १६ वें गीत की शुरुवात प्रार्थना की वांछनीयता से होती है। गिरजे मंदिर, मस्जिद के ईश्वर में कवि को आस्था नहीं रह गई है। मनुष्य ने अपने हवाई किले बनाते हुए काल द्वारा धोखा खाता है, यही सत्रहवॉ गीत है। जीवन एक स्वपन मालूम होता है, मगर १९ वें गीत में जन्म-मरण, सत्य-स्वपन का अंतर मिट गया है। इस गीत

के अंत में काल के विरुद्ध कला की सतता का आश्रय संभव होना स्वीकार किया गया है।

काल-प्रहारों से उच्छृंखल,
जीवन की लडिय़ा विश्रृंखल। [१३२]

इन्हें जोड़ने को, आ अपने गीतों की हम गॉठ लगा लें। पिकॉसो ने कहा है कला — दर्द और गम की बेटी है। मगर बेटी काल के समुद्र का संतरण कर सकती है। निराशा की उत्कटता कुछ कम करती है। २० वें गीत में एक मार्जारी (बिल्ली) का रुदन है।

कौन गया निश्चय सोने, देखेगा फिर जाग सवेरा है। २१ वॉ गीत दीप में हिलती हुई, परछाई - सा जीवन है, अर्थात् हिल तो दीप शिखा रही है। किन्तु वस्तुऍं हिलती हुई दिखती हैं। २२ वें में आशा आते ही २३ में मरणान्तक निराशा का घटाटोप (घनघोर) वातावरण आ गया है। २४ वीं कविता में कवि अपनी निराशा से बाहर आ जाता है। २५ वें में संवेदना से पूरित हृदय से विश्व के प्रति व्यक्तिगत दु:ख के ऊपर प्रधान हो गया है। मगर कला की जिस शक्ति का आभास १९ वें गीत में मिलता है, दु:ख को जितने में कला सम्पूर्ण रुप से सक्षम है, यह जो आस्था कवि के मन में पनपी है वह अच्छी तरह प्रतिष्ठित हुई है। संवेदना को काव्य निशा निमंत्रण दुख का गान २५ वें गीत में नजर आता है।

कोई पार नदी के गाता, भंग निशा की नीरवता कर गीत २८ से ३८ तक नभ श्रृंखला है, याने कवि बच्चन बार - बार सहारे के लिए आसमान को निहारते हैं। जैसे बार-बार निराश मन के लिए आसमान से धैर्य पाने की आशा रखते हैं। तारों का गान सुनने का उद्यत (लालयित) वह उल्कापात के बाद की दीप्ति का आनंद भी ले सकते हैं। तारे को टूटता देखकर मानवीय स्थिति का ज्ञान पुन: स्मृत हो आता है।

मिटता एक देखता रहता,
दूर खड़ा तारक-दल सारा। [१३३]

फिर भी कवि जग के दु:ख की उत्कटता को अपने दु:ख से अधिक मानता है। ३९ वें से ४५ वें तक कभी-कभी शंका होने पर भी कवि लघुता की शक्ति को स्वीकार करता है। वियोग अपने आप में ही वांछनीय है। ५१ वें गीत से कवि का भाव बदल जाता है। व्यक्तिगत संताप की सीमाएं टूट जाती हैं। अपने दु:ख के कारण सम्पूर्ण

मानवता बल्कि जीव मात्र के दु:ख के लिए कवि करुणकातर हो जाता है उसे स्वयं अपने से डर है कि उसका वंचित जीवन कहीं प्राणियों को नजर न लगा दे-

मत देख नजर लग जाएगी
यह चिडिय़ों के सुख धाम !

मित्र पड़ोसी क्रंदन सुनकर, आकर अपने घर से सत्वर,
कोई रोता दूर कहीं पर ! [१३४]

उसे स्वयं अपने ही दुर्भाग्य से भय है। यहाँ तक कि ५० वें गीत के बाद बदन की निष्फलता भी कवि समझ गया है। क्यों रोता है जड़ ताकियों पर इसके बाद कवि की करुण मानवता अहंकार के सूखे पत्ते सी झड़ जाती है। इसीलिए कवि पूरे आत्म विश्वास से घोषणा करता है कि मासि (दु:ख) के बदले नयनों का पानी मंदिर मस्जिद सबको धोने की क्षमता तो रखता ही है, मगर रक्त से सने आहत प्राणी का दु:ख भी कम कर सकता है। उसके बाद फिर सुखद स्मृतियाँ हैं। व्यक्तिगत संताप के बदले अब स्मृतियों का सुख है। इस सुख की पराकाष्ठा होती है, ६० वें गीत में -

तू जिसको कर प्यार, वही मैं !
अपने में ही आज नही मैं ! किसी मूर्ति पर पुष्प चढ़ा तू पूजा मेरी हो जाती है !

निशा निमंत्रण में भीगी रात, विदा सूरज सुमनों के ऑसू पोंछ रहा है।
फिर मै कल रात नही रोया था, मैं उसे फिर पा गया था। [१३५]

फिर वह गीत है शायद जिसे हिन्दी में किसी ने भी नही समझा :

धार से कुछ फॉसले पर, सित कफन की ओढ़ चादर
एक मुर्दा गा रहा था बैठकर जलती चिता पर !
स्वप्न था मेरा भयंकर । [१३६]

सफेद कफन अर्थात् राग-विराग के सभी रंग छोड़कर अपनी लौकिक देह के विनाश की स्वीकृति में से कवि अपने गीत की अमरता के प्रति आश्वस्त है। वह सृष्टि के विधायक के मन को भी थोड़ा थोड़ा, समझता है। ८२ वें गीत में वह शून्य तक को अपनी संवेदना दिखलाने को तैयार है, वह स्वीकृति को पकड़ कर चल रहा है

चाहे उससे कितना भी दु:ख हो, दु:ख अपना छुपा लेना चाहता है और यौवन के उजड़े प्रदेश में फिर आशा की भीत खड़ी करता है।

जहाँ तक मै सोचती हूँ, निशा निमंत्रण दु:ख के महासागर की एक सशक्त लहर है जो संवेदना की नदी को अपने में समाहित कर लेता है और आशा के रुप में पुन: रुपायित करने का प्रयत्न करता है। उन्ही के शब्दों में .....

लहरों से डरकर नौका पार नही होती,
कोशिश करने वालों की हार नही होती। [१३७]

निसंदेह प्रकृति के प्रशिक्षण अनुभूत होने वाले सुन्दर वातावरण में कवि की अनुभूति, वेदना संवेदना का जितना हृदयस्पर्शी चित्रण निशा-निमंत्रण के गीतों में मिलता है, उतना खड़ी बोली के किसी एक गीत-संग्रह के गीतों में देखने को नहीं मिलता। यहाँ पर एक विरही के दिल और नीर भरे बादल की स्थिति का साम्य और वैषम्य का मर्मस्पर्श दृश्य .....

आज मुझसे बोल, बादल !
तम-भरा तू तम-भरा मैं ।
गम-भरा तू गम-भरा मैं,
आज तू अपने हृदय से हृदय मेरा तोल बादल। [१३८]

उपरोक्त गीतों का सार देखें तो इन गीतों में एक व्यक्ति को केन्द्र मानकर उसके जीवन साथी के असमय, अशुभ, अवसान आदि का रागमय चित्रण किया गया है, पर इस राग का आधार मांसल प्रणय की समानियत न होकर जीवन के सुख-दु:ख के भिन्न पहलू हैं । इन पहलुओं में जिये जाने वाले जीवन का जो जड़ सत्य है, उसे अनुभूति के ताप से तरल बनाकर मुखरित किया गया है।

निशा निमंत्रण पढ़ते समय बच्चन जी के एकाकीपन का बोध सहज ही हो जाता है। निष्ठुर काल ने जब प्रिय पत्नी को उनसे अलग कर दिया तो वे विव्हल हो उठे। उन्होने स्वयं निशा निमंत्रण की भूमिका मे किया है। जिन्होने मेरे मधुकाव्य की रचनाओं का रसास्वादन किया है वे अब इस संग्रह से मेरी बदली शैली पाएँगे।

पग पायल की झंकार हुई पीने को एक पुकार हुई।

उनकी कविताओं का जब मैं अनुशीलन कर रही थी तब मैंने जाना कि उनकी रचित कविताओं में कुछ बौद्धिक स्तर की हैं, कुछ मानसिकता को प्रदर्शित करती हैं। जो जीवन के प्रलाप को, संताप के आवेग को, क्रोध को शमित करती हैं। भावधारा में बहने लगती हैं।

जीवन की इस आत्मवेदना को उन्होंने इस प्रकार व्यक्त किया है।

साथी, साथ न देगा दु:ख भी ! काल छीनने दु:ख आता है,
जब दु:ख भी प्रिय हो जाता है,
नहीं चाहते जब हम दु:ख के बदले में लेना चिर-सुख भी ! [१३९]

मानव काल के सामने कितना विवश और लाचार हो जाता है। अपनी अर्धांगिनी को तड़पते बिसुरते (रोते) अपने से दूर होते देखा है। मन की स्थिति को कुछ इस प्रकार व्यक्त करते हैं –

विश्व को उपहार मेरा ! लें तृषित मरु, होठ तेरे,
लोचनों का नीर मेरे !
मिल न पाया प्यार जिनको आज उनको प्यार मेरा।
विश्व को उपहार मेरा। [१४०]

निशा निमंत्रण को पढ़ते समय ऐसी अनुभूति हुई कि पहले पद में ही भावनाओं की कीमत का अंदाजा लग गया था। रोदन को वाणी देने के लिए सोचना नही पड़ा। कविता के भंडार से अश्रु का रुप धारण कर टप-टप बहकर, निशा निमंत्रण के रुप में अवतरित हो गई। इतने प्रलाप के बाद भी बच्चन जी ने कविताओं का भंडार दु:ख की राशि से भरा है- दूसरा पद दो बातें बतलाता है-

१) अगर मानव हृदयविहीन है संवेदनाओं से रिक्त है तो वह उस राजा सा है जो अपने राज्य के उत्तराधिकारी के बिना राज्य चला रहा है। पितृत्व के सुख से वंचित है।

2) अगर वह दया, क्षमा, माया, मोह से परिपूर्ण है तो राम, बुद्ध, महावीर बन सकता है। स्वपन ही इंसान को जुझारु (प्रयत्नशील) बनाते है। सभी लोग अच्छे वक्ता बन सकते हैं पर कवि नहीं।

तीसरा पद इस बात को परिलक्षित करता है कि कवि बच्चन अपने दु:ख का परिमार्जन कर शुद्ध हृदय से विश्व को स्नेह का उपहार दे रहे हैं।

अपने परिजन, मित्र सभी से दूर रहकर भी उनके पास है अपनी संवेदना का साथ। अपने दु:ख से वे दूसरे को कष्ट नहीं देना चाहते। उनका कहना था दु:ख मेरे हिस्से में है तो उसकी पीड़ा मैं दूसरे को कैसे दिलवाऊँ । अपनी ऑखों से बहने वाली गंगा-यमुना की धार को वे खुद ही पीना चाहते हैं। प्रथम गीत का प्रश्न था। मुझसे मिलने को कौन विकल ? और अंत आते आते वे पूछते हैं मिल न पाया प्यार जिनका, आज उन को प्यार !

नीरज के विचार से सूक्ष्मता, सहजता, भावानुभूति तथा प्रभाव क्षमता की दृष्टि से निशा निमन्त्रण हिन्दी जगत की अमूल्य निधि है। डॉ. नगेन्द्र के मत से- अनुभूति, मनोदशा और वातावरण की एकता पाठकों के मन में एक स्थायी मानसिक वातावरण उत्पन्न कर देती है जो कला की बड़ी सफलता है।

निशा निमन्त्रण के १०० गीतों को पढ़ने के बाद एक प्रश्न मेरे समक्ष आता है कि उनमें भला ऐसा क्या है, जिससे उन्हें उच्च कोटि के गीतों की कोटि में रखा जाए ? लेकिन अगर गीत कवि के हृदय की देन है, उसका आत्मदान है तो उसकी महत्ता इस बात में है कि उसे पढ़कर मानव का मन शान्त हो। कवि का दु:ख अपना दु:ख प्रतीत होने लगे। यही बात निशा निमन्त्रण में देखने को मिली। कुछ कविताओं को पढ़ने के उपरान्त मैं भी अपने ऑसू न रोक पाई। उनके गीत दर्द भरे, दु:खी दिल के गीत हैं। ये गीत दुखियों के शुभाशीष हैं। यह भी सत्य है कि इन गीतों में अनुभूति, कल्पना और रागत्व का सहज समन्वय निशा निमंत्रण के गीतों में ही हुआ है।

निशा निमन्त्रण का सागर इतना गहरा है कि उसकी तह तक पहुँचना असंभव प्रतीत होता हें। मेरा प्रयत्न एक गागर सा है।

३.३.९ एकांत संगीत - परिचय

एकांत संगीत का रचना काल १९३७-३८ का है, पर यह प्रकाशित सन १९३९ में हुई। निशा निमन्त्रण का मुखरित विषाद (दुःख) एकान्त संगीत के गीतों में एकदम अंर्तमुख हो गया है जैसे वह किसी की सॉसों में समा गया हो, मन में घुमड़ गया हो। जैसे जग, जीवन, समाज, नियति, प्रकृति, प्रेम ने व्यक्ति का कुछ मूल्यतम लूट कर उसे अपने संविधान से बहिष्कृत और निष्कासित कर दिया है।

कितना अकेला आज मैं !
संघर्ष में टूटा हुआ, दुर्भाग्य से लूटा हुआ,
परिवार से छूटा हुआ, कितना अकेला आज मैं ! [१४१]

एकांत संगीत के करुण विरह ने युवा-मन को अस्वस्थ कर दिया था। कवि की उस निजी त्रासदी में अनेकों ने अपनी त्रासदी का सचोट साक्षात्कार किया। ऐसा तक हुआ कि एक युवक उस दर्द को सहन न कर पाया, तो उसने आत्मघात कर लिया।

इसे केवल तरन्नुम और सस्ती लोकप्रियता कहकर टाला नहीं जा सकता। क्या कोई अधिकतम लोकप्रिय फिल्म - गीतकार ऐसा गहरा असर पैदा कर सका ? क्या हिन्दुस्तान का कोई समकालीन कवि पीड़ा का ऐसा सार्वभौमिक उच्छवास, अपने छन्दों में दिशाओं तक फेंक सका ? सोचने की आवश्यकता है। बच्चनजी जब अपनी कविता का गान करते थे, तब हजारों हजारों की भीड़ (अवाम) को स्तब्ध कर देते थे। [१४२]

एकांत संगीत में जैसे एक बोराये, विक्षिप्त से व्यक्ति के मन को छू जाने वाला तीखा स्वर है। वहॉ अभाव-दुःख की स्वर लहरी प्रबल है । मानसिक तनावों एवम् भावों की तीव्रता का चित्रण एकांत संगीत के गीतों में अद्‌भूत प्रतीत होता है। इसमें कवि के गीतों में यौवन की असफलता अनासक्ति तथा अभाव ग्रस्त जीवन की निराशा के प्रति आक्रोश का स्वर भी उभरता है।

झुकी हुई अभिमानी गर्दन, बंधे हाथ, नत-निष्प्रभ लोचन !
यह मनुष्य का चित्र नहीं है, पशु का है, रे कायर !
प्रार्थना मत कर, मत कर, मत कर ! [१४३]

अगर वास्तव में देखा जाय, एकांत संगीत मनुष्य के एक ऐसे अकेलेपन का मर्मस्पर्शी संगीत है जो कि हमेशा से उसका अपना ही है। जिसे बच्चन जी ने किसी को समर्पित न कर सिर्फ अपने को ही समर्पित किया। क्यों कि इस संगीत के साथ वह अपने अश्रुओं का भी दान कर रहा है, जो उसके अंतर के दु:ख, निराशा, अवसाद के क्षणों को बहाने में सहायता कर रहे हैं। एकांत संगीत स्वत: सुखाय का एक सहज स्वर सृजन है। इस सर्जना के माध्यम से कवि बच्चन ने उस मनुष्य को चित्रित किया है जो सामाजिक दृष्टि से भले ही अपेक्षित न हो, पर प्रत्येक व्यक्ति कभी न कभी कुछ क्षणों के लिए उस बात का अनुभव अवश्य करता है। एकांत संगीत व्यक्ति के इसी अंतर पक्ष की तीव्र अभिव्यक्ति हमारे सामने प्रस्तुत करता है।

३.४.० एकांत संगीत का अनुशीलन

न जाने ऐसा कौन सा रहस्य है कि बच्चनजी ने अपने एकांत को पूर्ण रूपेण साकार किया है। बच्चन ने गीतों की इस फितरत को अपनी काव्य कृति एकांत संगीत से पलायन नहीं किया। अपने अंतर की संवेदना की पूर्ति किसी में कमियाँ दिखलाकर पूरी नहीं की, केवल नियति पर दोषारोपण किया। एकांत उसे कहते है जहाँ व्यक्ति अपने आमने सामने अकेला होता है। जहाँ वह अपनी चरम वेदना और पल-पल की तिल- तिल मृत्यु को सामने लेकर भोगता है और उसका साक्षी भी होता है। जहाँ वह निर्भय होकर अपनी और संसार की त्रासदी (दु:ख) का मुकाबला करता है। वह अकेलापन जहाँ मनुष्य भगवान से मिलता है। वह अकेलापन, जिसमें व्यक्ति अपने और सर्व के प्रति पूर्ण सचेतन (अवेयर) होता है या हुए बिना नहीं रह सकता। वह अंतिम अकेलापन, जहाँ आत्मसत्य और जगत सत्य का साक्षात्कार होता है। उसी अकेलेपन में एकाकी शिखर पर खड़े होकर बच्चन ने इस एकांत संगीत का निर्माण किया।

तट पर है तरुवर एकाकी, नौका है, सागर में,
अंतरिक्ष में खग एकाकी, तारा है अंबर में...! [१४४]

यहाँ मैं विशेषरूप से बच्चन के एकांत संगीत के गीतों में से वियोग को योग में उत्तीर्ण कराने वाली काव्य-लय का अन्वेषण करना चाँहूंगी। एकांत संगीत का पहला ही गीत इस खोज की चाबी (कुंजी) हमें सौप देता है ! यहाँ वह अपने एकांत में भगवान के सामने प्रस्तुत हुआ है। क्या इस जगत का कोई निर्माता है ? वे उससे अपनी फरियाद करना चाहते हैं।

एकांत संगीत के द्वारा बच्चन जी ने बतलाया है कि नर नारी से भरे जगत में कवि का हृदय तो सदा से ही अकेला रहता आया है, न रहें तो निज प्रीति को अत्यंत दुखी कर वह पर प्रीति तक कैसे पहुँच पाएगा ? उनका वियोग तुलसी के वियोग से कम नहीं। जब रत्नावली तुलसीदास जी को छोड़ मायके गई थी, तब तुलसीदास विक्षिप्त हो गए और वियोग के बाद ज्ञान पाकर रामचरित मानस के रचयिता बने, बच्चन जी को भी ऐसी ही स्थिति से गुजरना पड़ा। उनका अकेलापन दान्ते और रिल्के की निरन्तर वियोगिनी आत्मा का अकेलापन है और इसी वेदना के चलते दान्ते की डिजाइन कॉमेडी आयी रिल्के की डुइनो एलेजीज और सॉनेटस टू और पीयस अवतरित हुई। मैं अपने इस अनुशीलन से आधुनिक आलोचकों को यह कहना चाहूँगी कि यह काव्य जटिल और समग्र तथा वास्तविक्ता से परिपूर्ण है। इसमें एकल (अकेला) और सकल (सभी) विद्यमान हैं। संवेदना के इस संश्लिष्ट रुप को बच्चन जी ने उपरोक्त गीत में एक अत्यंत सुशिल्पित बिम्ब प्रदान किया है और पूरा गीत एक मंत्र की शक्ति से भर उठा है। बच्चन जी के गीतों में ऐसी पूर्णता की अभिव्यक्ति कई स्थानों पर मिलती है और उनकी यही उपलब्धि उन्हें बड़ा बनाने के लिए पर्याप्त है। बच्चन जी के काव्य की सबसे बड़ी सिध्दि यही है, कि उनकी अत्यंत निजी वेदना मानव मात्र की अस्तित्व मात्र की महावेदना होकर व्यक्त हुई है।

एकांत संगीत के गीतों में कई स्थानों पर विनती और चुनौती एक साथ हैं। मार और प्यार की पुकार भी एक साथ हैं। इसमें ईश्वरातीत अनाथ पुरुष के पुरुषार्थ का दावा और ललकार है। यह अपनी ही आत्मिक पुकार है जो स्वम् सर्व शक्तिमान है। यह ईश्वर को स्वीकार कर उससे भी स्वतंत्र हो जाने की आधुनिक मनुष्य की छटपटाहट है, यह एक वेदना भरे अस्तित्व कवि की शक्तिशाली नास्तिकता है। आखिर हमारे संत कवि भी इसी प्रकार अपने आराध्य देव से कहते थे।

अपने एकान्त में बच्चन जी ने अपने को देखा है। अपने होने को देखना अपने अस्तित्व को खुद परखना एक आध्यात्मिक स्थिति है। बच्चन ने जाने अनजाने में कभी इस परिस्थिति का दावा नहीं किया। परंतु अपनी आत्मवेदना में से वे आत्मा के नि:संग एकाकीपन तक अनायास पहुँचे हैं। अपने एकान्त के क्षण में पूर्ण सचेतन होकर कवि अपने को अपने से अलग कर अपने को लेटा हुआ देख रहा है। सातवॉं गीत उनके आत्मदर्शन का गीत है ।

लेटा हूँ कमरे के अंदर, बिस्तर पर अपना मन मारे !
लो, कफन ओढ़ाता आता है, कोई मेरे तन पर सारे!
अपने पर मैं ही रोता हूँ,
मैं अपनी चिता संजोता हूँ
जल जाऊँगा अपने कर से, रख अपने ऊपर अंगारे !
खिड़की से झाँक रहे तारे !
जलता है, कोई दीप नहीं, कोई भी आज समीप नहीं। [१४५]

खिड़की से झाँकते तारों की आँखों से अपने एकाकीपन की इस त्रासदी को देखना, कितना बंधक और कितना गहन काव्यानुभव है। कोई दीप नहीं जल रहा, पास में कोई नहीं है। केवल स्वयं अपने पास है वह। केवल स्वयं अपनी देहात्मा के समीप है। यह सशरीर आत्मा के सामीप्य का अवलोकन और अवगाहन है। कवि अपने ही ऊपर रोता है, अपनी चिता आप संजोता है। अपने हाथ से अपने ऊपर अँगारे रख कर जल जाने की स्थिति तक को भोगता है। ऊपर से देखने पर यह आत्म दया की कविता लगती है। लेकिन यह रेंगती हुई आत्म-दया नहीं है, यह सुलगती हुई आत्मवेदना है। यहाँ कवि केवल अपने ऊपर रोकर समाप्त नहीं होता, वह अपनी मृत्यु को स्वयं देखता है। यह एक आध्यात्मिक स्थिति है। **संत तुकाराम जी ने कहा है- आपले मरण मी आपुनी पाहिले ।** अपने मरण को मैंने अपनी आँखें से देखा। संत तुकारामजी का यह कथन बेशक शुद्ध आत्म - साक्षात्कार प्रस्तुत करता है। बच्चन की यह पंक्ति देहात्मा के साक्षात्कार पर ही रुक जाना चाहती है। क्योंकि वह देहाती होना नहीं चाहता। देह यहाँ देही में शिरकत करती है। यह आज के मनुष्य की पुकार और अभीप्सा है।

मृत्यु का साक्षात्कार बच्चन ने अनेक गीतों में उतारा है। एकान्त संगीत के दसवें गीत में -

कवि जड़ बिस्तर पर पड़ा, तम समाधि में गड़ा है। तन चेतनहीन है, महज चलती साँस का अहसास भर, कवि को रह गया है और कोई छाया पास चली आ रही : उसका तन सफेद है, पट सफेद है, उसे पास खिसकता देख कवि की छाती धक् धक् करती है।

उस छाया के हाथों में कुछ प्याला सा है, प्याले में कुछ हाला सा है और कवि जान गया है कि साकीबाला उसे क्या पिलाने ला रही है। प्रकट है कि मौत साकीबाला बन कर उसे कालकूट पिलाने आ रही है। मधुशाला के कवि को पिलाने के लिए मौत का प्याला भी साकीबाला ही वहन कर सकती है। पूरे गम में धीमे धीमे अग्रसर होती मृत्यु के अहसास को कवि ने मूर्त अमूर्त के एक अद्‌भुत संयोजन द्वारा व्यक्त किया है। ग्यारहवें गीत में कवि ने कहा है कि-

चाहा, कर दूँ चीख सवेरा,
पर मैंने अपनी पीड़ा को चुप-चुप
अश्रुकणों में घोला ! [१४६]

चरम वेदना की चीख में यह शक्ति है, कि वह फूट कर सवेरा कर सकती है, पर नहीं, वह अपनी पीड़ा को बाहर न आने देगा, चुपचाप अपने अश्रु-कणों में घुला देगा। यह पुरुषत्वहीन वेदना नहीं, अपने दु:ख को पी जाने का निदारण पुरुषार्थ है।

इन सन्दर्भों में दो और भी गीत की पंक्तियॉ अत्यंत उल्लेखनीय हैं :

एक मुर्दा गा रहा है,
बैठ कर जलती चिता पर !

और ..

चार कदम उठ कर, भरने पर
मेरी लाश चलेगी ! [१४७]

इन पंक्तियों में मरण का स्वीकार भी है, और मरण जय का उद्यापन भी है। बिना कोई संकल्प किये, यहॉ मृत्यु कवि के लिये अनायास महोत्सव हो गयी है। कवि ने यहॉ अपने देही को देह से अलग करके देखा है। अनजाने ही वह अपने मृत्यु का साक्षी हुआ है। कवि की अनन्त यातना ही यहॉ इतनी शक्तिमान हो उठी है, कि मुर्दे का भी अपनी चिता में से उठकर, गाने को मजबूर होना पड़ा है। कवि की आत्म वेदना यहॉ जयिनी हुई है। उसका गीत मौत पर समाप्त न होकर, अनन्त हो उठा है।

पॉचवें गीत का प्रथम बोल है, मेरा तन भूखा मन भूखा ! इसमें कवि अपनी तमाम भूख प्यासों के साथ नग्न होकर, भगवान के सामने खड़ा हो गया है। इसमें कण कण, जन जन की भूख प्यास को उसने समेटा है।

ऑखें खोले अगणित उडगण,
फैला है सीमाहीन गगन। [१४८]

कवि अपने एकान्त में अत्यन्त सचेतन होकर ऑखें खोल अनगिनत तारों को देखता है। सीमाहीन गगन को आरपार देखता है और सर्वदर्शिता की इस विशद भूमिका पर खड़े होकर वह जगत् के आदि कारण, आदि स्त्रोत तक पहुँचता है, मानवीय भूख प्यास के अन्तिम कारण की खोज में और वह अत्यन्त तीव्र व्यंग्य के आवेश में प्रश्न उठाता है:

मानव की अमिट वुभुक्षा में क्या अग-जग का कारण भूखा ? [१४९]

कवि के हृदय में बड़ा ही कचोटता हुआ सवाल उठा है कि, कहीं ऐसा तो नहीं है, कि मनुष्य और जगत की इस कभी न मिटने वाली भुभुक्षा में इस जग का आदि कारण वह जगदीश्वर स्वयम् ही भूखा है ? यह एक महान् पंक्ति है। यह महा काव्यात्मक इयत्ता की लकीर है। परमात्मा के प्रति चिर पीडित़ मानव - आत्मा के विद्रोह को, यहॉ एक साथ सकार और नकार के संगम पर खड़े होकर कवि ने व्यक्त किया, उसने पूर्णकाम भगवान को मनुष्य के अतृप्त काम में उतर कर, उसे पूर्णत्व देने के लिये ललकारा है। मगर एक बहुत ही सादी और खामोश पंक्ति में : क्या जग का कारण ? इस पंक्ति को मैं बच्चन काव्य का एक बहुत ही ऊर्जस्वल शिखर मानती हूँ।

कवि कहता है, जीवन की सबसे बड़ी यातना यह है कि चेतनता को जड़ता का परिधान पहनाया जाता है, देव और पशु में महान् संघर्ष छिड़ जाता है और दोनों की ही हार की बारी आती है। । संयम और असंयम दोनों का अन्तिम परिणाम एक ही होता है इस प्रकार कवि अपने स्वतन्त्र संवेदन और अन्तर मंथन से, उस पराभौतिक आत्म - सचेतना तक पहुँच सका है, जो परानैतिक (एमॉरल) पुण्य-पाप दोनों से उत्तीर्ण और परे है।

अठ्ठानवें गीत में कवि अपने एकान्त निराले एकाकीपन में, चॉदनी के आलोक में अपने साथ एक छाया को देखता है। वह ओठ भी हिलाती है, हाथ भी उठाती है। कवि के व्यथा-गीत ने ही उसके एकान्त में, उसकी अन्त - संगिनी को मूर्त कर दिया हे। इस चॉदनी रात में वह अकेला नहीं। उसकी अपनी ही नि:संग आत्मा मानों उसकी अचूक संगिनी बनकर उसके साथ आ बैठी है। कितना गहन्, आत्मीय, संस्पर्शी और प्रत्ययकारी है यह अहसास। यह कोई आदर्शीकरण नहीं, निरी धारणा नहीं, अमूर्त का अनायासिक, काव्य-रासायनिक मूर्तन है।

एकान्त संगीत के प्राय: गीतों में यह आत्म संताप और आत्म सम्भोग सतत जारी है। अपने ही साथ मुलाकात और बातचीत का आलम, अपने ही को अपने से अलग करके देखना, अस्तित्वगत वेदना के छोरों तक जाकर संदेह सचोटता के साथ, देहातीत आत्म तक का अहसास कर लेना, आदि ऐसे अनेक भाव अनुभाव स्थायीभाव एकान्त संगीत के गीतों में लयबद्ध रुप से सामने आते चले जाते हैं। यही एकमात्र ऐसा गीत - संग्रह है, जिसमें बच्चन जी ने गीतों को उसी क्रम में छपने दिया है, जिसमें वे लिखे गये। इस कारण यह गीत संग्रह कवि की चक्राकार (सायक्लिक) अनुभूतियों के विश्रृंखल लगते सिलसिले में भी, एक अद्‌भूत कोम्पलेक्स लयात्मकता और किसी परिपूर्ण राग के आरोह अवरोहों की एकाग्र समग्र संयुक्ति और समवाद का अहसास कराता है। एकान्त संगीत के गीतों में ऊपर से देखने पर प्रत्येक गीत अपने आप में स्वछन्द है, प्रत्येक का अपना निजी छन्द है, लेकिन अनुभूति की जो अन्तर धारा इन गीतों के भीतर जल की धारा की तरह बह रही है, उसके कारण इन गीतों के गहन और अवगाहन में हमें एक अनाहत छन्दोलय का साक्षात्कार होता है।

कला का क्रम गणित का क्रम होता है। इसी कारण यदि भावुक एकान्त संगीत के अन्तिम गीत में, संवेदना की चरम परिणति खोजना चाहेगा, तो उसे निराश होना पड़ेगा। वह परिणति पहले गीत में भी हो सकती है, बीच के किसी भी गीत में हो सकती है, मगर कतई जरुरी नहीं कि वह सौवें गीत में ही हो। तब यह पाठक पर छूट जाता है, कि वह अपनी पठन और अनुभव के दौरान खोज निकाले, कि किस गीत में कवि ने अपनी अनुभूति के चरम बिन्दू को स्पर्श किया है और उसे व्यक्त किया है।

वीरेन्द्र जैन ने बच्चन को महाकवि कहा है। इसमें कोई इरादा नहीं, कोई उच्छल भावुक आहोभाव का उच्छवास नहीं। इसके पीछे एक अहसास है, कवि का एक सामग्रिक प्रभामण्डल है। जिसके काव्य में आत्म-मंथन के फलस्वरुप स्वत: अविभूर्त होने वाले चौदह रत्न हों, उसे मैं महाकवि कहता हूँ। बच्चन की इस निसर्ग आभा से अनायास दीप्त दिखायी पड़ती है। महाकाव्यात्मक माप यानी एपिक-स्केल की पंक्तियॉं बच्चन काव्य में सर्वत्र बिखरी पड़ती हैं। एक ही पंक्ति लें :

यह महान् दृश्य है -
चल रहा मनुष्य है,
अश्रु-स्वेद-रक्त से , लथपथ, लथपथ, लथ पथ। [१५०]

और एक टुकड़ा आकुल अंतर से द्रष्टव्य है:

गहनांधकार में पॉव धार,
युग नयन फाड़, युग कर पसार
उठ-उठ, गिर-गिर कर बार-बार,
मैं खोज रहा हूँ अपना पथ, अपनी शंका का समाधान !

बच्चन की कविता पर उनके समीक्षकों ने अनेक आरोप लगाये हैं। बहुत तीखी आलोचना के बरसते तीरों के बीच खड़े होकर, बच्चन जी ने अपनी अछोर वेदना को अनन्त जीवन के गीत में परिणित करते हुए गाया है। कहा गया है कि बच्चन व्यक्तिवादी है, आत्मरति से ग्रस्त है, वह घोर निराशावादी है, वह मृत्यु और शोक का गायक है, वह समाज से कटा हुआ है। उसका अकेलापन उसकी विकृत चेतना का परिचायक है आदि।

लेकिन आप एकान्त संगीत के गीतों को ही गौर से पढ़ कर देखें, तो पायेंगे, कि बारम्बार कवि ने अपने एकाकीपन की छोरान्त वेदना में, एकन्त न होने की व्याकुल इच्छा व्यक्त की है। नर-नारी से भरे जगत में नितान्त अकेले पड़कर भी, उस उत्सव में संयुक्त और घटित होने की एक तीव्र ऊष्म अभीप्सा से बार बार उसके गीत अच्छवासित और वाष्पित हुए हैं। क्या इसे अनदेखा किया जा सकता है ? बेशक तथाकथित सामाजिक यथार्थ ऊपर से ओढ़ कर अपनी कविता में समाजवादी नारे बुलन्दी करना बच्चन ने कुबूल न किया। क्योंकि वह झूठी, ऊपरी सतही चीज है।

बच्चन एक मूलगामी का कवि है। उसकी अकेली पड़ गई, विरहित हो गई व्यष्टि ने बड़ी ही अतल स्फूर्ति पीड़ा के साथ समष्टि से जुड़ने, उसके साथ तदाकार होने का आकुल निवेदन अपने गीतों में उच्चरित किया है। अत्यन्त एकाकी हो कर ही सर्वात्मभाव के वैश्विक स्तर पर उन्नति होने की कशमकश के द्योतक हैं। बच्चन जी मूलत: सर्वात्मभावी, एकमेक, एकाकी आत्मा के खोजी कवि हैं।

कवि ने अपनी एकान्तिक आत्मलीनता में से जग कर, अपने को झंझोड़ते हुए कहा है :

तू एकाकी तो गुनहगार !
अपने प्रति हो कर दयावान
तू करता अपना अश्रुपान,
जब खडा मॉगता दग्ध विश्व
तेरे नयनों की सजल धार।

तू एकाकी तो गुनहगार।
अपने अन्तस्तल की कराह
पर तू करता है त्राहि त्राहि,
जब ध्वनित धरणि पर, अम्बार में,
चिर विकल विश्व का चीत्कार। [१५१]

यह गीत बच्चन की सम्पूर्ण काव्योपलब्धि का एक विशिष्ट शिखर है। यह वह मुकाम है, जहॉ कवि ने अपने जीते जी मृत्यु की महारात्रि से गुजर कर, बरसों व्यापी अग्निस्नान से पार होकर, अपनी आत्यन्तिक संवेदना में से ही संयुक्त (इन्टीग्रल) सत्ता के यथार्थ स्वर का साक्षात्कार किया है। अन्तिम छन्द में यह साक्षात्कार एक तीव्र, सतेज, पारगामी अनुभूति के साथ सामने आता है यह कोई आदर्शवादी, नैतिकवादी या समाजवादी मूल्य-स्थल नहीं, पीड़ा के उलझाव की परा सीमा पर ही, प्रजा की ऑख खुल उठी है। कवि अपने सीमित, व्यक्तिगत यथार्थ को अतिक्रान्त कर, अपने सच्चे स्थायी सामग्रिक यथार्थ में जाग उठा है।

कवि को स्पष्ट और सचोट प्रतीति हुई है, कि अपने सीमित मैं, में ही बेहद लीन होने के कारण वह दृष्टिहीन हो गया था। सत्ता को जीवन की समग्रता में नहीं देख पा रहा था। इसी से वही एकांकी और मलिन यानी हततेज हो गया था। दृष्टिहीन, एकाकी मलीन, जीवन-क्षीण-- ये सारी शब्दावली अनुभूति में से आई है, अपने ह्रास की आत्मसंचेतना में से आई है, यह आदर्शीकरण का उद्‌गार नहीं।

यह महज सामाजिक यथार्थ का साक्षात्कार नहीं, यह अन्तिम और आत्मिक यथार्थ का साक्षात्कार है। समाजिक यथार्थ इसमें समाविष्ट है, पर कवि उस पर समाप्त नहीं। वह समग्र वैश्विक यथार्थ पर पहुँच कर ही, ऐसी प्रज्ञानात्मक और अन्तिम वाणी उच्चारित कर सका है, यहॉ पहुँच कर उसने चिर विकल विश्व की चीत्कार सुनी है और उसकी चोट से जागकर वह अपने से बाहर निकल आया है और देखा है कि सामने सारा विश्व बॉहें पसारकर उसे अलिंगन में बॉध लेने को खड़ा हैं। वह अकेला नहीं है। सबका है, सबके साथ है, सबके द्वारा आलिंगित है। यह कनफेशन है, आत्म निवेदन है

और बच्चन कनफेशन और आत्म निवेदन के हिन्दी में अपने ढंग के एक विलक्षण कवि हैं।

एकान्त संगीत के सातवें संस्करण की भूमिका में बच्चन ने एक बहुत समाधानकारी बात कही है, जो उनके समूचे कवि के सम्यक आकलन में बहुत सहायक होती है। उन्होंने कहा है कि निशा निमंत्रण, एकान्त संगीत और आकुल अन्तर के गीतों में विषय वस्तुगत भिन्नता नहीं है। ये तीनों संग्रह मिल कर, एक ही अखण्ड कविता है। इन तीनों में अनुभूति की एक ही अजस्त्र अटूट धारा बह रही है। ये संयुक्त, सांगिक (ऑर्गनिक) रुप से एक ही सम्पूर्ण रचना है। अनुभूति की जो लय निशा निमन्त्रण में आरम्भ हुई है, वह एक स्वाभाविक और यथार्थ जीवनानुभव की क्रमिक प्रक्रिया से गुजरती हुई आकुल अन्तर के ऊपर उद्धत गीत में अपनी चरम परिणति पर पहुँची है और कवि का सुझाव करके, उसे नाम दिया जा सकता है ---- तमसो मा ज्योतिर्गमय इन तीनों को क्रमश: एक साथ पढ़ कर ही बच्चन के साथ न्याय किया जा सकता हे। क्योंकि निशा निमन्त्रण में जो अनुभूति की लय आरम्भ हुई थी, वह आकुल अन्तर में ही अपने समापन पर पहुँची है।

उपरोक्त गीत में वही समापन सामने आता है और तब कहने को जी चाहता है कि बच्चन अन्धकार से अन्तत: प्रकाश की ओर ले जाने वाला एक शाश्वत सूर्योदयी कवि है।

मेरे विचारानुसार एकांत संगीत में आस्था और प्रकाश की किरणें दु:ख के आकाश में उदयमान हुई सी प्रतीत होती हैं। मैं जब इसका अवलोकन कर रही थी तब ज्ञात हुआ कि निशा निमंत्रण की घोर निराशा यहॉ उत्तरार्ध में दिखाई पड़ती है। जो समाप्ति के कगार पर है उसमें कवि बच्चन जी ने कहा है आओ सो जाएँ मर जाएँ परंतु यह हृदयघाती निराशा बच्चन जी के जीने की अभिलाषा को न छीन सकी। इस जिजीविषा (इच्छा) पर उसका एकमेव अधिकार है। इसकी अवहेलना कोई नहीं कर सकता। उनकी स्वयं की, नाराजगी इसतरह व्यक्त हुई है-

कहने की सीमा होती है,
सहने की सीमा होती है,
कुछ मेरे भी वश में,
मेरा कुछ सोच-समझ अपमान करो। [१५२]

यही एकांत संगीत का मूल स्वर रहा है।

एकांत संगीत अकेले व्यक्ति के उस अकेलेपन का संगीत है जो निश्चित ही उसका अपना है। इस काव्य संग्रह में बच्चन जी ने अपने आत्म्दान स्वान्त सुखाय के रुप में किया है। इस स्वत: सुखाय में इस मानस का प्रतिबिम्ब है जो सामाजिक दृष्टि से चाहे अपनाने योग्य न समझा जाये किन्तु व्यक्तिगत स्तर पर उसका मूल्य है। संसार में हर व्यक्ति को कभी न कभी अकेलेपन की इस अवस्था से गुजरना पड़ता है। जबकि इन संघर्षों, संकल्पों से उभरे उत्साह के पीछे अभावों, संवेदनाओं की पीड़ा होती है।

एकांत संगीत में कवि बच्चन ने समझाने का प्रयत्न किया है कि अवसाद, अन्धकार की छाया उदासी यदि भाग्य की देन है तो इस स्थूल पक्ष का सूक्ष्म पक्ष व्यक्ति की अंतरिम शक्ति है संघर्षो से जूझने की हल्की सी रोशनी की ज्योति भी अंधेरे में उजियारा करने की क्षमता रखती है।

यही कवि बच्चन के साथ हुआ। मैं यह नहीं कहती हूँ कि बच्चन जी अर्न्तमुखी प्रवृत्तियों से नहीं घिरे थे या अर्न्तमन् के भटकाव में नहीं डूबे थे। गहन अंधकारमय जीवन को छू कर वे प्रकाश स्त्रोत की ओर लौटे थे।

दीपक है नभ के अंगारे
चलो इन्हीं के साथ-सहारे;
राह ? नहीं है राह यहॉ पर,
अपनी राह बनाओ ! [१५३]

कवि बच्चन जीवन के प्रति आस्थावादी रहे हैं, इसलिए उनकी संवेदनायें अवसाद को काटकर नूतन कामनाओं के पल्लव, पत्र, पुष्प और फल दे सकी हैं। बच्चन जी ने अपने जीवन में गहन, गंभीर मूल्य अदा किया है। अनेक प्रकार के द्वन्दों को झेला है।

एकांत संगीत में आशा निराशा के स्वर मुखरित हुए हैं। व्यक्तिवादी स्वर में निराशावाद और पलायन के जितने भी आरोप लगाएँ जायें लेकिन बच्चन जी ने सर्वत्र एक अनूठे और नये रुप में एकांत संगीत में अपने पैर जमाएँ है।

देन बड़ी यह सबसे यह विधि की है
समता इससे किस निधि की ?
दुखी दुखी को कहो, भूलकर उसे न दीन कहो।
दुखी मन से कुछ भी न कहो। [१५४]

जीवन अग्निपथ है, संघर्षोन्मुख संघर्षरत मनुष्य ने क्या कभी हार मानी है ? यही मनुष्यता बच्चन जी की सही जीवन कसौटी है। [१५५]

इस बिन्दु पर पहुँचकर, मुझे लगता है कि आज के दिशाहारा और अँधेरे युग में फिर से बच्चन के काव्य का पुर्नमूल्यांकन जरुरी हो गया है । छायावाद का रोमानी स्वप्न बच्चन के भीतर कठोर वास्तव की चट्टान से टकराया था और उससे हिन्दी कविता में एक युगान्तर उपस्थित हुआ था। लेकिन बच्चन जी ने स्वप्न को टूटने न दिया, उसे आरक्षित रखा। उसे जीवन की पथरीली माटी में मूर्त करने का महाप्रयत्न और संघर्ष किया। सपना लहूलुहान हुआ जरुर, मगर वह अटल रहा बच्चन के स्वप्न से उद्दीप्त संघर्ष काव्य में रोशनी की कोई नई दरार दिख जाये, तो आश्चर्य नहीं।

अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ !
वृक्ष हों भले खड़े, हों घने, हों बड़े,
एक पत्र-छाँह भी माँग मत, माँग मत, माँग मत !
अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ !

तू न थकेगा कभी ! तू न थमेगा कभी !
तू न मुड़ेगा कभी ! कर शपथ, कर शपथ, कर शपथ !
अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ !

यह महान दृश्य है, चल रहा मनुष्य है
अश्रु-स्वेद रक्त से लथपथ, लथपथ, लथपथ !
अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! [१५५]

३.४.१ आकुल अंतर - परिचय

आकुल अंतर बच्चनजी की वह रचना है जो कि सन् १९४३ में ७१ कविताओं के संग्रह के रूप में प्रकाशित हुई थी। पहली कविता ही बतलाती है कि, लहर सागर का श्रृंगार नहीं उसकी विकलता है। इस काव्य संग्रह का रचना काल १९४० से १९४२ के मध्य का है। आत्मकेंद्रित एकांत संगीत का करुण स्वर आकुल अंतर को चीरकर बाहर फूट पड़ा है। इस कविता संग्रह में कवि बच्चनजी ने अंधकार को चीरकर बाहर निकलने की छटपटाहट को व्यक्त किया है। आकुल अंतर में कवि बच्चनजी ने व्यक्तिगत विषाद से उबरकर और उभरकर गीत गाने का प्रत्यक्ष प्रयास किया है।

आकुल अंतर के गीत निराशा के नहीं आशा और आस्था तथा अस्तित्व बोध के गीत हैं। आकुल अंतर की भाषा में कोई विशेष परिवर्तन नहीं दिखलाई पड़ता है। इन कविताओं में सशक्त कलाकारिता तथा वास्तविकता के उतोस्पष्ट दर्शन नहीं होते हैं जितने कि पहले के काव्य संग्रहों में होते हैं। हाँ इतना जरूर है कि कवि बच्चन जी ने एकात्मता की लयकारी का सृजन इस काव्य में लिखा है। मानव जीवन का अस्तित्व अपने समसामयिक परिस्थिति में कवि को अपनी लेखनी से शब्दबद्ध करवाता है। जिससे वे कह उठता है-

'बदला ले लो सुख की घड़ियो' [१५६]

निशा निमंत्रण में जो दु:ख की प्रतिमा उभर कर उतरी थी वह एकांत संगीत की गलियों से होते हुए आकुल अंतर में आकर मन को सहारा देने लगी। जहाँ गहरा अँधकार है वही प्रकाश की पहली किरण का भी आविर्भाव होता है। आकुल अंतर के सभी ७१ गीत जिनमें अंतर की पुकार है वे सभी उनमें कल्पना के पर लगाकर स्वप्निल दुनिया में कही खो नहीं जाती है, बल्कि अन्य कलाओं में भी उसे ढूंढ निकालती है। दुखियों को परेशान करना कवि बच्चन जी को कभी रास नहीं आया है।

इस काव्य संग्रह की विशेषता यह है कि इसमें के गीत मानव को थककर बैठना नहीं अपितु उसे उनसे जूझना सिखलाते है। मानव के विवेक के अंकुश से ही विद्रोह का स्वर दबा हुआ है। विद्रोह का यही स्वर जरूरत पड़ने पर जगह-जगह पर दो गुने, तीन गुने, चौगुने और उससे भी कई गुना अधिक जोर से फूट पड़ता है। इसकी विशेषता यह भी है कि इसका रचनाकाल सुख तथा दु:ख के क्षितिज पर हुआ है जिसके एक ओर

एकांत संगीत की विकलता थी तो दूसरी तरु सतरंगिनी के सात रंगों की छटा प्रेम के आकाश में इंद्रधनुष को बिखराती हुई आगे बढ़ रही है।

बच्चन जी का आकुल अंतर अंतत: शांत और शीतल है। बच्चन जी ने इस काव्य में अपने को किस प्रकार अकेले पाया किस प्रकार चाह कर भी अपना दु:ख किसी के आगे क्यों नही आने दिया। इसका कारण था कि वे अपने दु:ख को किसी के आगे प्रकटित कर अपने प्रियजनों को दु:खी नहीं करना चाहते थे। उनका मानना था कि जब सुख के क्षणों को अकेले काटा है, तो दु:ख के क्षण भी अकेले काटने का मैं ही भागी हूँ। तमसो माँ ज्योर्तिगमय की बात को उन्होंने अपने जीवन में, काव्य में हमेशा प्राथमिकता दी है। उनका मानना था कि जहाँ घना अंधेरा होता है वहीं से सुबह की शुरुआत भी होती है। आकुल अंतर के गीतों से, वे आने वाले सुख के दिनों का इंतजार कर रहे थे।

३.४.२ आकुल अंतर का अनुशीलन

आकुल अंतर में कवि बच्चन जी ने बतलाया है कि मानव की लड़ाई क्षण प्रतिक्षण चलती रहती है। अपने विचारों से वह धोखा खाता है, हारता है, पर झुकता नहीं है। वह ऐसे गीत गाता है जिससे मानव समाज को नई चेतना, नई दिशा और नवयुग में प्रवेश की प्रेरणा मिले, जैसे कि हम सभी जानते हैं कि आकुल अंतर में लिखी कविताओं का सफर एकांत संगीत से सतरंगिनी के बीच का है। एकांत संगीत के विषादमय (दु:ख) सुरों से संघर्ष कर बच्चन जी उसके बाहर आने के लिए छटपटा रहे थे, तभी उन्होंने 'आकुल अंतर' के द्वारा बाहर आने की राह पाई। आकुल अंतर वह शुरुवात थी जिसके द्वारा बच्चन जी फिर जग, जीवन से बँधे, पारिवारिक जीवन में व्यस्त हो गए। यह वह बेला थी, जब कविवर्य बच्चन जी ने जीवन के इन्द्रधनुषी पन्नों को संतरंगिनी तथा मिलन यामिनी का स्वर दिया था। आकुल अंतर की कई पंक्तियों में जीवन की घोर निराशा दिखलाई पड़ती है।

इसके पूर्व श्यामा जी की मृत्यु ने उनको तोड़ कर रख दिया था, उनकी चेतना विवाद ग्रस्त हो गई थी। यह ऐसे संघर्ष का समय था जब जन्मदात्री माता तथा जन्म भर साथ निभाने वाली पत्नी दोनों ही मृत्यु के आगोश की ओर बढ़ रही थीं। उनके मन का कवि दोनों के बीच उलझ कर रह गया था। जैसा कि हम जानते हैं कि कविवर्य बच्चन जी ने सारी संवेदनाओं को अपने मन में सँजो कर रखा और फिर इस दु:ख की गहरी अँधेरी रात के बीतने पर उसे शब्दबद्ध कर आकुल अंतर के अंतर्गत सुसूत्रीकृत रुप में शब्दों की माला के रुप में अपने पाठकों के सामने प्रस्तुत किया।

आकुल अंतर के गीतों में बच्चन जी की सशक्त लेखन कला तथा स्वाभिकता के दर्शन होते हैं। इन गीतों में मन इतना तल्लीन हो जाता है कि अनुभूति और अभिव्यक्ति की तीव्रता तथा सुदंरता की झलक दिखाई पड़ती है। आकुल अंतर में मानव जीवन की अस्तित्व सापेक्षिता का अभिव्यंजनात्मक प्रस्तुतीकरण दृष्टिगोचर होता है। मानव मन की परिस्थितियों से हुई लड़ाई का वर्णन विशेष भी कहा जा सकता है। बच्चन जी ने दु:ख के साथ सुख का भी स्वागत इस काव्य संग्रह में किया है।

पूछ मत आराध्य कैसा, जब कि पूजा-भाव उमड़ा;
मृत्तिका के पिंड से कह दे, कि तू भगवान बन जा ।
जानकर अनजान बन जा। [१५७]

मैंने इसे पढ़ते हुए यही जाना है कि कहीं भी इसमें पलायनवाद के दर्शन नहीं हुए हैं। इसमें रचित रचनाएँ निराशा की ही नहीं हैं, परंतु कुछ गीत आशा, आस्था और अस्तित्व बोध के भी हैं। आकुल अंतर की भाषा के भाव एकांत संगीत से काफी मिलते जुलते हैं। प्रत्येक गीत एक स्वतंत्र मुक्तक होते हुए भी भाव समुच्चय के अंत:सूत्र में पिरोया गया है। अगर तुलना करके देखे तो एकान्त संगीत के गीतों में स्पष्ट जान पड़ता है कि एकात्म केंद्रित मनुष्य के घोर विषाद और चीत्कार की ध्वनि का स्वर मुखरित हो रहा है। उन गीतों के माध्यम से वही आकुल अंतर के गीत उस चीत्कार शोर को हटाकर जगत्गत में स्वयं को ही लीन करने के लक्ष्य को इशारा कर रहें हैं। यहाँ तक के पड़ाव पर आते आते कविश्री बच्चन जी की भावनाओं पर विवेक का अंकुश आ गया है। उनके मन का विद्रोह जो कि पूरे समाज के लिए था, अब सारे जगत् से समझौता करने को तैयार है। अपनी कविताओं में उन्होंने कुछ इस प्रकार दर्शाया है।-

"चिड़ियाँ चहकीं, कलियाँ महकीं, पूरब से फिर सूरज निकला,
जैसे होती थी सुबह हुई, क्यों सोते-सोते सोचा था,
होगी प्रात: कुछ बात नई। लो दिन बीता, लो रात गई।" [१५८]

सुख दु:ख की ऑख मिचौनी के बारे में वे अब जानकर अनजान नही बने रहे। दु:ख की काली निशा के बाद उजाले वाली सुबह भी आती है और वे उसका स्वागत करने को विकल हैं, पर इसके पूर्व ईश्वर को मंजूर कुछ और ही था। केवल पीड़ा का सागर उनके सामने लहरा रहा था। जीवन की नाव दु:ख के अथाह सागर में डूबती नजर आ रही थी। यहाँ कुँआ, वहाँ खाई का हाल बना था । जब बच्चन जी महापीर

(घनघोर दु:ख) की समाप्ति का अनुभव करते है, जो विधाता ने बच्चन जी के सिर पर चलाई थी, उनकी प्राण प्रिया को उनसे छीन कर उनका जीवन छिन्न-भिन्न कर दिया था। लगातार दो वर्षो तक वे दु:ख की वेदना में झुलसते रहे जलते रहे, तड़पते रहे, पर जैसे आग में जलकर ही सोना कुंदन बनता है उसी प्रकार उनका काव्य भी जब मुखरित हुआ तो हर शब्द स्वर्णिम आभा को लिए हिंदी काव्य जगत में प्रकटित हुआ जो आज हिंदी के साहित्य संसार की अनमोल निधि के रुप में हमारे सामने आकुल अंतर के रुप में है ।

मेरे मानस की महापीर, जो चली विधाता के सिर पर,
गिरने को बनकर वज्र शाप, जो चली भस्म करने को,
यह निखिल सृष्टि बन प्रलय ताप; होती समाप्त अब वही पीर। [१५९]

मुझे ऐसा लगता है कि आकुल अंतर के गीतों में भावुकता की मात्रा कम है। जीवनावलोकन, रिश्ते-नाते समाज बंधन के प्रति विवेक और तर्क अधिक मात्रा में देखने को मिलते हैं। कुछ-कुछ गीत तो कल्पना से दूर निकल आए हैं, ऐसे शुष्क हैं कि भावार्थ लगाना भी कठिन प्रतीत होता है और इसके विपरीत कुछ गीत ऐसे है कि वे महानता की सीमा पार कर गए हैं। उनमें इतना माधुर्य भरा है कि अकथनीय हो पाए हैं। इन कविताओं की रचना काल बच्चन जी के जीवन का उहापोह (असमंजस) का काल था। इसमें बच्चन जी ने नवसृजनात्मक आशा से प्रेरित कविताओं का परिचय करवाया है, जैसे दलदल में फंसा व्यक्ति अपने को दलदल से बाहर पाकर आनंद विभोर हो जाता है, और जीवन की ओर आशा उमंग से भागता है। सुख के पल को जीने के लिए वही हाल उनका था।

इस सृजन काल में युग सामयिक संघर्ष के ऊपर एक संकल्प शक्ति व साहसी पुरुष का मनोबल मुखरित हुआ है। यही आकुल अंतर के गीतों में दृष्टव्य है। इसमें के कुछ गीत ऐसे हैं, जिन्हें जो सुख और दु:ख दोनों ही क्षणों में गाकर जीवन का आनंद लिया जा सकता है। बच्चन जी ने मर्मभेदी दु:ख के ऊपर सुख की अद्वितीय अभिव्यक्ति की है। आकुल अंतर के अंतर्गत वे मानव को ललकारते हैं-

उठ समय से मोर्चा ले,
जिस धरा से यत्न युग-युग, कर उठे पूर्वज मनुज के,
हो मनुज संतान तू, उस पर पड़ा है शर्म खाले,
उठ समय से मोर्चा ले। [१६०]

आकुल अंतर की रचनाओं में भावों की अभिव्यंजना कहीं कहीं बहुत शक्तिशाली रुप में दिखाई पड़ती है। यह बात बहुत कम लोग जानते है कि लघु छंदो में लिखी गई खड़ी बोली की थोड़ी सी कविताओं में बच्चन जी की आकुल अंतर की रचनाओं का बड़ा महत्व है। इसकी कुछ कविताओं में मर्मस्पर्शी व्यथा की नींव पर एक व्यापक जीवन दर्शन के प्रसाद (गृह) का निर्माण हुआ है। जीवन की कटुता तथा उसकी विकट परिस्थितियों की प्रतीती भी उन्होंने इस काव्य संग्रह से करवाई है। कई कविताओं को पढ़ते समय ऐसा लगता है कि वे कविताएं हमारे निजी जीवन के कुछ अनछुए पहलुओं से ही ली गई हैं, क्योंकि वे जीवन की कठोर वास्तविकताएँ जो कभी न कभी हम सबके समक्ष उद्‌भूत हुई हैं, जहॉ हमने मधुशाला में मस्ती का रंग प्राप्त किया है, वही आकुल अंतर में कर्मठता और आशा का संदेश भी प्राप्त किए हैं।

भाव घनता (घाघोर दु:ख) गीती काव्य का प्राण तत्व है। भाव की गहराई पर ही आकुल अंतर का निर्माण हुआ है। आकुल अंतर बुद्‌धि का काव्य न होकर हृदय का काव्य है। बच्चन जी के इस काव्य संग्रह में भावों की विविधता नहीं है पर अंतर दशा की सघनता तथा सबलता दृष्टिगोचर होती है। उनकी अनेक रचनाओं में निराश तथा उत्कल पीड़ा व्यक्त हुई है। अपनी तीव्र वेदना को उन्होंने इस प्रकार व्यक्त किया है

"कौन है जो दूसरे को, दु:ख अपना दे सकेगा,
कौन है जो दूसरे से, दु:ख उसका ले सकेगा?
क्यों हमारे बीच रहें धोखे का व्यापार जारी,
क्या करुॅ संवेदना लेकर तुम्हारी।" [१६१]

आकुल अंतर की अंतर्गत की रचनाओं को जीवन से विलग नहीं किया जा सकता है क्योंकि जो भी बच्चन जी ने पाया, उस को कविता के साँचे में ढालकर अपने पाठकों तथा श्रोताओं तक पहुॅचाया। यही कारण है कि उनके गीतों में मधुरता की भाषा अनायास ही प्रकटित हो जाती है ।

डॉ. रणवीर का कहना है कि अनुभूति और अभिव्यक्ति का मणिकांचन योग बच्चन जी के काव्य की उपलब्धि है और यही उनकी कविता की लोकप्रियता का भी रहस्य है। सुख दु:ख का जो सांमजस्य उन्होंने आकुल अंतर में लिखा है वह अकथनीय है। [१६२]

निशा निमंत्रण और एकांत संगीत का रचनाकाल कवि के लिए आत्म साक्षात्कार का समय था। इन काव्य संग्रहों में भाग्य चक्र की चक्की में पिसा हुआ मानव और उसकी कुचली हुई भावनाओं के मिले जुले स्वर सुनाई देते हैं। श्री कल्याणमल लोढा जी के अनुसार 'निशानिमंत्रण का एक गीत, एकांत संगीत का हर स्वर और आकुल अंतर का प्रत्येक स्पंदन इस मानव के मन की वेदना की सजीव मूर्ति है । एकांत संगीत से आकुल अ़ंतर तक आते आते कवि समझ गया है कि अकेले जीवन बिताना एक गुनाह है वियोग की काली निशा के साथ और एकांत संगीत के विषादमय सुरों से संघर्ष करके आकुल अंतर में आकर वह जग जीवन से भी मिलता है । बाँहें पसारे जीवन राग के साथ तादात्म्य स्थापित करता है । इस काव्य संग्रह में बच्चन जी के स्वर की दृढ़ता भी जान पड़ती है, कला का सामर्थ्य भी खुलकर उभरा है, थोड़ा कहना ज्यादा समझना इस काव्य की खासियत है ।'

संदर्भिका (अध्याय ३) -

[६०] संपादक परशुराम चतुर्वेदी; मीराबाई की पदावली- पृ. ११२

[६१], [६५], [६८], [७१], [७३] बच्चन; एकान्त संगीत, कविता ४, ३८, ८३

[६२] जयशंकर प्रसाद; आंसू ;कविता संग्रह

[६३], [६६] सं. रमेश गुप्त; बच्चन निकष पर; लेख

[६४] [७२] बच्चन; निशा निमंत्रण;कविता १, २१

[६७] बच्चन; त्रिभंगिमा

[६९] सुमित्रानंदन पंत, बच्चन का कवित्व तथा काव्य

[७०] बच्चन; मिलन यामिनी

[७४] सं.रमेश गुप्त; बच्चन निकष पर; भोलानाथ तिवारी रीडर, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्व विद्यालय

[७५], [७७], [७८], [७९] , [८०], [८१] , [८२] बच्चन; मधुशाला;

कविता १८,४,५०,६,१७,४८,२६

[७६] सं. बांके बिहारी भट्नागर;लोकप्रिय कवि बच्चन; कल्याण मल लोढा का लेख

[८३] सं.रमेश गुप्त; बच्चन निकष पर

[८४] बच्चन; मधुशाला; कविता ५७ (चौदहवाँ संस्करण)

[८५], [८६], [८७], [८८], [९०], बच्चन; मधुशाला; कविता ९, ७०, १३१,३७,२४

[८९] डा. के.जी. कदम ; कवि श्री बच्चन - व्यक्ति और दर्शन

[९१] [९२], [९९] बच्चन; मधुबाला ;मालिक मधुशाला कविता १, १५ प्यास;कविता ८ पृष्ठ ७०

[९३], [९४] बच्चन; मधुबाला ; मधुपाई; कविता २, १

[९५] बच्चन; मधुबाला ; सुराही ;कविता १६ पृष्ठ ५०

[९६], [१०७] , [१०८] बच्चन; मधुबाला ; कविता ५ पृष्ठ २६, कविता १, २

[९७], [१०९], [११०] बच्चन; मधुबाला ; हाला; कविता ८ पृष्ठ ६२, प्याला कविता ५ पृष्ठ ५३, प्याला

[९८] बच्चन; मधुबाला ; जीवन तरुवर; कविता ३ पृष्ठ ६५

[१००] [१०१] बच्चन; मधुबाला ; बुलबुल; कविता ८ पृष्ठ ७७

[१०२] बच्चन; मधुबाला ; पाटलमाल ; कविता ६

[१०३] बच्चन; मधुबाला ग्यारहवां संस्करण ;इस पार उस पार; कविता १

[१०४] बच्चन; मधुबाला; पगध्वनि; कविता ३ पृष्ठ ९२

[१०५] बच्चन; मधुकाव्य; जयप्रकाश भाटी पुरातन पिपासा का मुखरण पृष्ठ १९०

[१०६] बच्चन; मधुबाला; पथ का गीत; कविता १

[१११], [११२] बच्चन; मधुकलश सातवाँ संस्करण; हलाहल

[११३] [११४] [११५] बच्चन; मधुकलश; पथभ्रष्ट कविता ६ ; मांझी कविता ५, मधुकलश कविता १०

[११६] बच्चन; मधुकलश; लहरों का निमंत्रण;कविता ८

[११७] बच्चन; मधुकलश ; पथभ्रष्ट; कविता ७

[११८] से [१२६] बच्चन; मधुकलश आठवॉ संस्करण; कवि की वासना कविता ६; पथभ्रष्ट; लहरों का निमंत्रण; कवि की निराशा कविता ३, ९ ; गुलहजारा कविता ५

[१२७] से [१३६], [१३८] से [१४०] बच्चन; निशा निमंत्रण;कविता १, ५४, ८, १०, ११, १९, ३२, ३५, ६०, ८२, ४२, ९६, १००

[१३७] बच्चन; प्रतिनिधि कविताएँ

[१४१], [१४३] बच्चन; एकांत संगीत; कविता १००, ९२;

[१४२] बच्चन निकष पर; एकांत संगीत की लय-वीरेन्द्र जैन, पृष्ठ ९२

[१४४] से [१४९] बच्चन; एकांत संगीत; कविता ७, ११, पृष्ठ १६, कविता ५, ५

[१५०] से [१५५] बच्चन; एकांत संगीत; कविता ७३, १, पृष्ठ १८, कविता ७३

[१५६] से [१६१] बच्चन; आकुल अंतर; गीत ३; गीत ६; गीत २६, २२,६२

[१६२] डा. रणबीर; अनुभूती और अभिव्यक्ति पृष्ठ ८२

अध्याय-चार

बच्चन की कविताओं की प्रस्तुति का कलेवर

अध्याय-चार
बच्चनजी की कविताओं की प्रस्तुति का कलेवर

हिंदी कविता को वर्तमान समय में श्रेष्ठतम् साहित्य समाज के समकक्ष लाने में जिन कवियों का योगदान हुआ है, उनमें कवि बच्चन को विशिष्ट स्थान प्राप्त है, परन्तु आलोचक जब इसे अपनी कसौटी पर कसते हैं, तो बच्चन उस पर खरे नहीं उतरते। आलोचक अपनी विशिष्ट धारणा और मान्यता की कुण्ठा को ले कर आगे बढ़ता है और कला का मूल्यांकन करते समय वह संवेदना तत्व से दूर बहक कर कला में अपनी मान्यताओं को ढूँढने का प्रयास करने लगता है।

बच्चन की कविता की मूल आत्मा गेय है। गीति तत्वों का सीधा तात्पर्य संगीतात्मक और लयात्मक ध्वनि संयोजन से है। ये दोनों ही ध्वनि संयोजन, काव्य की रचना को अंत:राग से सूत्रीकृत करती है और इस प्रक्रिया में ही जीवन सौन्दर्य का गुम्फन हो जाता है।

बच्चन जी शब्दों के कुबेर हैं। भाव निर्वाह में दिग्विजयी हैं। बच्चन ऊपर से कठोर और भीतर से नर्म हैं। भोली भावना से उनके कवि कार्य का प्रारम्भ हुआ था और भविष्य में उसी समय पर उनकी भावनाएँ टकराई होंगी, ऐसी मेरी धारणा है। बच्चन जी का व्यक्तित्व और कृतित्व प्रयोजनशील और सृजनशील है। अपनी क्रियाशीलता में वह आस्थावान है। कवि का कार्य कर्मयोगी के रुप में, आपका व्यक्तित्व चिर संयुक्त है।

४.१ बच्चन की भाषा व काव्यशैली

बच्चन जी हमारे युग के सहजतम कवियों में से रहे हैं। उनकी कविता समय के साथ हुई अनुभूतियों से ओतप्रोत थी। बच्चन जी ने अपनी रचना प्रक्रिया को स्वत: स्पष्ट किया है। बच्चन जी कहते हैं, मैने कविताएँ लिखी हैं, छपाई हैं, सुनाई हैं, आप उन्हें पढ़, सुनकर उन से किसी प्रकार का आनन्द प्राप्त करते रहते हैं और अब आपकी जिज्ञासा यह जानने की हुई है कि मैं कविता कैसे लिखता हूँ, कब लिखता हूँ आदि आदि । यदि कविता का रस लेना आम रस लेने जैसा ही होता तो मैं आपको आम खाने से मतलब है कि पेड़ गिनने से, की कहावत को दुहरा कर आपका मुँह बन्द कर देता। पेड़ गिनने से आम के रस के स्वाद में किसी प्रकार का अंतर नही आता है, परन्तु काव्य के संबंध में यदि इन प्रश्नों के उत्तर दे दिए जायें तो इसके रस में अंतर आ जायेगा। इसी जिज्ञासा के आधार पर कविता का आस्वादन करने वालों को दो दलों में

विभक्त किया जा सकता है। एक तो वह जो कविता से मिलने वाले आनन्द पर संतुष्ट हो जाता है और उसके विषय में कोई प्रश्न नहीं पूछता। दूसरा वह जिसमें हृदय के साथ मस्तिष्क, भावना के साथ बुध्दि भी सक्रिय होती है और वह इसके विषय में इस प्रकार की जिज्ञासाएँ रखता है। यह वही प्रवृत्ति है जो विकसित होकर समालोचक को जन्म देती है। जाहिर है कि केवल आनन्द लेने वालों का दल बड़ा और समालोचकों का दल छोटा है पर प्रवृत्ति अस्वाभाविक नहीं है। लोग आम भी खाते हैं और पेड़ भी गिनते है अन्यथा यह कहावत नहीं बनती।

परन्तु इनमें परस्पर विरोधाभास परिलक्षित होता है। पेड़ गिनना जितना आसान काम है उतना यह बता देना नहीं कि रचना कैसे की जाती है। रचना यदि सच्चे अर्थो में रचना हें, जिसमें रचनाकार का परिपूर्ण व्यक्तित्व तल्लीन हो, तो वह सृजनात्मक प्रक्रिया है। सृजन कैसे होता है, इसे जानना या बतलाना विश्लेषणात्मक प्रक्रिया है और यह सर्वमान्य धारणा है कि सृजन के क्षण में विश्लेषण और विश्लेषण के क्षण में सृजन नहीं हो सकता। रचना प्रक्रिया जानने की जिज्ञासा हो भी, तो उसे सम्यक रुप से शान्त करने के लिए कोई सर्जक समर्थ हो सकेगा, इसमें मुझे संदेह है। केवल रचना के विश्लेषण से रचना प्रक्रिया का अनुमान भर किया जा सकता है ज्ञान नहीं। कहने का तात्पर्य यह है कि रचना प्रक्रिया का रहस्य पूरी तरह से खुल नहीं सकता और इस रहस्य में किसी भी बड़ी रचना का सौंदर्य निहित है।

बच्चन जी लिखतें हैं कि, मैं अपनी बहुत सी रचनाओं को पीछे देखने का प्रयत्न करता हूँ, तब मुझे लगता है कि उनका जन्म मेरे अनुभवों से हुआ है। जिन अनुभवों को मैंने किसी दिन अनोखा, अद्‌भुत एकमात्र मेरा समझा था, अब मैं समझता हूँ कि उनमें कुछ भी ऐसा नहीं था, लेकिन उनकी प्रतिक्रिया अवश्य ही मेरे भाव प्रणव मन में तीव्र बेचैन करने वाली रही होगी, क्योंकि यदि वह ऐसी न होती, तो मुझे उन्हें व्यक्त करने, उन्हें रुपमय और रसमय बनाने को विवश न करती। मैंने अपने अनुभवों की परिधि व्यापक रखी है। मैंने उनके अन्दर कल्पना को भी जगह दी है, पर कोई कल्पना क्यों इतनी सजीव होती है कि, वह अनुभवों से भी अधिक प्राणमयी लगती है। इसे बताना मनोवैज्ञानिकों का काम है। मैं तो इतना ही कह सकता हूँ कि ऐसा होता है कि, अनुभवों की प्रतिक्रिया के समान कल्पना की प्रतिक्रिया भी असह्य होती है और अभिव्यक्ति में सुख का अनुभव होता है, एक तरह की राहत मिलती है।

लेखन से पूर्व जब पहली बार अनुभूति शब्दों में फूट पड़ी थी, तब मैंने अवश्य अपने से यह प्रश्न किया था कि क्या मैं कवि हूँ ? कवि हूँ तो 'कविहि अरथ आखर' वाला साँचा कवि हूँ, तो मेरा शब्दों के माध्यम से अधिक से अधिक अधिकार प्राप्त

करना, काव्य के मर्म को समझने के प्रयत्न से अधिक है। मैं हिन्दी, अंग्रेजी, थोड़ी संस्कृत और थोड़ी उर्दू जानता हूँ, बहुत थोड़ी बांगला भी और उनको सलाह देता हूँ कि, सौ पेज पढ़ो तब एक पंक्ति लिखो। मेरे पढ़ने लिखने का अनुपात लगाया जाय तो मैं कुशल सिध्द नहीं होऊँगा।

कवि को कभी - कभी बिना अंत:प्रेरणा के और बिना भीतरी अर्ज के लिखना पड़ सकता है। शब्दों पर अधिकार होने के कारण वह कोई ऐसी रचना तो कर ही सकता है जो शुध्द हो, साधारण दृष्टि से बुरी न हो। परन्तु अच्छी रचना में जो सर्वश्रेष्ठ होती है, वह प्रयत्न से नहीं, प्रेरणा से आती है। इसे उत्पादित नही किया जाता है, जो प्रेरणा स्वरुप मिलता है, वही दिया जाता है। इसे अंग्रेजी में रिवील्ड कहा जाता है। उसके लिए जैसे कोई दिव्य दृष्टि दे देता है। यह अपनी शक्तियों, योग्यताओं के रहस्यमय संघात से संभव होता है कि, सर्वश्रेष्ठ किसी बाहरी शक्ति से इसे निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता। यदि कोई बाहरी शक्ति है, तो भी वह माध्यम अथवा क्षेत्र के अधिकारी होने का ध्यान रखती होगी, नहीं तो हमें अपनी अद्‌भुत प्रतिभा से चकित करने वाले बहुत से लोग मिलते। बिना कागद मासि छुए कितने कबीर हुए हैं ?

किसी कवि के लिए आदर्श परिस्थिति तो यही हो सकती है कि जीवन में साहित्य के स्वाध्याय से परिपक्व हो कर वह प्रेरणा की प्रतीक्षा करे और अपनी इच्छा के अनुसार लिखने को स्वतंत्र हो। मुझे दुर्भाग्यवश ऐसी परिस्थितयॉ सदा नहीं मिली। मैं शत प्रतिशत कवि नहीं रह सका। मुझे अपने और अपने ऊपर निर्भर रहने वालों के लिए जीविका के साधन जुटाने को प्राय: सदा ही कुछ ऐसा काम करना पड़ा है, जो सृजन की पूरी स्वतंत्रता नहीं देता। मुझे क्लास में पढ़ाते हुए भी प्रेरणा हुई है, कचहरियों में इल्जाम पर भी, परेड के मैदान पर भी, सरकारी कार्यालयों की फाइलों में भी मैंने सदा उन्हें सँजो कर किसी सुविधाजनक समय पर उनका उपयोग करने का प्रयत्न किया है।

रचना करते समय भाव तथा विचारों की अभिव्यक्ति ही बच्चन जी का मुख्य ध्येय होता था। शब्दों अथवा अभिव्यंजनों के नये प्रयोगों के लिए कुछ लिखना उन्हें अस्वाभाविक लगता था। जीवन के प्रयोग की अवस्था चल रही हो, तो अभिव्यक्ति का प्रयोग स्वाभाविक हो सकता है।

किस रचना के लिए मैं किस प्रकार का छंद, किस प्रकार की शैली, किस प्रकार के रुपक का उपयोग करुं, इसे मैं पहले से नहीं सोचता यह सब मैं अभिव्यंजना के लिए व्याकुल होने वाले अनुभवों पर छोड़ देता हूँ। एक उदाहरण है - मैंने लगभग १९३० से लिखना शुरु किया था और लगभग बारह वर्ष तक एकान्त छंदो में ही लिखता गया। १९४२ में बंगाल में अकाल के प्रति मेरे मन में जो प्रतिक्रिया हुई, वह सहसा छंदो का बांध तोड़, मुक्त छंद में प्रवाहमान हुई। मैं समझता हूँ कि यदि मैं बंगाल का काल छंदमय भाषा में लिखता तो शायद इतनी सबल रचना न होगी। अट्ठाईस बरस तक खड़ी बोली में लिखने के पश्चात् और उसमें यत्नकंचित अधिकार प्राप्त करने पर भी जब मेरे मन में गीता का अनुवाद करने की प्रेरणा हुई, तब मैंने उसे अवधी में किया। मेरा विश्वास तो यही है कि गीता की अध्यात्मिकता, दार्शनिकता, गरिमा उसी भाषा शैली में अपनी कुछ झलक दे सकती थी जिसमें रामचरित मानस लिखा गया था। इन बातों में कवि की प्रेरणा कहॉ तक सच्ची थी, इसे समय ही बता सकता है।

प्रत्येक कलाकार अपने अपने ढंग से अपनी कलाकृति को जग के समक्ष उपस्थित आंगिक व वाचिक अभिनय के द्वारा, शिल्पकार अपनी स्थापत्य कला से और कवि अपनी भाषा द्वारा अपनी कला को प्रस्तुत करता है। बच्चन जी की भाषा में शब्द कलाकारी देखने को नहीं मिलती। उन्होंने एक स्थान पर लिखा भी है, मैं लिखते समय अपने कथ्य से इतना तन्मय रहता हूँ कि मुझे कला का ध्यान ही नहीं रहता। मेरे काव्य की जीवंतता से कोई कला स्वत: प्रस्फुटित होती हो, तो मैं नहीं जानता। किसी तरह की कलाकारी दिखाने का न तो मैंने कभी प्रयत्न किया है और न मुझमें इसकी क्षमता है।

बच्चन जी अनुभूति प्रणव कवि हैं, कला कारीगरी के रुप में शिल्प को उन्होंने पृथक महत्व नहीं दिया। भाषा की सहजता ही बच्चन जी की लोकप्रियता का कारण है। अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने के लिए कवि को भाषा की लक्षणा और व्यंजना शक्ति्यों से काम लेना पड़ता है। ये दोनों ही सिर्फ काव्य भाषा की संवाहिका नहीं है, अभिधा भी अभिव्यक्ति के लिए समर्थ होती है।

बच्चन जी की कविताओं पर छायावादी विकास और विरोध दोनों का प्रभाव पड़ा। बच्चन जी को भाषा के क्षेत्र में भी संक्रांती युग से गुजरना पड़ा। छायावादी दुर्बलता के दो प्रमुख धाराओं ने प्रतिक्रिया स्वरुप जन्म लिया। पहली धारा थी स्वच्छन्द, प्रकृतिवादी, भोगवादी छायावाद की उत्तराधिकारी धारा और दूसरी राष्ट्रवादी

धारा थी। पहली धारा का प्रतिनिधित्व करने का श्रेय बच्चन, अंचल और नरेन्द्र को मिला।

बच्चन जी की भाषा न तो द्विवेदी युग के कवियों की भांति उबड़-खाबड़ और ढीली ढाली है, न ही अनगढ़ और जटिल। बच्चन जी ने अनुभूति और प्रेरणा को ही महत्व दिया है। इसी लिए उनकी भाषा का विशेष महत्व रहा। भाषा छन्द, अलंकार, समास उन्हें कविता में भरने नहीं पड़े। बच्चन जी ने स्वयं एक स्थान पर कहा है - मैं काव्य को स्वयं कथन में अवतरित होने के लिए छोड़ देता हूँ जहॉ एक, दूसरे का पूरक होगा, जहॉ एक दूसरे से अनिवार्य संबंध होगा, वहॉ मैं अपने को सफल समझूंगा।

आवश्यकतानुसार कवि ने काव्य में तत्सम, तद्भव, विदेशी (उर्दू, अंग्रेजी) और देशज सभी प्रकार के शब्दों का भावानुरुप प्रयोग किया है। वे कहते हैं, इतना जरुर है कि भाषा के संबंध में मुझे अपने परिवार और परिवेश से जो संस्कार मिले हैं, उनमें अनुदारता और संकीर्णता के लिए कोई जगह नहीं है। उन्होंने अंग्रेजी पढ़ी और पढ़ाई है, अवधी हिन्दी बोली व लिखी है। उर्दू उन्हें कायस्थ परिवार की पारिवेशिक परम्परा में मिली है और उनकी प्रारंभिक शिक्षा भी उर्दू में ही हुई थी। अपनी काव्य भाषा संदर्भ में बच्चन जी लिखते हैं- थोड़ा उर्दू फारसी, थोड़ी संस्कृत जानने का प्रभाव मेरी भाषा पर अच्छा पड़ा। यही कारण है उनकी कविता का प्रत्येक शब्द ऐसा लगता है, मानो हमारी बोलचाल का हो। साधारण बोलचाल की भाषा में जैसा उत्कृष्ट काव्य बच्चन जी ने लिखा है, वैसा खड़ी बोली के किसी अन्य प्रसिद्ध कवि ने नहीं रचा। तात्पर्य यह है कि उनकी काव्य भाषा की विशिष्टता है- सामान्यता, ऋतुजा व सरलता। छायावादी कवियों के बीच रहकर भी बच्चन जी छायावादी डिक्शन पृथक लोक जीवन की भाषा में अपने उत्कृष्ट काव्य की सर्जना करने के लिए अग्रसर हुए, यह उनकी भाषागत नवीन स्वच्छन्द प्रव्रत्ति का सूचक है। यही कारण है कि कवि का दु:ख पाठक का दु:ख और कवि का सुख पाठक का सुख बन जाता है।

बच्चन जी के काव्यों में अंग्रेजी और उर्दू शब्दों का प्रयोग हिन्दी के साथ इस सफाई के साथ किया है कि उनकी कोई अलग सत्ता नहीं लगती। डॉ जीवन प्रकाश जोशी का कहना है कि - यों हिन्दी कविता में उर्दू शब्दों के प्रयोग की यह सफाई किसी दूसरे आधुनिक कवि में देखने को नहीं मिलती। उर्दू शब्द के कुछ उदाहरण खुशखत, नायॉब, गलतफहमी, इजहार, कुशादगी, कयामत, उसूल, दामन, हैरान, सबूत, आदि।

सिर पर सफर खड़ा है लम्बा
फैला सब सामान पड़ा है

गालिब, वह गलबा ला दो मेरे जीवन में
जिससे मेरा अनदाजे बयॉ कुछ और बने। [१६३]

बच्चन जी ने अंग्रेजी शब्दों का भी प्रयोग सफलतापर्वूक किया है जैसे बंगला, स्विच, पिकनिक, ट्रांजिस्टर, एरियल, कम डियर, यू डैम विस्की, ड्राइंग रुम, लाइब्रेरी, पासपोर्ट आदि। लोकोक्तियों और मुहावरों का सशक्त और सुन्दर प्रयोग भी बच्चन जी के काव्य में परिलक्षित होता है।

खून पसीना एक किया सलाम ।
हाथ जैसे विश्व सलाम करता है।
सिर पर लोट जाता हैं सांप।
नेकी कर कुएं में डाल।
ठेंगत सिर पर ।। आदि [१६४]

कविता में भाव, भाषा व छन्द का अटूट संबंध है। कोई छन्द लिया जाए तो उससे सम्बद्ध भाव और उसमें ढली भाषा सहज ही आ जाती है। बच्चन जी के काव्य में द्वन्द सहज और जीवन की सहजता लेकर आये हैं। डा नगेन्द्र का कहना है कि बच्चन ने यों तो छन्द विधान में अनेक प्रयोग किये हैं, मधुशाला की रुबाई से लेकर मधुबाला और मधुकलश के अनेक हिन्दी छन्द और फिर निशा निमन्त्रण से लेकर एकान्त संगीत आदि में मुक्त छन्द, छन्द विधान की विविधता के प्रमाण हैं। बच्चन जी के काव्यों में चामरी छन्द, माधव मालती, रोला छन्द, हरगीतिका छन्द, सारसी छन्द और कहीं-कहीं नवीन मात्रिक छन्द भी परिलक्षित होते हैं। नवीन मात्रिक छन्दों के मात्राक्रम और लय का विधान बच्चन जी ने स्वयं किया है। बच्चन जी की मधुशाला में १६ मात्रा वाले, चरण्य वाले (रुबााई के चार चरणों की दृष्टि से १६+१६=३२ मात्राएं) छन्द का प्रयोग हुआ है। निशा निमन्त्रण के सभी गीतों में १६/३२ मात्रा क्रम के छंद हैं। एकान्त - संगीत में अधिकांशत: १४/२४ मात्रा क्रम के। आकुल अन्तर में कुछ छांदिक स्वच्छंदता होते हुए भी प्राय: १४ और १६ मात्राओं के छंद हैं। बच्चन जी का कहना है कि मधुशाला लिखने के समय से मुझे ऐसा लगता था कि मेरी भावनाएँ छन्दों में ही उठती हैं, उसके पहले अवश्य मैं जो कुछ सोचता था, अनुभव करता था, उसे छन्दों में बॉधने का प्रयास करता था।

बच्चन जी भाव प्रधान कवि रहे हैं। भाव प्रधान कवि अपना प्रतिनिधित्व अपने आप करता है, वह अपने मनोवेगों, मनोभावों और अनुभूतियों को वर्णन के लिए किसी

वाह्य साधन का सहारा नहीं लेता। इस प्रकार बच्चन जी ने नवगति, नवलय, ताल छंद नव का आदर्श ग्रहण कर, काव्य को अधिक प्रज्वलित किया।

जीवन के प्रत्यक्ष संवेदन का कवि होने के कारण बच्चन जी के काव्य में अलंकार सरल और जीवन की सहजता से अनुप्रेरित है। अलंकारों में भी बच्चन जी ने सर्वाधिक रुपक, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारां का प्रयोग किया है। शब्दालंकारों में से अनुप्रास की योजना बच्चन के लगभग सारे काव्यों में मिलती हैं। यमक और श्लेष का प्रयोग कवि ने यहॉ वहॉ किया है। पुनरुति अलंकारों का भी प्रयोग किया हैं

जिस प्रकार आचार्य विश्वनाथ ने रसयुक्त वाक्य को काव्य स्वीकार किया है उसी प्रकार बच्चन जी ने भी रस को ही काव्य की आत्मा माना है। जैसा कि मधुकलश की इस पंक्ति से स्पष्ट है -

ज्ञानी चाहिए तो चाहिए, रस सिद्ध कवि भी ।

भारतीय दृष्टिकोण के अनुसार साहत्यि के नौ रस माने गये हैं। उनमें से बच्चन जी के काव्य में श्रृंगार रस, करुण रस और वीर रस की प्रधानता है। मधुशाला और मधुकलश में श्रृंगार रस की प्रधानता है एकान्त-संगीत, आकुल-अन्तर और निशा निमन्त्रण में करुण रस उमड़ता है।

रस जीवन का सार है और समस्त मानव मात्र का जीवन रस के लिए है। जितने भी क्रिया कलाप हैं, उनका उदय और अस्त रस में ही है।

इनकी तुलना करने को कुछ
देख न, हे मन, अपने अन्दर
वहॉ चिता चिंता की जलती
जलता है तू शवसा बनकर। [१६५]

उपरोक्त उदाहरण आकुल अन्तर से उदधृत है, जिसमें करुण रस प्रधान्य है।

बच्चन जी के काव्य में अपने गीतों में कई जगह संगीत के पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग भी किया है। बसंत बहार, दीपक, स्वर और अलाप, भीड़ और गमक, राग रागिनी, ताल, तान, लय एवम् बीन वीणा आदि इसके उदाहरण हैं।

कुल मिलाकर देखें तो बच्चन जी का काव्य लोकप्रिय काव्य है। उनकी भाषा भी लोक भाषा या जनभाषा है और शायद उनकी जनभाषा को ही श्रेय जाता है कि उन्हें लोकप्रिय कवि के रुप में देखा जाता है । संक्षेप में काव्य के माध्यम से बच्चन जी खड़ी बोली की अंतर वाह्य प्रकृति को लोक व्यवहार में व्यापकता देने की दृष्टि से बेजोड़ काम किया है।

बच्चन जी की रचना की प्रक्रिया जहॉ तक मैं समझती हूँ, यही है कि उसमें कोई रुढ़ि ऩहीं है। कोई किसी की बताई प्रक्रिया का अनुसरण कर लेखक अथवा कवि बनना चाहे तो उसे कठिनता ही होगी। सच तो यह है कि अपनी प्रवृत्ति के अनुसार हर लेखक को अपनी प्रक्रिया स्वयं बनानी पड़ती है। मस्तिष्क की साधारण प्रक्रियाऍं भी बड़ी रहस्यमय हैं। मनोवैज्ञानिक अभी उसका क ख ग भर जान पाये हैं। सृजन की प्रक्रिया का फिर क्या कहना, जिसमें अपना ही नहीं, जन मानस, युग मानस, परम्परागत मानस सब एक साथ काम करते हैं। इन सब को एक साथ जगा, एक ध्येय पर लगा, एक परिपूर्ण कृति में कैसे परिणित किया जाये बड़ी पेचीदा और कठिन समस्या है, पर आप को आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि एक बड़े कवि ने उसे बड़ी आसानी से हल कर लिया था। उसकी प्रेरणा सड़े सेबों की दुर्गन्ध से जागती थी। वह अपनी मेज की दराज सेबों से भरी रखता था और उनको खोलते ही उसकी सारी सृजन शक्ति सजग और सक्रिय हो उठती थी।

बच्चन जी एक लोकप्रिय कवि हैं। अत: उनकी कविता का प्रत्येक शब्द साधरण बोल चाल जैसा प्रतीत होता है। साधारण बोलचाल की भाषा में जैसा उत्कृष्ट काव्य बच्चन जी ने लिखा है वैसा खड़ी बोली के किसी अन्य प्रसिद्ध कवि ने नहीं रचा। इसका आशय यह है कि बच्चन जी की काव्य भाषा की विशिष्टता है सरलता और जिसमें भावों की उत्कृष्टता समायी होती है। खड़ी बोली के लगभग सभी समर्थ कवियों के काव्य की अपेक्षा बच्चन ने संधियों, समासों का प्रयोग नगण्य किया है। छायावादी कवियों के बीच रहकर भी बच्चन जी ने अलग लोक जीवन की भाषा में अपने उत्कृष्ट काव्य की सर्जना की और यही कारण है कि उनकी भाषा नवीन स्वछंद प्रवृत्ति सूचक है। निश्चय ही जन मानस के मन को वश में करने वाली अद्‌भूत सरलता जितनी बच्चन की काव्यभाषा में है, वह समग्रत: स्वत: उदाहरण है।

भाषा तभी अपने स्वरुप को प्राप्त करती है जब उसे शब्दों की माला में पिरोया जाता है। शब्दहीन भाषा की महत्ता या कल्पना रचनात्मक कभी नहीं हो सकती। शब्दों के सुव्यवस्थित प्रयोग से भाषा में ऐसी अद्‌भुत शक्ति आ जाती है कि मानव के अन्तरजगत के अनंत अर्थ आशयों को अभिव्यक्ति करती है। अत: यदि भाषा, अर्थ तथा आशय को अभिव्यक्त करने वाली अद्‌भुत शक्ति है, तो शब्द प्रयोग उसकी रचना का मूल मंत्र है। इससे यह तथ्य निकलता है कि काव्य का प्रथम प्रभाव उसमें प्रयुक्त शब्दों द्वारा ही पड़ता है। शब्द शिल्प एक ऐसा विधान है कि जिसका मात्र ऊपरी महत्व ही नहीं वरन समाज के लिए उसका मानसिक महत्व भी है। इतना ही नही स्वयं कवि अपनी शब्द क्षमता से प्रेरित होकर काव्य रचना के लिए प्रवृत्त होता है।

काव्य कला का वास्तविक स्वरुप कवि के मन का सौंदर्य बोध है और उस सौंदर्य बोध को कला माध्यमों द्वारा वैसा रुप देने में ही उसकी सार्थकता है। आधुनिक कविता के संदर्भ में इसके बहिरंग से संबंधित कौशल को काव्य कला का नाम दिया जाता है। फलत: काव्यानुभूति के स्पष्टीकरण के लिए, जिन उपकरणों का उपयोग होता है वे सभी काव्य कला के तत्व कहे जाते हैं।

काव्य सृजन में अर्थ प्रधान है या शब्द ? यह प्रश्न इसलिए महत्वपूर्ण नहीं है क्योंकि एक के अभाव में दूसरे की सत्ता कुछ नहीं है। महान कोटि के कवियों में अनुभूति के संगीत को मुखरित करने के लिए शब्दों के प्रयोग अपने आप इस तरह होते हैं, जैसे अनेक साज एक मधुर आवाज के साथ उसके सौंदर्य को बढ़ाने के लिए बजते जाते हैं। संक्षेप में काव्य की भाषा का सरल होना नितान्त आवश्यक होता है। उसमें अभिव्यक्ति के अन्य तत्वों का सहज समाहार होना चाहिए। कवि अपने देशकाल और वातावरण के प्रभाव से भी अपने आपको बचा नहीं सकता है। छायावादोत्तरार्ध के प्रतिनिधि कवि बच्चन के काव्य में इनका प्रयोग छायावादी आतंक के स्तर का नहीं हुआ है।

४.२ भाषिक संरचना एवं अभिव्यक्ति की पद्धति

बच्चन जी के काव्य में भाव संप्रेषितता तो है ही, उसमें कला का अद्‌भुत योग भी प्राप्त होता है इसीलिए कविता सृजन प्रक्रिया स्वत: ही उद्‌भूत होती है। बच्चन जी की रचना प्रक्रिया में सहज स्वाभाविक अभिव्यक्ति के साथ शैली शिल्प के भाव परिलक्षित होते हैं। बच्चन जी की काव्य भाषा का सर्वाधिक महत्व उनकी शब्द समाहार शक्ति में निहित है। छायावादी काव्य की भाषा संस्कृत पदगर्भित है। उसमें अभिजात्य तत्व विशेष सक्रिय रहा है। अत: सामान्य जनता के बोलचाल के शब्दों का प्रयोग वहॉ वर्जित सा रहा है, किन्तु उत्तरार्ध के संपूर्ण गीतकाव्य की भाषा में सामान्य बोलचाल की शब्दावली प्रयोग में लाई गयी और अनेक मुहावरों, उपभाषाओं तथा अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग तक किया गया। इस प्रयोग की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह भाव और भाषा की प्रकृति के सर्वथा अनुकूल बैठा है। अनुभूति और चिन्ता के अनुरुप ही बच्चन जी की कल्पना भी सरल है। उसमें छायावादी कल्पना के ऐश्वर्य का नितान्त अभाव है। प्रत्यक्षत: व्यक्तिगत जीवन की कविता होने के कारण पन्त जी जैसी अतिशय सूक्ष्म संवेदनशीलता बच्चन जी में नहीं है, परन्तु जीवन के मौलिक मनोवेगों का संवेदन उनका अत्यन्त प्रत्यक्ष और प्रबल होता है।

छायावाद के उत्तरार्ध के गीत काव्य की भाषा जनमत रंजनकारी भाषा है। इस काव्य भाषा से जनमन अनुभव करता है कि उसमें उसी की अंतरजगत का अविकल काव्यानुवाद है। इस दृष्टि से बच्चन जी का गीत- काव्य अपना समकक्षी नहीं रखता। कुछ इन्हीं कारणों से उत्तरार्ध के गीतकाव्य का जन मन पर प्रभाव पड़ा और छायावादी काव्य अपनी शक्ति सीमा में सिमट कर रह गया।

यहॉ तक छायावादी और छायावाद के अनुभूति की इस सरलता ने बच्चन जी ने कला को एक अन्य मूलगत विशेषता प्रदान की है। छायावादी कविता में प्राय: विरल अनुभूति होने के कारण बच्चन जी के गीतों में रागात्मक एकता प्राय: सर्वत्र मिलती है।

बच्चन जी की प्रारम्भिक कविताओं में जिस भाषा का स्वरुप सामने आता है, वह वर्तमान कविताओं मे परिपक्व और पूर्ण रुप से विकसित है। मधुशाला की भाषा लोच, ललित्य तथा उससे उत्पन्न संगीत की झंकृति के माध्यम से वातावरण की सृष्टि तथा भाषा के प्रसाद, माधुर्य गुण का सूक्ष्म समन्वय आदि ऐसे गुण देखने को मिलते हैं, जिन्होंने न केवल बच्चन की कविता को लोकप्रियता दी वरन समस्त परवर्ती खड़ी बोली कविता की भाषा को रंगीन पंख लगा दिये। मधुशाला की भाषा भंगिमा में

छायावादी भाषा की झंकार और कला व्यवहारिक भाषा की सुबोधता और मन की मिठास निम्नवत देखा जा सकता है ---

सुन कलकल, छलछल, मधु
घट से गिरती प्यालों में हाला
सुन रुनझुन, रुनझुन चल
वितरण करती मधु साकी बाला,
बस आ पहुँचे, दूर नहीं कुछ
चार कदम अब चलना है
चहक रहे, सुन पीनेवाले
महक रही, ले मधुशाला ! [१६६]

उपर्युक्त रुबाइयों की भाषा में शब्दों की झंकृति, मिठास, मादकता और कलात्मकता का नया जादू है जो बच्चन जी से पूर्व के छायावादी कवियों प्रसाद, पन्त, निराला और महादेवी के काव्य में नहीं मिलता। उन्होंने स्वयं लिखा कि संघर्ष की भाषा व्यक्ति और समाज के संघर्ष की भाषा- बोलने का कुछ अभ्यास संकेत पाकर मैंने जिस माध्यम को यथाशक्ति परिपूर्ण करके १९३५ में मधुशाला में दिया, उससे हिंदी काव्य ने संसार में एक नई आवाज का आभाास दिया।

मधुशाला की भाषा शिल्प की व्यवस्था मधुशाला से मिलती जुलती है। अन्तर इतना प्रतीत होता है कि मधुशाला में आकर कवि विविध गीतों में भी अपनी रंगीली, रसीली भाषा का प्रयोग कर रहा है। मधुकलश में भाषा के प्रवाह में प्रौढ़ता आती दिखाई देती है। कवि के शब्दों में भावों को व्यक्त करने की क्षमता भी बढ़ी प्रतीत होती है। आगे निशा निमंत्रण, आकुल अंतर और एकान्त संगीत की कविताओं की भाषा बिम्ब विधायती अधिक हो गई है और इनके साथ ही उसमें मानवीय भावमयता का सहज स्वर भी निस्तृत होता प्रतीत होता है, जो कम से कम तब हिंदी गीति काव्य के लिए नया था। यहॉ न भाषा अलंकारिक है, न चमत्कारिक, न प्रतीकात्मक है और न अधिक चित्रमय। इन कृतियों में जिस भाषा का प्रयोग किया गया है वह एकदम उद्‌गारों की वाहिनी है उसमें व्यक्ति की पीड़ा की वीणा का राग है।

मधुशाला में बच्चन जी कहीं कहीं समाज सुधारक के रुप में भी दिखाई देते है। सामाजिक विषमताओं, जातीय विभिन्नताओं और धार्मिक आडम्बरों पर किये गये व्यंग, जाति धर्म की एकता के लिए अत्यंत हृदय स्पर्शी प्रतीत होते हैं। बच्चन किसी भी प्रकार की विचार संकीर्णता के पक्ष में नहीं हैं। उनकी कामना है कि मनुष्य जातीयता और धामिर्क संकीर्णता के बंधन से मुक्त होकर समानता के मार्ग को अपनाए। इस प्रकार सभी असामंजस्य, विभिन्नता आदि को दूर करने का बच्चन की दृष्टि में एक साधन है हाला। इसी का दूसरा नाम प्रेम की मस्ती है जो सृष्टि की सभी वस्तुओं से टपक रही है और जिस प्रकृति का प्रत्येक रुप कण अग्रसर हो रहा है। यही नहीं हाला की मादकता में ही कवि को अनंत सुख का प्रदुर्भाव होने लगता है

प्रिये मदिरा से देता सींच
अधर मेरे होत मृत म्लान,
मल तब मदिरा से ही, प्राण,
कराना मेरे शव को स्नान।
अंगूर पत्तों से मृत देह
मूंद उनकी शैय्या डास,
सुला देना मुझको चुपचाप
किसी मधुमय के पास। [१६७]

इस प्रकार बच्चन के अनुसार हाला एक ओर सुख का साधन है तो दूसरी ओर परलोक सुख का। मधुशाला में बच्चन आध्यातमवाद का सुंदर रुपक उपस्थित करते हैं। इसमें मालिक मधुशाला, मदिरालय, मधुबाला, सुराही, प्याला, हाला आदि के प्रतीक है1 कवि ने मधुशाला का प्रयोग यत्र-तत्र नारी साकार मधुरता और साकार आकर्षण है। संक्षेप में मधुशाला बच्चन की सुंदर कृति है। मधुशाला के गीतों में बच्चन जी की सरस वाणी, अलौकिक काव्य प्रतिमा तथा अनुपम दृष्टिकोण अवलोकनीय है।

धार्मिक संकीर्णताओं पर कसे गये व्यंग्य बच्चन जी के विचार की व्यापकता और धार्मिक संदर्भ में उनके दृष्टिकोण को प्रदर्शित करते है। यही कारण है कि हालावादी कवि समाज के आडम्बरों पर अट्टहास करने के लिए उसकी संकीर्णताओं में विलक्ष विद्रोह करने के लिए मदिरालय के दरवाजों की ओर बढ़ने लगता है।

उस की पुकार यहाँ दृष्टव्य है -

हमने छोड़ी कर की माला,
पोथी पत्रा भू पर डाला,
मंदिर, मस्जिद के बंदीगृह को छोड़,
लिया कर में प्याला। [१६८]

वातावरण का प्रभाव :-

बच्चन की काव्य भाषा में शब्दों के द्वारा वातावरण का चित्रवत चित्रण कर देने की अनूठी क्षमता प्रकट होती है। इस चित्रण में शब्दों की ध्वनि का विशेष हाथ है। मधुशाला में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं। वातावरण के यह चित्रण कहीं ठोस है तो कहीं तरल हैं तो कहीं कलात्मक है। लेकिन यहॉ इतिवृत्त कहीं नहीं है। उसमें अनुभूति की सच्चाई जीवन की धड़कन है। कोरी कल्पना के आधार पर शब्दों द्वारा चित्र काव्य रचने की प्रवृत्ति इस काव्य में देखने को नहीं मिलती।

गर्म लोहा पीट ठंडा पीटने को वक्त बहुतेरा पड़ा है।
सख्त पंजा, नस कसी, चौड़ी कलाई,
और ऑल्लेदार बांहें
और ऑखे लाल चिंगारी सरीखी। [१६९]

४.३ बच्चन की काव्य प्रवृत्तियॉं

बच्चन जी की छः कृतियों मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश, निशा निमन्त्रण, एकान्त संगीत और आकुल अन्तर के अध्ययन मनन कर लेने पर, मुख्यत: जो विशेषताएं मेरे समक्ष आई हैं वह व्यापकता, स्थूलता और सरलता इन तीनों वर्गो में विभाजित की जा सकती है। व्यापकता के अर्न्तगत पुन: इन्हें तीन क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है व्यक्ति, समाज और प्रकृति लेकिन उन्होंने किसी एक को विशिष्ट न बनाकर निजी सुख दुख की स्थितियों को प्रमुखता दी हैं। निशा निमन्त्रण, एकान्त संगीत ओर आकुल अन्तर में कवि की इस व्यथा का बहुमुखी प्रतिनिधित्व है निराशा, वेदना, अर्न्तदाह, हीन भाग्य की भावना, गहरा अवसाद और उससे भी गहरा अकेलापन कवि को परेशान करता रहता है। जहॉं निराशा और अवसाद सूने और मार्मिक हैं, वहॉं जीवन में आशा और उत्साह के क्षण भी आते हैं।

तात्पर्य यह है कि बच्चन जी की अनुभूतियॉं व संवेदनाएं वैयक्तिक हैं परन्तु अपनी निजी अनुभूतियों व संवेदनाओं को वस्तुगत सहज सम्बद्धता प्रदान करके उन्हें एक स्वतन्त्र और पूर्ण इकाई का रुप दे दिया है। डॉ. नगेन्द्र के शब्दों में उन्होंने अपनी व्यक्तिगत अनुभूतियों को तत्वगत बना दिया है।

बच्चन जी के इन काव्यों में सामाजिकता के दर्शन भी दिखाई पड़ते हैं। व्यक्ति कितना भी अर्न्तमुखी क्यों न हो, अपने चतुर्दिक समाज से वह नितान्त रहकर कोई जीवन नहीं जी सकता। समाज, देश व विदेश की ओर भी उन्होंने दृष्टिपात किया है।

बच्चन जी की इन कृतियों में प्रकृति भी अछूती नहीं रही है। प्रकृति की सत्ता को उन्होंने मानव प्रकृति से अलग करके कम देखा है। वे प्राय: जानी पहचानी वस्तुओं को एक नया मोड़, नया क्रम दे कर हमारे सामने इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि हमें अपने आस-पास प्रकृति ही दिखाई देने लगती है। अपने काव्यों में उन्होंने सांए की उदासी, बढ़ता हुआ अन्धकार, भटके हुए पंछी की आकुलता दैनिक अनुभवों से प्रस्तुत किए गये है। बच्चन जी ने इन प्रवृत्तियों के द्वारा अपनी कृतियों में (चयनित) नूतन दिशा की है । उनकी कृतियां सहज, सरल और जनभाषा के शब्दों में अभिव्यक्त होकर निसर्ग संप्रेषण की अधिकारी है। सारांश रुप में कहें तो बच्चन किसी वाद विशेष के कवि नहीं हैं। प्रस्तुत लेखक के एक प्रश्न के उत्तर में बच्चन ने लिखा था मैने वादों का प्रभाव नहीं ग्रहण किया। ग्रहण किया जीवनानुभूतियों से। यदि मेरी कृतियों में उनका प्रभाव आप देखते हैं, तो आप सिद्ध करें। क्योंकि प्रभाव आने जाने में ही आता है।

बच्चन वस्तुत: अपने भीतरी सत्य, अपनी अनुभूति और अपनी घुटन के कवि हैं। काव्य की सत्यता में रबर के गुण होते हैं। किसी ओर से भी उसे चारों तरफ से थोड़ा बहुत खींच कर बढ़ाया जा सकता है। अधिक उचित वही है कि बच्चन को वाद विशेष की अपेक्षा जीवन के धरातल पर पहचाना जाय। इस प्रबंध में यही दृष्टि ग्रहण की गयी है। जीवन का धरातल जब अध्ययन की परिसीमाओं में उभरता है तो कतिपय प्रवृतियों के रुप में इन्ही प्रवृत्तियों को वाद की संज्ञा दे दी जाती है। जब ये वाद ओढ़े हुए होते हैं तो इनका प्रभाव शून्य होता है, किंतु जीवन रस से सिंचित होकर ये कवि काव्य के सत्य बन जाते हैं। बच्चन की प्रवृत्तियॉ गहरे से निस्सृत हैं।

४.३.१ हालावाद

हालावाद का दर्शन अपने मूल स्थान फारसी में एक प्रकार का सूफी दर्शन है। रुसी, उमर खैयाम, हाफिज, राबिया आदि फारसी सूफी कवियों ने शराब, साकी, प्याला आदि प्रतीकों के माध्यम से परोक्ष सत्ता की चर्चा की और रोजा, नमाज आदि धर्म के वाह्य आडम्बरों का खण्डन किया। इन सूफी कवियों ने प्रेमजन्य मादकता की अतिशयता तज्जन्य भावुकता एवं तन्मयता का प्रतीक मदिरा की मादकता को बनाया।

सूफी तत्वदर्शन के इस प्रभाव को मध्यकालीन हिन्दी साहित्य के कुछ कवियों (कबीर) में देखा जा सकता है। आधुनिक काल की कविता में जिसे हालावाद कहा गया है, उसके मूल में फारसी प्रभाव अथवा सूफी दर्शन नहीं है। एक विशेष अवसाद और निराशा की स्थिति में फिटज जेराल्ड ने १९वीं शती के मध्य से उमर खैयाम की पचहत्तर रुबााइयों का अंग्रेजी में अनुवाद किया, जो सर्वप्रथम रुबाइयत उमर खैयाम के नाम से प्रकाशित हुआ। खैयाम रुबााइयों में खिन्न और निराश मन की अभिव्यक्तियॉ हैं। पलायनवादी स्वर उनमें प्रमुख है। खैयाम के अनुसार तब शाखा के तले रोटी का एक टुकड़ा, एक सुराही मदिरा, कविता की पुस्तक और पार्श्व में गाती हुई तुम हो तो यह जंगल ही मेरे लिए स्वर्ग हो जाय। यह पलायन और निराशा इसलिए है कि, पैरों के नीचे बालू की जमीन खिसकती जाती है, न मालूम कितने बड़े बड़े नरेश सत्ताधारी विद्वान आये और चले गये। अत: जीवन रुपी शराब सूख जाए, इसके पहले उठो और मदिरा पी पी कर भूख बुझा लो। अनागत कल अभी उत्पन्न नहीं हुआ और विगत कल मर चुका है। अत: उनका चिंतन छोड़ आज को आनन्दमय बनाओ। इस प्रकार फिटस जेराल्ड के अनुवाद में उमर खैयाम का दर्शन विषमताओं से पलायन कर कृत्रिम बेहोशी का क्षणवादी आनन्द ग्रहण कराने वाला है। हिन्दी में यह दर्शन प्रमुखत: फिटज जेराल्ड के अनुवाद के माध्यम से ही आया।

वैसे सन १९२० ई. के लगभग सरस्वती में उमर खैयाम की यदा कदा चर्चा होनी प्रारम्भ हो गयी थी, पर सन् १९३० ई. के आस पास खैयाम की रुबाइयों के अनुवादों की धूम मच गयी, किन्तु यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि इकबाल वर्मा को छोड़कर शेष सारे अनुवाद फिटज जेराल्ड के अनुवाद के ही हुए। हालावाद के मुख्य प्रयोक्ता एवं प्रर्वतकों में से एक बच्चन ने इस प्रश्न को उठाते हुए कहा कि ऐसी क्या विशेष समाजिक स्थिति थी, जिसने सारे देश का ध्यान खैयाम की ओर खींचा। वास्तव में सन् १९३० का समय ही ऐसा था। हालावाद, निराशावाद के क्रीड से उत्पन्न हुआ था । कवि समाज से भिन्न प्राणी नहीं है। उसकी पुकार समाज की पुकार है। अत: हालावादी कवियों ने जो कुछ कहा उसमें तत्कालीन भारतीय समाज की प्रेरणा निहित थी। सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक थपेड़ों ने भारतीय जीवन को विलोडि़त कर दिया था। उसी दु:ख से क्षणिक मुक्ति देने का कार्य हालावादी साहित्य ने किया। हालावादी गीतों ने निराश भारतीय जनता को, क्षणिक विराम दिया। साहित्य में इस क्षणवादी दर्शन को हाला मदिरालय, प्याला, सुराही, साकी के माध्यम से अभिव्यक्ति मिली। हालावाद, प्रत्येक क्षण में पूर्ण उपयोग का दर्शन है, आज का अभी का क्षण महत्वपूर्ण है, भूत और भविष्य चिन्तनीय नहीं है।

यथार्थ की निराशा और तरुणाई की रोमेन्टिक इच्छाओं के संघर्ष में पड़े युवकों को मदिरालय, एक शरणस्थली के रुप में मिली। हाला, बाला, प्याला के कल्पित लोक में उसे वर्तमान के दुख से मुक्ति मिली। मस्ती के वातावरण में बंधनों से निर्भय होकर उसने ज्ञान, ध्यान, पूजा, पोथी, स्थूल बंधनों को तोड़ने की पुकार की, क्योंकि जब वासना तीव्रतम थी, तब उसे संयमी बनना पड़ा था। उसकी अल्पतम इच्छाओं को बंदी बनाने वाला संसार, क्रीड़ा स्थल नहीं कारागार था।

नवीन, हृदयेश, भगवतीचरण वर्मा, बच्चन, पद्मकांत, अंचल आदि कवियों ने इस मादकता और बेहोशी के गीत गाये और इन सभी में प्रतिपल के परिवर्तन के क्षणवादी दृष्टिकोण हैं। ख्याति की दृष्टि से बच्चन का सर्वश्रेष्ठ स्थान है। १९३३ से १९३६ ई. के मध्य बच्चन के तीन काव्य संग्रह मधुशाला, मधुबाला और मधुकलश निकले। १९३३ ई. उनका खैयाम की मधुशाला का अनुवाद पाठकों के समक्ष आया। बच्चन को ख्याति और तीखे आक्षेप दोनों मिले। बच्चन हालावादी के प्रमुख कवि हैं। उन पर उमर खैयाम का प्रभाव दो प्रकार से पड़ा। प्रथम उसके भाव उन्हें इतने प्रिय लगे कि फिटस जेराल्ड और खैयाम की कविता का हिन्दी रुपांतर किया गया। इसके अलावा खैयाम का जीवन दर्शन इतना हृदयस्पर्शी लगा कि उसे बच्चन ने अपना

लिया। खैयाम के आधार पर ही तीनों कृतियों को प्रस्तुत किया। मधुशाला बच्चन की प्रथम रचना है। इसमें कवि ने मदिरालय मधुबाला, प्याला और हाला के प्रतीकों को स्वीकार करके उनका प्रयोग विभिन्न अर्थों में किया है। मदिरालय तथा हाला की कल्पना कर लेना बच्चन की प्रतिभा का द्योतक है। कहीं पात्र शरीर है, तो हाला प्राण । कहीं पात्र जगत है, तो हाला जीवन, कहीं पात्र हृदय है, तो हाला भावनाएँ। पात्र पलकें, तो हाला अश्रु। पात्र मन है, तो हाला मादकता। प्रकृति में पात्र समीर है, तो हाला सौरभ। पात्र पुष्प है, तो हाला पराग। पात्र पृथ्वी है तो हाला सागर। पात्र आकाश है, तो हाला वर्षा जल। इस प्रकार कवि ने सृष्टि के असंख्य वस्तुओं में मधुशाला एवं हाला के दर्शन कर सभी प्रकार के पीने वालों को तृप्त करने का प्रयत्न किया।

मधुशाला में कहीं कही बच्चन सुधारक के रुप में दिखाई देते हैं। बच्चन किसी भी प्रकार की विचार संकीर्णता के पक्ष में नहीं है। उनकी कामना है मनुष्य को धार्मिक संकीर्णता से मुक्त करना। साकी असामंजस्य आदि को दूर करने का बच्चन की दृष्टि में एक साधन है हाला। इसी का दूसरा नाम प्रेम की मस्ती है, जो सृष्टि की सभी वस्तुओं से टपक रही है। यही नही हाला की मादकता में ही कवि को अनंत सुख का प्रदुर्भाव होने लगता है।

प्रिये, मदिरा से देना सींच, अधर मेरे होत मृत म्लान,
मरुं तब मदिरा से ही, प्राण, कराना मेरे शव को स्नान
अंगूरी पत्तों से मृत देह, मूंद, उनकी हो शैया डास,
सुला देना मुझको चुपचाप, किसी मधुमय के पास। **[१७०]**

इस प्रकार हाला एक ओर लोक सुख का साधन है तो दूसरी ओर परलोक सुख का। इसमें मालिक मधुशाला मदिरालय मधुबाला, मधुपायी, सुराही, प्याला, हाला आदि सृष्टिकर्ता, जगत, प्राणी, जीवन, आनंद आदि के प्रतीक है । कवि ने मधुशाला का प्रयोग यत्र तत्र नारी के लिए भी किया है। क्योंकि नारी स्वयं ही साकार सुन्दरता, साकार मधुरता और साकार आकर्षण है। मधुबाला बच्चन की सुन्दर कृति है। इसमे सरस वाणी, अलौकिक काव्य प्रतिभा अवलोकनीय है। मधुकलश में तो मधु की इति हो गयी है।

बच्चन का अपना निजी दृष्टिकोण है। धार्मिक संदर्भ में बच्चन के विचार व्यापक हैं। धार्मिक संकीर्णताओं पर कसे गए व्यंग्य इसी प्रवृत्ति के परिणाम है। यही कारण है हालावादी कवि समाज के आडम्बरों पर अट्टहास करने के लिए, उसकी संकीर्णताओं के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए मदिरालय के दरवाजों की आरे बढ़ने लगता है। उसकी पुकार यहॉ दृष्टव्य है

मैं हँसा जितना कि खुद पर कौन हँस मुझ पर सकेगा।[१७१]

कवि का विचार है कि जीवन क्षणभुंगर है। न जाने कब मृत्यु का आलिंगन करना पड़े। भय मानव को सुख से नहीं जीने देता। वर्तमान क्षण को निर्द्वन्द होकर जीने के लिए ही वह मदिरा पीकर चूर होना चाहता है। बच्चन जीवन से पलायन नहीं करते। उनकी मधुशाला पर पलायनवाद का आरोप लगाना तभी तक ठीक है जब तक उन्हें ठीक से समझ नहीं लिया जाता। उनकी कविता में उन्होंने स्वयं कहा है-

राग के पीछे छिपा, चीत्कार कह देना किसी दिन,
हैं लिखे मधु गीत मैंने , हो खड़े जीवन समर में। [१७२]

ऋगवेद में भी सोम की पूजा के मंत्र हैं, तब मधुशाला नूतन नहीं है, शाश्वत है-

वेद- विहित यह रस्म न छोड़ो, वेदों के ठेकेदारों,
युग युग से ही पूजती आई, नई नहीं है मधुशाला। [१७३]

इस्लाम में मदिरा हराम है पर बच्चन की प्रतिभा यहॉ भी एक तर्ज प्रस्तुत करने में नहीं हिचकती

शेख कहॉ तुलना हो सकती, मस्जिद की मदिरालय से
चिर विधवा है मस्जिद तेरी, सदा सुहागिन मधुशाला। [१७४]

बच्चन की कविताएँ अपने इसी गुण के कारण स्वभावत: चमक रही हैं। उपर्युक्त विवेचन के आधार पर संक्षेप में हालावादी साहित्य की निम्नलिखित विशेषताएँ परिगणित की जा सकती हैं-

१) सामाजिक रुढ़िवाद तथा धार्मिक आडम्बरों के प्रति विद्रोह की भावना।
२) मधुपान द्वारा जीवन की कठिनाइयों से क्षणिक मुक्ति की कामना।
३) जीवन की क्षण भंगुरता में अमर विश्वास और उसकी आनंद एवं मस्ती से व्यतीत करने की लालसा।
४) प्रेम, सौंदर्य और यौवन की अभिव्यक्ति।
५) हाला द्वारा ईश्वरीय प्रेम का अनुभव करने की कल्पना।
६) लोकमार्ग के प्रतिकूल चलने का आग्रह।

७) कल्पना की ऊँची उड़ान।

अंतत: हालावाद के सम्बन्ध में बच्चन का कथन है कि - कोई सिद्धान्त बनाकर, कोई वाद विशेष चलाने के विचार से, कोई दर्शन प्रतिपादित करने के ध्येय से, कोई क्रांति लाने का लक्ष्य करके अथवा स्थापित और प्रचलित काव्यविधा छायावाद के विरुद्ध विद्रोह का कोई झंडा खड़ा करने के लिए यह कविता नहीं आई थी। अगर मेरी कविता में यह सब था तो मेरे जीवन में आ चुका था। कोई सिद्धांत बना था तो जीवन में किस वाद का आभास हुआ था तो जीवन में किसी नई विधा ने जन्म लिया तो जीवन में कुछ ऐसा परिवर्तन आ चुका था कि वह पुरानी विधा में व्यक्त नहीं हो सकता था।

उपर्युक्त कथन से यह सिद्ध हो जाता है कि बच्चन जी ने अपनी कविता के माध्यम से कोई वाद विशेष नहीं चलाया किन्तु उन्होंने जो अपने जीवन में भोगा और जीया, उसी को काव्य के माध्यम से कुछ प्रतीकों को लेकर पाठकों के समक्ष अभिव्यक्त किया है। बच्चन ने अपनी बात इस प्रकार कही है मधुशाला लिखकर मैंने कोई वाद नहीं चलाया। कुछ प्रतीकों को लेकर मैंने अपनी भावनाएँ व्यक्त की हैं।

४.३.२ स्वच्छन्दतावाद

स्वच्छन्दतावाद अथवा रोमांटिसिज्म सामान्यत: एक प्रवृत्ति विशेष का ही द्योतक शब्द है। यह प्रवृत्ति प्रत्येक काल के साहित्य में परिलक्षित होती है। स्वच्छन्दतावाद मान्य परिभाषा है -साहित्यिक उदारवाद ही रोमांटिसिज्म है, अर्थात् प्राचीन शिष्ट तथा पारंपरिक विचारधारा के विरोध में उठ खड़ी होने वाली विचारधारा को रोमांटिसिज्म कहा जाता है। प्राचीन धर्म, परम्परागत व सामाजिक संस्कार आदि समाप्त हुए और रोमांटिसिज्म का जन्म हुआ है।

डॉ. कमल कुमारी जौहरी ने स्वच्छन्दतावाद की निम्न विशेषताएँ मानी हैं -

१) कल्पना की प्रधानता
२) भावना का अतिरेक एवं प्रेम की प्रधानता।
३) व्यक्तित्व का समावेश
४) प्रकृति प्रेम।
५) अतीत प्रेम।
६) सौन्दर्य प्रेम एवं सौन्दर्य दृष्टि।
७) साहसिकता तथा धैर्य का प्रदर्शन।
८) असाधारण और अलौकिकता की ओर झुकाव एवं जीवन की वास्तविकता से पलायन।
९) कौतुहल तथा औत्सुक्य की सृष्टि।
१०) अभिव्यक्ति के क्षेत्र में नियमों तथा रुढ़ियों से मुक्त तथा शास्त्रीयता के विरुद्ध।

साहित्य को सीमा, नियम, आदर्श, उद्देश्य आदि से निकालकर व्यापक बनाया गया साहित्य, जीवन की तरह ही गतिशील है तथा युग एवं परिवेश के अनुकूल परिवर्तनशील। साहित्यकारों ने परंपरा के प्रति विद्रोह तथा आंतरिक प्रेरणा को महत्व दिया।

बीसवीं शती के प्रारम्भ में रीतिकाल तथा द्विवेदी युग के विरुद्ध छायावाद का उदय हुआ, छायावादी कवि अंगेजी के स्वच्छन्दता से प्रभावित थे। रोमांटिसिज्म शब्द का विशिष्ट प्रयोग १९वीं शती के अंग्रेजी काव्य के लिए होता है, जिसके प्रमुख कवि थे वर्डसवर्थ, शैली कीटस तथा बायरन। छायावाद तथा रहस्यवाद अपनी विचार पद्धति और रूप विधान दोनों के लिए स्वच्छन्दतावाद के ऋणी हैं। स्वच्छन्दतावाद का यह प्रभाव कुछ तो प्रत्यक्ष था और कुछ रवीन्द्र नाथ ठाकुर के माध्यम से आया था। स्वच्छन्दतावाद से सबसे अधिक प्रभावित सुमित्रानन्दनपन्त थे। बच्चन के काव्य में भी यह प्रवृत्ति विद्यमान है। १) दार्शनिक २) कलात्मक ३) साहित्यिक स्वच्छन्दतावाद का दर्शन किसी तत्व ज्ञान के अर्थ में दार्शनिक नहीं है और न वह मध्यकाल के भक्ति आन्दोलन से मिलता-जुलता है। हिन्दी कवियों की सर्वचेतनावादी कविताओं में यह देखने को मिलता है। कवि को सागर, निर्झर, नदी, नाले, कोयल, बुलबुल आदि सब अचेतन पदार्थो में एक अत्यंत चेतना का प्रवाह दिखाई देता है-

भाग में मिलते सागर गहरे, कितने नद-नाले नीर-भरे,
कितने सर, निर्झर स्त्रोत मिले, पर नहीं कहीं पर हम ठहरे।
तेरे लघु प्याले में ही बस अपतव्य डुबाने हम आए। **[१७५]**

काव्य क्षेत्र में, प्रगति मुक्त कवियों की रुचि अधिक हो गई। साहित्यिक रूप में परिवर्तन स्वच्छन्दतावाद का तृतीय पक्ष है। इसके अन्तर्गत काव्य के छन्द काव्य - रूप एवं रचना प्रक्रिया में महान परिवर्तन हुआ। आधुनिक कवियों के लाक्षणिकता, सांकेतिकता, शब्दों के ध्वन्यात्मक प्रयोग एवं नाद सौन्दर्य द्वारा हमें स्वच्छन्दतावाद का आवेश मिलता है -

तुमने समझा मधुपान किया, मैने निज रक्त प्रदान किया।
डर क्रंदन करता था मेरा, पर मुख से मैंने गान किया
मैंने पीड़ा को रूप दिया, जग समझा मैंने कविता की,
मैं एक सुराही मदिरा की। **[१७६]**

बच्चन जी ने नियति से पराजित होकर भी अपराजेय एवं क्रियाशील बने रहने का संदेश प्रस्तुत किया है। बच्चन की निम्न पंक्तियों में छायावाद तथा स्वच्छन्दतावाद दोनों की ही प्रवृत्तियों को सहज रूप में देखा जा सकता है।

बादल वारिधि से मधु पीकर, नभ के आंगन में मंडराते
चपल -साकी को संग लिए, नर्तन करते, गायन गाते।
पृथ्वी में जिसने प्यास भरी, बादल में उसने नीर भरा,
तट अधरों के नीचे रखा है, प्याला अंबुधि का गहरा। [१७७]

छायावाद अपना युग व्यतीत कर चुका था। उसके अशरीरी सौंदर्य के लिए अब कोई आकर्षण न था। उन्हें अपनी सरल, सुबोध वाणी उसके समक्ष फीकी प्रतीत हुई -

मेरी तृष्णा तो मूर्तिमती, परिपूर्ण विश्व की आकांक्षा।
मानव अशांति मानव स्वप्नों के गायन ही तो हूँ गाता।
गाऊँगा जब तक एक नहीं होकर मिलते संघर्ष प्रणय।

इस कविता में प्रकृति वर्णन के सुन्दर पद हैं-

यही श्यामल नभ का संदेश रहा जो तारों के संग झूम
यही उज्जवल शशि का संदेश रहा जो भू के कण-कण चूम। [१७८]

इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं कि छायावाद को अपदस्थ करने और युग प्रवृत्ति को एक नया मोड़ देने में बच्चन के काव्य ने अद्‌भुत सफलता पायी है। संक्षेप में स्वच्छन्दतावाद किसी प्रकार का कोई बंधन स्वीकार नहीं करता। स्वच्छंद रहना मानव चाहता है। बच्चन स्वभाव से ही विद्रोही रहे हैं। वह अपने काव्य के माध्यम से यह संदेश देते हैं कि बंधनों को काट फेंको। बच्चन स्वच्छन्दतावाद के वे सच्चे पुजारी हैं, जो अपनी पूजा में अपनी सुध-बुध बिसार बैठे हैं और प्रतिपल नूतनता की सृष्टि में रत हैं, वह नूतनता जो चिर स्वच्छंद हो।

४.३.३ व्यक्तिवाद-

प्राचीन काल से लेकर अद्यावधि रचित काव्य में, संबंधित कथा यत्र-तत्र कवि पथ संकेत करते ही हैं। जिनमें प्रसंगानुकूल मनोदशाओं का चित्रण होता है। यह सभी कुछ कवि की आत्मानुभूति से अभिप्रेरित होता है। सूर, तुलसी, मीरा आदि के काव्यों में आत्म निवेदन के पद नैतिक, आदर्श एवम् ईश्वरोन्मुख प्रेम भाव को लिए हुए मिलते हैं। जीवन की विषमताओं,अर्थ एवम् काम जन्य कुण्ठाओं तथा मानसिक अवस्था ने सामाजिक रीति-नीतियों एवम् रूढ़ियों के विरुद्ध विद्रोह का घोष करने के लिए कवि को प्रेरित किया।

भारतीय आदर्शवाद और भौतिकवादी चिंताधारा के मध्य एक नई चिन्ताधारा विकसित हुई जिसे वैयक्तिक कविता कहते हैं। इसमें कवि ने निजी सुख-दुख की अभिव्यक्ति करके, अपने जीवन संघर्ष का उद्‌घोष ओजपूर्ण शब्दों में प्रस्तुत किया। इन कविताओं में न तो आध्यात्मिक या आदर्शवादी परंपराओं का मोह है, न किसी प्रकार के सामाजिक कर्तव्य का ध्यान। ये तो मन में समय-समय पर उठी हुई तरंगों की सरल अभिव्यक्ति है, जो परिस्थिति जन्य हर्ष-विषाद की भावनाओं का मुखरित रूप है। वैयक्तिक कविता को डॉ. नगेन्द्र के छायावाद की अनुजा और प्रगतिवाद की अग्रजा बताया है।

डॉ. नगेन्द्र ने व्यक्तिवादी काव्य की चिंताधारा का विश्लेषण संक्षेप में इस प्रकार से किया है -

१. इसका आधारभूत दर्शन व्यक्तिवाद है।
२. इस व्यक्तिवाद का आधार अद्वैतवाद या विश्वात्मावाद का सूक्ष्म आध्यात्मिक सिद्धांत नहीं है।
३. इसका आधार मानव के भौतिक अस्तित्व की स्वीकृति है, अतएव मानव के ऐच्छिक संघर्ष की जय-पराजय से ही इसकी उत्पत्ति हुई है।
४. इसमें एक ओर संदेहवाद और भाग्यवाद जैसे नकारात्मक जीवन दर्शनों के, और दूसरी ओर मानववाद के अंतरसूत्र वर्तमान हैं। नकारात्मक जीवन दर्शनों की चुनौती और उपभोगवृत्ति और मानवतावाद की मानव सहानुभूति तथा मानव मुक्ति तत्वों से इसके कलेवर का निर्माण हुआ है।
५. इसका विकास अभावात्मकता से भावात्मकता की ओर होता गया है।
६. जीवन के सहज संघर्ष अद्‌भुत होने के कारण इस जीवन दर्शन का विकास अत्यंत स्वाभाविक रीति से सिद्धांतों की रगड़ से हुआ है, अतएव अधिक स्वस्थ और व्यवस्थित न होते हुए भी इसमें एक सहज आकर्षण रहा है।

जब यह धूमिल संसार और जीवन अधिक मूर्त अनुभूत होने लगा और छायावाद का अप्रत्यक्ष एवं सूक्ष्म व्यक्तिवाद, प्रत्यक्ष और स्थूल की महान स्वीकृति का आग्रह करने लगा, तब धर्म, राजा, समाज, देश की भावना के नीचे दबे हुए व्यक्ति का अहं जागरण होकर कुंठा और प्रसादन को सबसे अधिक महत्व देने लगा।

डॉ. नगेन्द्र ने बच्चन की कविता को पूर्ण रूप से व्यक्तिवादी कविता ही कहा-

मैं तो बस इतना कहता हूँ, वह एक दीप लौटा लाओ,
जिसके लघु-बाड़व-ज्वाला से, घबरा उठता तम का सागर।
एक चिड़िया चोंच में तिनका लिए जो जा रही है,
वह सहल में ही पवन अनचास, को नीचा दिखाती। [१७९]

बच्चन के प्रारंभिक जीवन में संघर्षयुक्त युवक की करुण व्यथा हमें मधुशाला, मधुबाला और मधुकलश में मिलती है। बच्चन की मदिरा दु:ख को भुलाने के लिए नहीं है, वह शाश्वत् जीवन सौंदर्य एवं शाश्वत प्राण चेतना शक्ति का सजीव प्रतीक है। बच्चन ने अपने समकालीन समाज को यही तीखी खुराक देकर उसमें उत्तेजना पैदा करने का प्रयत्न किया-

धर्मग्रंथ सब जला चुकी है, जिसके अंतर की ज्वाला,
मंदिर, मस्जिद, गिरजे सबको तोड़ चुका जो मतवाला।
मुसलमान और हिन्दू हैं दो, एक मगर उनका प्याला
एक मगर उनका मदिरालय, एक मगर उनकी हाला। [१८०]

बच्चन जी की कविताओं में सूक्ष्मता, कल्पना और बौध्दिक परिवेश, अपने अनुभूत तत्वों का नियोजन, अमूर्त तत्वों के द्वारा प्रस्तुत नही किया गया, वह तो जीवन के मनोवेगों की संवेदनशीलता को स्पर्श करते हुए, उनका व्यक्ति चेतना का सहज धरातल, वेदना का गीत, शंका विशाद और निराशा को, अमृतमय और भाग्यवाद या नियतिवाद को निषेधवाद तक ले जाता है। इसलिए उसका नियतिवाद निराशा से दूर होता हुआ आशावाद से संयुक्त कर्मवाद का संदेश हमें देता है।

जो बीत गई सो बात गयी जीवन में एक सितारा था,
माना वह बेहद प्यारा था, वह डूब गया तम डूब गया

अंबर के आनन को देखो कितने इसके तारे टूटे,
कितने इसके प्यारे छूटे, जो छूट गए फिर कहाँ मिले,
पर बोलो टूटे तारों पर अंबर कब शोक मनाता है। [१८१]

स्वयं बच्चन का विचार है- बौद्धिक रचनाएँ सृजनात्मक नहीं होतीं, सृजन का अर्थ ही है आत्मदान। बुध्दि से लिखी जाने वाली रचनाएँ कभी श्रेष्ठ साहित्य के अन्तर्गत वर्गीकृत नहीं की जा सकतीं।

१. व्यक्ति के प्रति व्यक्ति का विद्रोह-

मेरे पूजन आराधन को, मेरे संपूर्ण समर्पण को
जब मेरी कमजोरी कहकर, मेरा पूजित पाषाण हँसा
तब रोक न पाया मैं आँसू। [१८२]

२. व्यक्ति का संस्था के प्रति विद्रोह-

धर्म संस्थाओं के बंधन तोड़ गया है वह विमुक्त मन,
संवेदना-स्नेह-संबल भी खोना उसे पड़ा है
अकेला मानव आज खड़ा है। [१८३]

भगवती चरण वर्मा के शब्दों में- बच्चन की कला में बौध्दिक सजावट नहीं है और न उसमें ज्ञान और दर्शन की कोई आरोपित स्थापना है। उसमें भावना का स्वाभाविक आवेग है और इसलिए वह पढ़ने को तन्मय कर लेते हैं।

सामाजिक और आर्थिक-वैषम्य की जिस परिस्थिति में बच्चन जी का विकास हुआ, उसमें स्वाभाविक रूप से विद्रोह का उत्स फूटता हुआ दिखाई देता है। शिक्षित युवक भावी जीवन को जिस आशा से ऊँचाइयों तक ले जाने को उत्सुक हुआ, उसे परिस्थितियों ने झकझोर दिया। अत: उसके अर्न्तमन में वाह्य जीवन संघर्ष की टकराहट से जो भाव प्रवाहित हुए वह एकान्त संगीत में अभिव्यक्त हुए हैं। बच्चन जी का विद्रोही भाव डॉ. नगेन्द्र के अनुसार निम्न रूपों व उदाहरणों से स्पष्ट है-

३. व्यक्ति का नियति के प्रति विद्रोह-

क्षत् शीश मगर, नत शीश नहीं, बनकर अदृश्य मेरा दुश्मन
करता है मुझ पर वार सघन, लड़ लेने को मेरी हबसें-
मेरे उर के ही बीच रही। क्षत् शीश मगर नत् शीश नहीं। [१८४]

४. व्यक्ति मानव का ईश्वर के प्रति विद्रोह-

प्रार्थना मत कर, मत कर, मत कर, युध्द क्षेत्र में दिखला भुजबल रहकर अविजित, अविचल, प्रतिपल, मनुज - पराजय के स्मारक हैं मठ , मस्जिद, गिरजाघर। [१८५]

अनुभूति की भांति बच्चन के विचार सरस होते हैं। इस प्रकार बच्चन की कविता एकांत आत्मगत कविता है। भौतिक घात प्रतिघात से उत्तेजित जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना बच्चन का प्रेरणास्त्रोत है। उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि व्यक्तिवादी कविता की जिस भाव-भूमि को बच्चन जी ने छुआ है वह अपने समसामायिक अन्य कृतिकारों की अपेक्षा,अधिक तलस्पर्शी है। यही कारण है कि बच्चन जी कि लोकप्रियता व्यक्तिवादी कवियों में सर्वाधिक है और इसीलिए बच्चन जी अपने समय की आवाज में बहुत ऊँचे रहे हैं, इनका व्यक्ति विद्रोही है और पराजय को स्वीकार नहीं करता और कभी -कभी तो यह अहं इतना विराट हो जाता है कि समस्त विश्व को अपने भीतर समेटने की क्षमता रखता है।

किसी मूर्ति पर पुष्प चढ़ा तू
पूजा मेरी हो जाती है। [१८६]

४.३.४ यथार्थवाद-

यह साहित्य की एक विशिष्ट चिंतन पध्दति है, जिस के अनुसार कलाकार को अपनी छवि में यथार्थ रूप का अंकन करना चाहिए। यह दृष्टिकोण आदर्शवाद का विरोधी माना जाता है। जीवन में अयथार्थ की कल्पना दुष्कर है। यथार्थवादी कलाकार जीवन के सुन्दर अंश को छोड़कर असुन्दर अंश का अंकन करना चाहता है।

बाबू गुलाबराव के शब्दों में- यथार्थ वह है जो नित्य प्रति हमारे सामने घटता है उसमें पाप-पुण्य, सुख-दुख तथा धूप-छॉव का मिश्रण रहता है। वह संसार की कलुष कालिका पर भव्य आवरण नहीं डालना चाहता। आदर्शवादी स्वप्न दृष्टा होता है। यदि वर्तमान दुखमय है, तो उज्ज्वल भविष्य की सुन्दर झाँकी देखने में मग्न रहता है । वह आशावादी होता है और आशा एक बिन्दु से सुख के सागर की सृष्टि कर लेता है।

कुछ लोगों ने यथार्थवाद का बड़ा शान्तिपूर्ण अर्थ लगाया है। आज यथार्थवाद के नाम पर अश्लीलता का जो भयंकर प्रदर्शन हो रहा है वह समाज के लिए घातक है। यथार्थ में जिज्ञासा और अनुभव की तीव्रता की प्रधानता है। इनकी निम्न विशेषताएँ हैं-

१) जीवन के प्रति यथार्थ स्वाभाविक और वास्तविक दृष्टिकोण
२) समाज की व्यवस्था की शक्तिशाली प्रतिक्रिया
३) वर्णन में वस्तुओं की यथार्थता पर अधिक बल और स्पष्टता
४) आदर्श की प्राप्ति के लिए प्रयत्न।

यथार्थवाद में युग तथा जन समूह की सच्ची भावना होती है। यथार्थ न हो तो न इतिहास है, न कैमरा और न ही अजायबघर। यथार्थवादी साहित्य के कलापक्ष को लेकर प्राय: लोगों में भ्रम रहता है, कि यथार्थ चित्रण के क्षेत्र में कला अपना कोई स्थान नहीं रखती। वास्तविकता परिवर्तनशील है। परिवर्तन ही शाश्वत सत्य है। यथार्थवादी कालाकार की प्रतिभा उर्वरता इसी में है कि वह शाश्वत सत्य को पहचाने तथा समाज में परिवर्तन लाने वाले उन तत्वों को अपने साहित्य में चित्रित करे।

प्रो. विजय शंकर मल्ल, ने लिखा है यथार्थवादी साहित्य किसी पिटी पिटायी सड़क पर चलकर अपनी नियामक शक्ति का जलवा नहीं दिखाना चाहता, वह बहुत ही स्थूल, एकदम एकांगी और असंवेद्य होगा उसके लिए बंधन इतना ही लगाया जा सकता है कि वह सामाजिक हो और सामान्य अनुभूतियों के मेल में यथार्थ का अंकन करे।

यथार्थवादी प्रवृत्तियॉं सभी देशों के साहित्य में विभिन्न कालों में प्राप्त होती हैं। हालांकि सभी नियमों के अपवाद देखे जाते हैं, किन्तु इस नियम का अपवाद देखने को नहीं मिला। बच्चन एक समय में ऐसे अवश्य लगे थे कि, वह युग यथार्थ से अप्रभावित रहे हैं।

बच्चन ने आरती और अंगारे की भूमिका में लिखा है- इस उस कोने से आपको लोगों से ऐसे भी स्वर सुनाई देंगे कि अब गीतों का युग बीत गया। बच्चन का सृजन युग यथार्थ से सर्वदा अछूता दिखा था, परन्तु उतना नहीं था, जितना समझा गया था। जब बच्चन ने अपने कवि जीवन का प्रारंभ मधुशाला से किया था तब देश पराधीन था और स्वतन्त्रता के लिए आन्दोलन चल रहे थे। आगे जाकर ऐसी घटनाएँ हुई जो यथार्थ के बदले हुए तेवर स्पष्ट करते हैं, लेकिन इस समय यथार्थ को ध्यान में रखने से यह भी स्पष्ट होता हैं कि एक आशा थी, जातीय जीवन में एक उत्साह था जो हमें निरंतर आगे खींचे जा रहा था। १९३५-३६ के बाद मानवीय इतिहास में सबसे बड़ी घटना थी विश्व युध्द । इसने सम्पूर्ण विश्व को एक नए सिरे से झकझोरा। बच्चन ने इस युध्द का चित्रण अपने काव्य में किया है-

> किन्तु कुन्दन भाग जग का, आग में क्या नष्ट होगा?
> क्या न तपकर, शुध्द होकर और स्वच्छ स्पष्ट होगा ?
> एक इस विश्वास पर बस, आस जीवन की टंगी है।
> युध्द की ज्वाला जगी है। [१८७]

४.३.५ आदर्शवाद-

हिन्दी में आदर्शवाद अंग्रेजी भाषा के शब्द आइडियलिज्म के लिए प्रयुक्त होता है। सामान्य तथा आदर्शवाद और आदर्शवादी शब्दों का उपयोग इन शब्दों की दार्शनिक अर्थवत्ता से नितांत भिन्न अर्थ में किया जाता है। शब्द के सामान्य अर्थ के अनुसार, आदर्शवादी वह व्यक्ति है, जो उच्च नैतिक आध्यात्मिक और सौन्दर्यपरक प्रतिमानों और आदर्शो को स्वीकार करे। अपने तथा समाज के जीवन को उनके अनुसार ढालने का प्रयास करे। पृथ्वी पर स्वर्ग, ईश्वर का राज्य, सतयुग रामराज्य मनुष्य की तथाकथित पूर्णावस्था, शोषण रहित समाज आदि को स्थापित करना चाहता है। नैतिक आदर्शवाद ने मनुष्य के जीवन पर व्यापक प्रभाव डाला है। वस्तुत: आदर्शवाद किसी भी संस्कृति की आत्मा है। व्यक्ति और समाज को किसी आदर्श की ओर ले जाने की प्रवृत्ति भी मनुष्य में नैसर्गिक सी है। आधुनिक युग में टालस्टाय, रवीन्द्र नाथ ठाकुर, राम्यां रोलां और गॉधी जी ने भारतीय आत्मा में एक व्यापक नैतिक

आदर्शवाद का संस्कार दृढ करने में बड़ा योगदान दिया है। प्रेमचंद की गणना श्रेष्ठ आदर्शवाद में होती है। प्रसाद की कामयनी भी इच्छा ज्ञान क्रिया के सम्य सामंजस्य के आदर्श को प्रतिपादन करती है। व्यवहारिक जीवन में जब मनुष्य की स्थूल आवश्यकताएँ सुरसा की भाँति मुँह फैलाकर विकराल रूप धारण करती हुई प्रकट होती है, जब जीवन के ऊपरी मूल्य उद्‌घटित होते है। जिनके दो रूप हमें दिखाई देते हैं - व्यष्टिगत और समष्टिगत।

१. पारम्परिक विकास का मार्ग जिसे आध्यात्मोन्मुख आदर्शवाद कहते हैं।
२. विद्रोह का मार्ग जिसे साम्योन्मुख भौतिकवाद कहते हैं।

जगत के सूक्ष्म अतींद्रिय सौंदर्य से अनुप्रणित वे कविताएं आती हैं, जिन्हें छायावाद का नाम दिया जाता है। आदर्शवाद में साधना की विशिष्टता प्रधान रुप से कार्य करती है। डॉ. भागीरथ मिश्र के शब्दों में-आदर्शवादी साहित्य व्यक्ति प्रधान विशेष होता है और उसका नायक अथवा विषय भी ऐसा होता है। आदर्शवाद व्यक्ति विशेष को लेकर उसके गुणों की ओर हमें खींचता है और उसके चरित्रों का अनुकरण सांसारिक समस्याओं के समाधान के लिए उपयुक्त समझता है।

भारतीय कलाओं का मूल स्त्रोत आदर्शवादी है । हिन्दी में पिछली पीढ़ी का छायावाद भी मूलत: आदर्शवादी है। यदि हम जो है उसे वास्तविक कहें तो जो होना चाहिए उसे आदर्श कह सकते है। आदर्शवाद आदिकाल से सामाजिक जीवन की मान्यताओं के निर्धारित स्वरूप का समावेश कराके उस पर दूसरों के चलने के लिए मार्ग प्रस्तुत करता है। आदर्शवाद की निम्न विशेषताएँ हैं -

१) भविष्य और अव्यक्त की ओर झुकाव।
२) सामंजस्य, सुव्यवस्था, पूर्णता की ओर संकेत।
3) मार्ग दर्शक।
४) जीवनोपयोगी सिध्दांतो का प्रतिपादन।
५) दृढ़ता की देन।

प्रत्येक देश की परिस्थितियॉ अपना आदर्श स्वयं गढ़ लेती हैं। संसार के संपूर्ण देशों का साहित्य इसका प्रमाण हैं। मनुष्य के लिए वही आदर्श ग्राह्य है जिसकी नींव यथार्थ पर हो। कवि जब तक किसी वस्तु को आदर्श न मान ले, तब तक वह समाज को सीख दे ही नहीं सकता-

इसलिए फिर आज सूरज चांद,
पृथ्वी, पवन को आकाश का राखी बनाकर
तुम करो संक्षिप्त पर गंभीर, दृढ़ भीष्म प्रतिज्ञा
देश जन-गण-मन समाए राम।

बच्चन का जीवन शुरू से ही आदर्शो की छत्र छाया में पला बड़ा हुआ है। तुलसी का जो आदर्श था वह बच्चन का भी आदर्श बन चुका है। बच्चन के तुलसी का राम ही एक आदर्श पुरुष है। यहॉ बच्चन के एक युध्द चौकी पर देश - रक्षा के हित में डटे हुए जवान के आदर्श की अद्वितीयता दृष्टव्य है -

उसने अपने रक्त की अंतिम बूँदों तक अपनी नसों के अंतिम स्पंदन तक, अपनी छाती की अंतिम धड़कन तक, अपनी चौकी पर डटे रहकर सारे देश के अपमान और सारी जाति की लज्जा का मूल्य चुकाया।

हमारा भारत देश सदैव अपने आदर्शो पर चला है। बच्चन ने भी हमेशा अपने स्वाभिमान की रक्षा की है और यह कहा है -

'चिता निकट भी पहुँच सकूं मैं अपने पैरों से चलकर, मरकर भी चलने को तत्पर'।

इससे अधिक साहसी और स्वाभिमानी अभिव्यक्ति मैंने नही जानी है। बच्चन जीवन में कई बार टूटे हैं, किन्तु किसी के सामने झुके नहीं हैं। उन्हें अपने रघुराई पर पूर्ण आस्था है और वह अपने जीवन में इसी आदर्शवादी आस्था को लेकर पूर्ण अश्वस्त हैं।

आज के युग में आदर्श को भुलाया जा रहा है, ऐसे में बच्चन को आस्थावादी देखकर कुछ सन्तोष जरूर हो रहा है -

बच्चन के आदर्श टूटते नहीं क्योंकि उनकी नींव रेतीली भूमि पर निर्मित नहीं हुई है। बच्चन का अपने घायल हिंदुस्तान पर पूर्ण विश्वास है कि,वह अवश्य ही एक न एक दिन उठेगा -

मुझको है विश्वास किसी दिन घायल हिंदुस्तान उठेगा।
दबी हुई दुबकी बैठी है कलखकारी चार दिशाएँ
उठी हुई, ठिठकी - सी लगती नभ सी चिर गतिमान हवाएँ
अंबर के आनन के ऊपर एक मुर्दनी सी छाई है,
एक उदासी में डूबी है तृण- तरुवर-पल्लव-लतिकाएँ,
आंधी के पहले देखा है कभी प्रकृति का निश्चल चेहरा
इस निश्चलता के अंदर से ही भीषण तूफान उठेगा। [१८८]

परिस्थितियॉं चाहे कितनी क्यों न बिगड़ती हो, किन्तु बच्चन यह कहने की स्थिति में है -

कल सुधारूँगा हुई संसार में जो भूल
कल उठाऊँगा भुजा अन्याय के प्रतिकूल।

विद्रोह की ज्वाला जगाए, निर्माण की आशा लिए हुए, वह यहॉं दृष्टव्य है -

तिमिर के राज का ऐसा कठिन आतंक छाया है,
उठा जो शीश सकते थे उन्होंने सिर झुकाया है । [१८९]

आदर्श के इन सुरों में वह शक्ति है, जो सभी को अपने आप में सुधारने का अमर संदेश देता है। इन्ही स्वरों में योगदान देने वाला एक शक्तिशाली स्वर बच्चन का है।

४.३.६ प्रगतिवाद -

प्रगति का साधारण अर्थ है आगे बढ़ना। जो साहित्य जीवन को आगे बढ़ाने में सहायक हो वह प्रगतिशील साहित्य है। इस दृष्टि से यदि विचार किया जाए तो तुलसीदास जी भी सबसे बड़े प्रगतिशील लेखक माने जा सकते हैं। भारतेन्दु बाबू और मैथिलीशरणगुप्त भी प्रगतिशील लेखक हैं, अत: प्रगति का अर्थ आगे बढ़ना अवश्य है, किन्तु एक विशेष ढंग से एक विशेष दिशा में।

प्रगतिवाद सामाजिक यथार्थवाद के नाम पर चलाया गया वह साहित्यिक आंदोलन है, जिसमें जीवन और यथार्थ के वस्तु सत्य को उत्तर छायावाद काल में आश्रय मिला। प्रगतिवाद का उद्देश्य यथार्थवाद को प्रतिष्ठित करना, जो नए साहित्य एवं नए मानव की स्थापना करे। इसकी मूल स्थापना सैध्दान्तिक रूप से प्रगतिशील थी, इसलिए इस साहित्यिक आंदोलन को प्रगतिशील आंदोलन के नाम से जाना जाता है। स्थापनाओं की दृष्टि से प्रगतिवाद मूल रूप से साम्यवादी विचारधारा की स्थापना करने का एक सशक्त माध्यम था। प्रगतिवाद ने साहित्यिक क्षेत्र में साहित्यिक विचारधारा को प्रभावित करके उसको एक निश्चित साधना बनाने का प्रयास किया था।

भारतीय जीवन में प्रगतिवाद अनुभूतियों के स्तर पर देशकाल और सम सामयिक यथार्थ की अवहेलना ही करता रहा है। वास्तविक संदर्भ में देखने से प्रगतिवाद केवल एक अयथार्थवाद की भावधारा मात्र रह जाता है। यथार्थ के प्रति उसका कोई दायित्व नही है। संक्षेप में प्रगतिवाद के मूल तत्व निम्नलिखित माने जा सकते हैं -

प्रगतिवाद जीवन के प्रति एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।इसके लिए वह द्वन्दात्मक भौतिकवाद का विश्लेषण कर अर्थ को ही संपूर्ण विषमताओं का कारण मान, उसके समान विभाजन को प्रमुखता देता है। उसका दृष्टिकोण पूर्णत: भौतिकवादी है। वह ईश्वर अथवा आत्मा को मान्यता नहीं देता।

उसका उद्देश्य पूंजीवाद, सामंतवाद आदि सभी प्रतिक्रियावादी तत्वों से संबंध सामाजिक, राजनीतिक, नैतिक, धार्मिक तथा साहित्यिक रूढ़ियों का विरोध कर समाजवाद की स्थापना करना है। कला को अभिव्यक्ति मात्र का साधन मानकर उसका सहज बोधगम्य रूप अपनाने पर जोर देता हे। जिससे सर्व साधारण उसे समझ सके। वह साहित्य में व्यक्ति के ऊपर समाज की सत्ता का अंकुश चाहता है।

बच्चन का काव्य भी प्रगतिवाद से अछूता नही हैं। बच्चन ने भी निम्न वर्ग की दरिद्रता को देखा है और कहा है कि -

ओ दरिद्रता, निम्न वर्ग की पशुता के अति निम्न धरातल से,
उसको जकड़े रहती है, कुछ उसके अतिरिक्त कहीं वह नहीं जानता !

बच्चन ने सभी रुढ़ियों का विरोध कर समाजवाद की स्थापना करने की प्रेरणा देते हुए सामान्य कहावत को चरितार्थ करते हुए कहा है -

यह जानी - मानी बात है कि सिंहो के लेहड़े कभी नहीं रहे
रहे पर यह विश्वास कि छोटा भी अगर करे कोशिश
करता जाए तो एक दिन बड़ा हो जाएगा।

किन्तु बच्चन कहता है कि सामूहिक प्रयास की आवश्यकता है तभी समाजवाद की स्थापना हो सकती है।

बच्चनजी को उनकी कविता ने चाहे रोटी न दी हो, किंतु उनका कवि हमेशा तृप्त रहा है। बच्चन जी भूख का अर्थ समझते हुए कहते हैं-

अर्थ भूख का अभी न जाना, हमें भूख का अर्थ बताना
भूखों इसको आज समझ लो, मरने का यह नही बहाना।
और -
जिधर दृष्टि जाती थी, उसकी खड़ी कतारें सामंतो की ।
सब मनुष्य है एक समान ,एक विधाता की संतान
सब आजादी के हकदार, स्वतंत्रता के दावेदार
नहीं किसी को है अधिकार,करे किसी पर अत्याचार। **[१९०]**

इस प्रकार प्रगतिवाद के सभी गुण बच्चन के काव्य में विद्यमान हैं। बच्चन की कविताओं में प्रगतिवाद के स्तर इतने ऊँचे हैं कि यदि इन्हें निकाल दें तो आप बच्चन के अहं को समझ पाने में असमर्थ रहेंगे ।

४.३.७ प्रयोगवाद -

हिन्दी साहित्य में लगभग पिछले दशकों से एक ऐसी नवीन काव्य प्रवृत्ति के दर्शन होने लगे हैं जिसे उसके अनुयायकों और आलोचकों ने प्रयोगवाद की संज्ञा दी है। हिंदी की इस प्रवृत्ति को जो प्रयोगवाद की संज्ञा दी गयी है, वह उसकी व्यापकता का परिचय न होकर साम्यवादी विचारधारा से प्रभावित साहित्य का परिचय बन गया है। प्रयोग सभी कालों के कवियों ने किए हैं, किन्तु कवि क्रमश: अनुभव करता आया है कि जिन क्षेत्रों में प्रयोग हुए हैं उनसे आगे बढ़कर अब उन क्षेत्रों का अन्वेषण करना चाहिए। प्रयोगवाद में व्यक्ति अनुभूति की शक्ति को मानते हुए समष्टि की संपूर्णता तक पहुँचने का प्रयास किया है। प्रयोगवाद का गंतव्य समस्त परंपराओं का खंडन करना नहीं है, वरन् उसके निर्जीव तत्वों के स्थान पर नये जीवंत तत्वों का अन्वेषण करना है। हिंदी में प्रयोगवादी प्रवृत्ति के कुछ कारण थे। प्रथम तो यह कि छायावाद ने अपने शब्दाडंबरों में बहुत से शब्दों और बिम्बों के गतिशील तत्वों को नष्ट कर दिया था।

डॉ. नगेंद्र के शब्दों में - प्रयोगवादी कविता का जन्म हालावाद के विरुध्द प्रतिक्रिया के रूप में हुआ है। अंग्रेजी साहित्य में भी प्रयोगवादी कविताओं में रोमानी प्रकृति के विरुध्द विद्रोह का एक तीखा स्वर मिलता है। परन्तु वह व्यवहारिक की अपेक्षा सैध्दान्तिक अधिक है।

प्रयोगवादी कवि डॉ. धर्मवीर भारती का मत है - प्रयोगवादी कविता में भावना है, किन्तु भावना के सामने एक प्रश्न चिह्न लगा हुआ है। इस चिह्न को आप बौद्धिकता कह सकते हैं। सामान्यत: प्रयोगवाद का अर्थ होता है काव्य विषयक अन्वेषण और उस अन्वेषण के परिणामस्वरूप काव्य की शैली काव्य में भी अन्वेषण ही सभव है, पूर्ण सत्य तक पहुँचना संभव नहीं है। प्रयोगवादी कवि यह मानकर चलता है कि किसी भी अनुभूति की एक बौद्धिक पृष्ठभूमि होती है और वह पृष्ठभूमि भी काव्यात्मक है। बौध्दिकता भी काव्य का अंश है। किसी भाव का बोध एक बौध्दिक प्रक्रिया है। काव्य में प्रयोगवाद साहित्यिक चेतना की सजीवता प्रदर्शित करता है। सजीवता का आशय ही यह है कि हम अपनी अनुभूतियों के प्रति अधिक से अधिक ईमानदारी का व्यवहार रख सकें। यदि यह ईमानदारी कविता में सुरक्षित है तो उसकी प्रेषणीयता और उसका प्रयोग भी सफल है। छायावादोत्तर कवियों मे से कितनों के ही नाम लिए जा सकते हैं, जिन्होंने हिन्दी कविता को जीवन के एक दम समीप लाने की

चेष्टा की। जिस प्रकार प्रेमचंद ने हिन्दी कथा साहित्य की प्रवृत्तियों को झटके से मोड़ा और उसे समसामयिक जीवन के एकदम समीप ला खड़ा किया उसी प्रकार बच्चन ने भी कल्पनाशील भारतीय युवक मन को वास्तविकता के संबंधों में लाकर खड़ा किया। बच्चन की प्रारभिक कविताओं मधुशाला और मधुबाला आदि में भी जीवन की उष्णता प्रवाह और स्पंदन है। बच्चन के पूर्ववर्ती और परावर्ती काव्य में स्वरों का यह आरोह - अवरोह इसलिए संभव हुआ है कि कवि ने जीने के क्रम में जीवन की अपरिमेयता का अनुभव किया है।

मैने जीवन देखा, जीवन का गान किया। [१९१]

बच्चन जैसे गीतकार को ऐसे शब्दों का प्रयोग कयों करना पड़ा ? यह विचारणीय है। जीवन के यथातथ्य चित्र अंकित करने के लिए प्रयोगवादी प्रसिध्द हैं। मूल संचित मृतिका के वृत्त में धैर्य, धन गदहा या पदाक्रान्त कुत्ता जैसे चित्रों की वहॉ कमी नहीं है। लेकिन प्रयोगवादियों द्वारा प्रयुक्त ऐसे चित्रण और शब्दावलियां, अतिरेक के कारण लोगों को आकर्षित करती हैं। बच्चन ने जीवन के यथार्थ संबंधो को प्रत्यक्ष करने के लिए अपने काव्य में जहॉ -तहॉ प्रयोगवादियों की सी शब्दावली सहजभाव में अपनाई है -

बोया तो बासमती काटी तो बाजरी
रींधी तो जोंधरी खाई तो काकरी
पहेली बूझो चौधरी।

ऐसी शब्दावलियों के प्रयोग के कारण जो खतरे हो सकते हैं उसे प्रयोगवादियों ने भी उठाए हैं और बच्चन ने भी। प्रयोगवादियों और बच्चन दोनों के काव्य में गद्ययात्मक और काव्य -गुणों से हीन स्पष्ट कथन मिलते हैं।

बेटे होने से मेरे उत्तराधिकारी नहीं बनेंगे,
जो मेरे उत्तराधिकारी होंगे मेरे बेटे होंगे।

हिन्दी के नवीन काव्य में जीवन का अनुपात बढ़ गया है, ऐसा नए आलोचक अकसर कहते हैं। बच्चन ने कवि और विदूषक को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाते हुए कहा है -

कवि ! तेरे ऊपर उठने का चरम बिन्दु है
नहीं! तेरे नीचे गिरने की अंतिम सीमा है
विदूषक बेशक।

बच्चन के काव्य में यायावार मानव जीवन का जो दौड़ता - भागता छल - छलाता और बलैया लेता जो रूप प्रतिबिम्बित है वह अपने आप में इतना साफ और सही है कि, उसकी विश्वस्तता और वास्तविकता ही उसे प्रयोगवादी सिध्द करने में समर्थ है -

चार खूँटे गाड़कर खेमा लगाया
मिल गया जो
पिया - खाया धुआँ छोड़ ।
और जो मन में आ गया तो
गीत कोई गुन गुनाया
या कि यों ही बुड़बुड़ाया
पीठ सीधी की
उठा सामान बांधा
चल पड़ा कहता हुआ
श्री राम दंडक वन बिहारी। [१९२]

छायावादोत्तर हिन्दी काव्य में सामान्य जीवन का यह विशिष्ट अनुपात अकारण नहीं है। बच्चन के काव्य में जो जीवन का विशिष्ट अनुपात है, वह समसामयिकता का ही तकाजा है। कवि ने इसे प्रभावशाली ढंग से प्रयोगवादी शैली में वाणी दी है -

कभी-कभी बच्चन का कवि, कहने के ढंग को बदलना भी चाहता है। उसका उलझा मानस अभिव्यक्ति का कोई नयी टेकनीक ढूंढने लगता है। कभी-कभी तो बात को संक्षेप में कह देने की लालसा भी अजीब रंग दिखाकर प्रयोग की भूमि पर साँसें लेने लगती है -

अ से ज्ञ तक मैंने पूरी पुस्तक पढ़ ली।

और कभी मानस के विस्तार को जो बांधा नहीं जा सकता, कवि दूर-दूर से शब्द लेकर एक ठौर उनका समन्वय करना चाहता है। इसके परिणामस्वरूप जो शिशु जन्म लेता है, शरीर में बायीं ओर धड़कता हुआ उसका हृदय - प्रयोग की ही स्वांसों पर जीवित रहता है -

नील गगन मेघती, धवल बादल कुहरे में धंसी
सत्य पर अर्ध सत्य, फिर अर्ध स्वप्न सी खड़ी
चोटियों का आमंत्रण जैसे बंशी टेर
कभी पुचकार कभी मुनहार
कभी अधिकार जताती बुला रही है।

अन्य स्वरों के साथ प्रयोग के भी प्रचुर स्वर बच्चन में हैं। बच्चन का काव्य अब तक अपनी ऊष्मा के साथ जीवित है। बुढ़ापे में आकर कवि की लेखनी में यौवन जागता है। एक ऐसा यौवन जो वृध्द होना नहीं जानता।

४.३.८ पीड़ावाद

भावों में करुणा का शीर्ष स्थान है और करुणा का क्षेत्र अधिक व्यापक है। अगर गहराई से देखा जाए तो प्रेम को भी करूणा के ही भीतर समेटा जा सकता है। प्रेम में विरह का अत्यधिक महत्व है। पीड़ा का वर्णन साहित्य में दो प्रकार से हुआ है - स्व पीड़ा और पर पीड़ा । बच्चन के काव्य में जो पीड़ा ध्वनित है वह निश्चय ही बच्चन के जीवन की मुक्त पीड़ा है। किन्तु किसी का भी दु:ख समाज से सर्वथा अछूता कब होता है ? अत: यह सोचना बिलकुल ही गलत होगा कि, बच्चन के जीवन की पीड़ा केवल उन्हीं की अपनी है। बच्चन के गीतों के कई आलोचकों की यह धारणा बिलकुल गलत है कि उनका काव्य व्यक्ति के दु:ख से ही घिरा हुआ है या कि उसमें कुंठा या पीड़ा प्रधान है। क्योंकि पीड़ा या कुंठा व्यक्ति की नहीं मन की वस्तु है। बच्चन के पीड़ा परक गीतों में वैयक्तिता समानांतर चलती है। बच्चन की पीड़ा, मैं से अर्थात् व्यक्ति के स्वयं से संबंधित है या प्रणय पक्ष में अपनी प्रिया से -

हर दंत समय का जो लगता है, मानो दंत नहीं होता
दुख मानव के मन के ऊपर सब दिन बलवंत नहीं होता,
आहें उबती आँसू झड़ते सपने पीले पड़ते लेकिन -
जीवन में पतझर आने से जीवन का अंत नही होता। [१९३]

किन्तु महादेवी ने जो अपने काव्य में पीड़ा की उदात्त अभिव्यक्ति की है शायद वैसी किसी अन्य कवि ने अपने काव्य में नहीं की -

काल सीमा के संगम पर मोम - सी पीड़ा उज्ज्वल कर
उसे पहनाई अवगुंठन हाल और रोदन से बुनबुन।

बच्चन के पीड़ा परक गीतों में पीड़ा का स्वर आत्मा से नहीं, बल्कि प्राण मन से उभरता है। बच्चन के निशा निमंत्रण, एकांत संगीत और सतरंगिनी के गीतों को पढ़ा जा सकता है। इन्हें पढ़कर यह सहज ही में अनुमान लगाया जा सकता है कि अगर महादेवी के गीतों में मानवता की मांगलिक ध्वनि गूंजती है तो बच्चन के गीतों से मानवता के मन की ध्वनि गूंजती है । पीड़ा भोगते भोगते प्रत्येक व्यक्ति या तो जीवन में पूर्ण निराशावादी हो जाता है या फिर पूर्ण संघर्षवादी। विशेष परिस्थितियों में वह तटस्थवादी भी हो जाता है। इससे अलग तो दार्शनिक दृष्टि का जीवन के यथार्थ से कम संबंद्ध होता है। छायावादी काव्य में भी इस दृष्टि की प्रधानता रही है। जीवन में

सबसे बड़ा यथार्थ पीड़ा को भोगना हैं। भोगी हुई पीड़ा में कल्पना का स्थान ही नहीं रह जाता। महादेवी वर्मा के पीड़ा परक गीतों में प्रिय विरह की छटपटाहट तो प्रतीत होती है, किन्तु यहॉ इस प्रिय का प्रतीकार्य ही प्रधान है -

प्रिय ! साध्य गगन मेरा ! जीवन ! यह क्षितिज बना धुंधला विराग
नव अरुण - अरुण - मेरा सुहाग, छाया सी काया वीतराग,
सुधि भीने सवप्न रंगीले धन। साधों का आज सुनहलापन
घिरता विशाद का तिमिर सघन संध्या का नभ से मूक मिलन
यह अशुमती हंसती चितवन।

उपर्युक्त उदाहरण में पीड़ा की अभिव्यक्ति, अस्पष्टता के कारण अत्याधिक संदिग्ध बन जाती है। बच्चन के पीड़ा परक गीतों में चूँकि जीवन में भोगी हुई पीड़ा के मनोभावों की अभिव्यक्ति होती है। अत: सीधा पाठक के मर्म को कुरेदता हुआ चला जाता है। बच्चन के पीड़ा परक गीतों की अभिव्यक्ति अनलंकृत है, किन्तु वह परपीड़ा को छूकर उसे दर्द के परिवेश से मुक्ति भी प्रदान करती है। बच्चन के पूर्ववर्ती काव्य को आलोचकों ने आह का काव्य कहा है। बच्चन ने ही सर्वप्रथम जीवन की पीड़ा की यथार्थ अभिव्यक्ति की है। बच्चन के गीतों में जीवन में व्याप्त सुख एवं पीड़ा की मन क्रीड़ा का राग ध्वनित है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं -

साथी, साथ न देगा दु:ख भी!
काल छीनने दुख आता है
जब दु:ख भी प्रिय हो जाता है,
नही चाहते जब हम दु:ख के बदले में लेना चिर सुख भी ! [१९४]

बच्चन की निशा निमंत्रण, एकांत संगीत और आकुल अंतर के गीतों में जीवन की पीड़ा का असहनीय स्वर मुखरित हुआ है। किन्तु इस स्वर की शक्ति को प्राय: पूरी तरह से समझा नहीं गया। बच्चन ने निशा निमंत्रण के संबंध में लिखते हुए कहा है -

यह ठीक है कि निशा निमंत्रण के गीतों में अवसाद हैं, अतीत की याद है, विवशता का एहसास है, अपनी भूलों पर पश्चाताप है, निराशा है, पर इतना ही देखना उसको आधा देखना है। जहॉ निशा निमंत्रण में सब कुछ है वहॉ ऐसा भी बहुत कुछ है जो औरों ने शायद अनजाने, शायद जान - बूझकर नहीं देखा और अगर उसकी ओर यहॉ मै संकेत कर दूँ, तो कोई अपराध नहीं करूँगा। मैंने धक्के खाए थे, मैं गिरा था, मुझे चोट आयी थी, मैं तन-मन से आहत था, फिर भी मैं स्वाभिमानी था, अपने को मानी कह सकता था। अतीत की स्मृतिपाश से अपने को मुक्त करना चाहता था, मुझमें जो जीने की कामना थी, उसके प्रति मैं सचेत था, मैं एक जगह बैठकर साँसें गिनना नहीं चाहता था, आगे बढ़ना चाहता था। किसी ने अपने से पूछा-तू क्यों बैठ गया है पथ पर ? और अन्त में अपनी यह इच्छा व्यक्त की थी- मरकर भी चलने को तत्पर। इससे अधिक साहसी और स्वाभिमानी आकांक्षा की अभिव्यक्ति मैंने नही जानी है। निशा निमंत्रण का गायक कहता है -

जय हो हे संसार तुम्हारी !
जहॉ झुके हम वहाँ तनो तुम
जहाँ मिटे हम वहाँ बनो तुम
तुम जीतो उस ठौर जहाँ पर हमने बाजी हारी। [१९५]

पर निशा निमंत्रण की सबसे बड़े उपलब्धि मैं इसे मानता हूँ कि अपने विषाद अवसाद, संकट, दुख में भी शायद उन्हीं के कारण मैं अवसन्न, विषण्ण, संकटापन्न दुखी संसार को अपनी सहानुभूति दे सकता था। इसके विपरीत बच्चन ने अपनी पीड़ा के माध्यम से पीड़ित संसार को अपनी सहानुभूति संवेदना प्रणन की। बच्चन को बाद में पीड़ा महसूस हुई थी, जिसकी अभिव्यक्ति बच्चन के सतरंगिनी काव्य में हुई। बच्चन के कथन से यह सिध्द हो जाता है कि पीड़ा का महान मूल्य बच्चन ने पूर्व ही चुका दिया था और इसके साथ ही बच्चन ने सम्पूर्ण मानवीय शक्ति को एकत्रित कर अपनी पीड़ा से बहुत संघर्ष भी किया। जीवन के सुख के खातिर, दुख से संघर्ष करने के लिए जिस साहस और संकल्प को जुटाने की आवश्यकता पड़ती है, उसकी तीव्र, ध्वनि बच्चन के निशा निमंत्रण, एकांत संगीत और आकुल अंतर के गीतों में सुनाई पड़ती है।

४.३.९ निष्कर्ष और शोधकर्त्री के विचार-

निष्कर्षत: बच्चन की कृतियॉं और विभिन्न वादों की परिणितियॉं देखते हुए प्रतीत होता है कि डॉ. बच्चन की रचनाओं में विभिन्न प्रभाव परिलक्षित हैं, परन्तु इतना सब कुछ होने पर भी वे किसी एक विशिष्ट प्रभाव से आक्रान्त नही हैं। यही कारण है कि कवि एक ओर रूमानियत से आक्रांत लगता है, तो वहीं वह उस हालावादी रूमानियत में भी आध्यात्मिक चेतना से विमुख नहीं रहा है। इसी प्रकार जहॉं वह नवीनतम प्रयोग करने को अग्रसर होता है और अति यथार्थवादिता के आंचल में सिर छिपाकर भी वह लोक पारम्परिक जीवन धारा और लोक गीतिका के तत्वों को भी स्पर्श कर पाया है।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि, बच्चन की कविताओं की प्रस्तुति कलेवर है वह बहुत ही स्पष्ट तथा सुंदर है। वे कभी भी किसी वाद के घेरे में रहना नही पसंद करते थे। यह खूबी उन्होंने शायद इसलिए पाई क्योंकि वे कभी किसी वाद से बंध कर नही रहें। उनकी कविताएँ उनके निजी आवेगों तथा तथा संवेगो से परिपूर्ण है। मैने यह जाना है कि बच्चन जी की कविताएँ सर्वथा वैयक्तिक रूप से स्वतंत्र हैं। छायावाद के बादलों में छिपे हिन्दी काव्य जगत को वे अपनी लेखनी (कलम) से अनावृत्त करने में सफल हुए दो काव्यधाराओं के आंदोलनों को एक दौर में बाँधने का कार्य बच्चन जी के द्वारा ही संपन्न हो सका है। हिन्दी काव्य जगत सदैव इस कार्य के लिए उनका ऋणी रहेगा। बच्चन जी ने दो वादों के बीच के रास्ते को अपनाकर अपने लिए अच्छी खासी विरोधियों की उपेक्षा पा ली थी, वे उन सभी के अपवाद जरूर रहे किन्तु उन कवियों के विद्रोही नही बने।

मै और स्पष्ट रूप से कहना चाहूँगी कि अभी तक की हिन्दी का जो स्वरूप है वह नई धारा की गीतात्मक शैली को अभिव्यक्त करता है। उसके मूल में न तो छायावदी कविता का रूप है न ही प्रयोगवादी कविता का। उसका मूल अगर मिल सकता है तो वह है बच्चन जी की कविता में। यही बच्चन जी की कविताओं की प्रस्तुति का कलेवर भी रहा है। उनकी लिखने की बेबाक शैली, सहजतम स्वरूप, आसानी से समझने योग्य शब्द जिसे पढ़कर पाठक भाव विभोर हो जाएँ। स्वच्छता का प्रमाण तो जल की तरह पारदर्शक है।

मुझे यह लिखते हुए अभिमान होता है कि पिछले सात दशकों से बच्चन जी की कविता का प्याला जितनी तेजी से छलक रहा है। कोई उनकी बराबरी नहीं कर पाया है। उनका काव्य प्रभापुंज की तरह हिन्दी के काव्य जगत के व्योम पर ध्रुव तारे सा दैदीप्यमान है। छायावाद के बाद के काल में जिन कवियों की विशेष चर्चा की जाती रही है उसमें अग्रणी बच्चन जी ही हैं। बच्चन जी ने अपनी काव्य कला पर अपने को समर्पित कर दिया था। उनके काव्य की सहज शब्दावली भाव भंगिमा, प्रेमानुभूति, विरहानुभूति के दर्शन उनके काव्य में सहज रूप से हो जाते हैं। उन्होंने अनेको से आक्षेप व पीड़ा सही है, पर वे उनसे हारकर भागे नहीं अपितु उसका सामना किया।

इतने प्रसिध्द कवि होने पर भी आज तक भाषा के आंगन से किसी ने उनकी उचित समीक्षा नहीं की। जिन लोगों ने उन्हें पढ़ा है, समझा है, वे उनके काव्य गुण को भली भाँति जानते है। बच्चन के बेशुमार पाठकों के होने की मुख्य वजह उनकी काव्य भाषा ही है। उनकी काव्य भाषा सदैव जीवन के अनुभवों के समानंतर चली है। उन्होंने जितनी सहजता और सुघड़ता से उन्हें कविता रूप में रूपायित किया है वह अतुल्य है। उनकी छटपटाहट में हम अपने दुख को महसूस करते है। उनकी कविताएँ ऊबाऊ न होकर उसमे नवीनता का आभास होता है।

मुझे ऐसा लगता है कि बच्चन जी के काव्य का उचित अनुशीलन करने पर ऐसे अनेक अनुसंधान किए जा सकते है जो खड़ी बोली की रोजमर्रा की भाषा के प्रयोग को दृष्टिगत करवा सकती है। बच्चन जी ने अपनी कविताओं में ऐसे अनेकानेक मुहावरो और कहावतों का प्रयोग किया है जिनका हम रोज मर्रा के दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं। संक्षेप में कहा जाय तो बच्चन जी ने खड़ी बोली के माध्यम से लोकव्यवहार को व्यापकता देने का अनमोल कार्य किया है। हालांकि उर्दू के शब्दों का भी बहुलता से किया जाने वाला प्रयोग टाला है। नवीन शब्दों का भी भी प्रयोग किया है।

श्री नवलकिशोर भागड़ा जी के अनुसार बच्चन जी के काव्य की शुरुआत ही नई सामाजिक और साहित्यिक हलचल की प्रेरणा से हुई है। उनकी कविताएँ नए युग की सृष्टा हैं। साधारण मध्यम वर्गीय जीवन शैली की कुंठा और संघर्ष , साधारण बोल चाल की भाषा, जनता में प्रचलित कहावतें मुहावरों से परिपूर्ण कविताएँ आसानी से सभी को अपनी सी लगने लगी। कविश्री बच्चन ने अपने भूत को सहज स्वस्थ ढंग से वर्तमान और भविष्य की दृष्टि से साध लिया है और आधुनिक यथार्थ का साक्षात्कार करते हुए कुछ सुंदर कविताएँ दीं ।

संदर्भिका (अध्याय ४) -

[१६३], [१९१] बच्चन; आरती और अंगारे
[१६४] बच्चन; उभरते प्रतिमानों के रुप; महानगर

[१६५] बच्चन; आकुल अंतर
[१६६], [१७६] बच्चन; मधुबाला
[१६७] बच्चन; खैयाम की मधुशाला सातवां संस्करण; पृ . १२४
[१६८] बच्चन; मधुबाला ग्यारहवॉ संस्करण;पृष्ठ ३९
[१६९], [१७०], [१७२], [१७३], [१७४] ,[१७७] , [१८०],[१८३], [१८७] बच्चन; मधुशाला
[१७१] बच्चन; मधुकलश; कवि का उपहार कविता १०
[१७५] बच्चन; एकांत संगीत;कविता बुलबुल
[१७८] बच्चन; प्रणय पत्रिका पहला संस्करण;
[१७९] सं.दीनानाथ शरण; लोकप्रिय बच्चन पहला संस्करण; लेख मर्सिया गायक १९६७
[१८१] बच्चन; सतरंगिनी चौथा संस्करण;
[१८२], [१८४], [१८५], [१८९] बच्चन; एकांत संगीत
[१८६] बच्चन; निशा निमंत्रण ; गीत ६०
[१८८], [१९०] बच्चन; बच्चन की प्रतिनिधि कविताएँ
[१९२] बच्चन; चार खेमे चौंसठ खूंटे
[१९३] एस एन डी टी, मुम्बई द्वारा प्रकाशित नोट्स २००९
[१९४] बच्चन; एकांत संगीत चौथा संस्करण;
[१९५] बच्चन; निशा निमंत्रण

अध्याय - पांच

प्रदेय, उपलब्धियाँ और महत्व

अध्याय - ५

प्रदेय, उपलब्धियॉं और महत्व

५.१ प्रदेय

आधुनिक हिन्दी काव्य में पिछले वर्षों से बच्चन जी और उनका काव्य एक प्रभापुंज की भान्ति विद्यमान है और आज भी लगता है कि बच्चन जी का कृतित्व अपनी अर्जित समस्त अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने का अभिलाषी हैं। काव्य के स्वरूप निर्धारण में बच्चन जी ने परंपरा के तत्वों के अतिरिक्त आकर्षक क्षमता, सहज प्रवाह और शब्दों की लय पर स्वतंत्र विचार प्रस्तुत कर अन्य साहित्यकारों के लिए दिशा-निर्देशन का एक महान साहित्यिक कार्य किया है। उनकी कला मानव-जीवन हित समर्पित है। इस दृष्टि से बच्चन जी ने मानव को ही अपने काव्य का लक्ष्य बनाया। यह उनकी और उनके काव्य की महान उपलब्धि है। अंग्रेजी कवि बायरन के अनुसार बच्चन जी कल्पना में नहीं भावना और अनुभूति में विश्वास रखते हैं। उनका काव्य भी कल्पना प्रधान न होकर, भावना प्रधान ही रहा है। रूपर्टब्रुक ने कवि की तीन श्रेणियॉं निर्धारित की हैं - वह जो कविता करता है, वह जो कविता पढ़ता है और वह जो कविता का जीवन व्यतीत करता है। बच्चन जी इन तीनों अर्थों में कवि हैं। वे कविता करते ही नहीं सस्वर पढ़ते भी हैं, सस्वर पढ़ने में विश्वास भी रखते हैं। मधुशाला के गीतों का प्रथम सस्वर पाठ दिसंबर १९३३ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के शिवाजी हॉल में हुआ था। उसकी सफलता उनके कवि होने का सबसे बड़ा सबूत है। कवि श्री बच्चन ने अपने बीते समय को सहज व स्वस्थ ढंग से वर्तमान और भविष्य की दृष्टि से साध लिया था और आधुनिक यथार्थ का साक्षात्कार करते हुए उन्होंने कुछ सुंदर कविताएँ दी हैं। इसीलिए डॉ. रामदरश मिश्र का यह विचार हमें समाचीन लगता है कि बच्चन जी अपनी पीढ़ी के एक मात्र कवि हैं, जिनकी दृष्टि नई पीढ़ियों की यात्रा की ओर बराबर लगी हुई हैं, जो उन्हें आशीर्वाद देने के स्थान पर उनका सहयात्री बनना अधिक पसन्द करते हैं। इस विषय में डॉ. भागीरथ मिश्र का यह कथन भी सारगर्भित है कि बच्चन नये सन्दर्भ में भी बड़ी सामर्थ्य से लिख रहे हैं। यही एक ऐसा कवि है, जो पुराने खेमे का होकर भी नये लोगों के समानान्तर चल रहा है और तारीफ यह है कि पुराना तेवर त्यों का त्यों है।

राष्ट्रीय काव्य के इतिहास में बच्चन जी का अपना महत्चपूर्ण स्थान है, क्योकि उसमें भारत का धरती-आकाश, इतिहास, परंपरा, संस्कृति, जीवन दु:ख-सुख, स्वप्न-संघर्ष, व्यंग, विश्वास आदि सब कुछ बड़े सहज और व्यापक रूप में प्रतिबिंबित है।

डॉ. विजयेंद्र स्नातक ने उचित ही लिखा है कि बच्चन जी ने संप्रेषणीयता के स्तर पर जो सफलता प्राप्त की है वह उनके अनेक समकालीन कवियों के लिए ईर्ष्या का विषय बनी रही है।

बच्चन जी की महत्ता सर्वविदित है। श्री गंगा प्रसाद पाण्डेय के शब्दों में "बच्चन जी ने इतना लिखा है कि इनका संपूर्ण काव्य कवि के साहस और समर्थ व्यक्तित्व को स्पष्ट करता है।" उनकी महत्ता को लेकर समालोचकों में मतभेद है।

श्री विश्वंभर मानव के मतानुसार बच्चन जी छायावादी कवियों की तुलना में नहीं रखे जा सकेंगे। कवि का मूल्यांकन करते समय उसके प्रदेय के साथ-साथ इसके अपने युग काल और परिस्थितियों को भी ध्यान में रखना अनिवार्य है। इस परिप्रेक्ष्य में बच्चन जी का मूल्यांकन संभव है।

'मधुशाला' की धूम का वह जमाना जिन्हें याद है, वह स्वीकार करेंगे कि बच्चन जी का कितना बड़ा ऋण हिन्दी कविता पर है। सामान्य जनता से सीधा संपर्क करने काव्य-भाषा का काया-कल्प करने, उसे आकाश से उतारकर भूमि पर खड़ा करने का श्रेय बच्चन जी को है। इसी दृष्टि से पंत जी के शब्दों में बच्चन जी अपने स्थान पर प्रथम श्रेणी के कवि हैं। निष्कर्ष यह है कि बच्चन जी ने कुछ हिन्दी साहित्य को दिया है, उसी के आधार पर उनका स्थान हिन्दी काव्य साहित्य में महत्वपूर्ण है। डॉ. नगेंद्र के मतानुसार बच्चन जी का स्थान हमारी पीढ़ी के कवियों में बहुत ऊँचा है।

उपरोक्त अनुभवों के आधार पर और उनके काव्य व जीवन दर्शन के अध्ययन के उपरान्त हिन्दी साहित्य में बच्चन जी का प्रदेय स्पष्ट हो जाता है। हमारे यहाँ कवि का मूल्यांकन करते समय, प्राय: कवि और अन्य दोनों को वादों की दृष्टि से देखा जाता है। छायावादी, प्रगतिवादी, प्रयोगवादी आदि-आदि कटघरे आलोचकों ने बना रखे हैं। अत: कवियों और कृतियों का मूल्यांकन करने के लिए उन्हें खड़ा कर पक्ष और विपक्ष में निर्णय देने के लिए दलीलें देनी पड़ती हैं। यह उचित है कि कुछ कवियों में इतर प्रवृत्ति का प्राधान्य हो सकता है। लेकिन किसी भी रचनाकर और उसकी समस्त रचनाओं को एक ही संकुचित सीमा में पूर्णतया नहीं बाँधा जा सकता है। जीवन की तरह साहित्य भी विविध रंगों, पक्षों और आयामों से बिखरा हुआ है।

बच्चन जी के काव्य का विकास छायावाद एवं प्रगतिवाद के काल में हुआ है, राजनैतिक दृष्टि से वह नई सक्रियता और सुधारवाद का युग था। बच्चन जी के काव्य में इन तीनों का समावेश है। उनके काव्य में राष्ट्रीय भावना तथा राष्ट्र प्रेम का ओजस्वी उद्‌घोष भी पाया जाता है।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी और पं. जवाहरलाल नेहरू के क्रिया-कलापों ने कवि को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया था। इससे उनके काव्य में संघर्षों से जूझते रहने की कामना, धैर्य, साहस तथा कर्मठता के स्वर उभरे हैं। इन दोनों के प्रति बच्चन जी की श्रद्धा उनकी राष्ट्रभक्ति का प्रमाण है। बच्चन जी ने अपने काव्य में उनकी छाप एवं भारतीय संस्कृति को भी महत्व दिया है। अपने काव्यक्षेत्र में उन्होंने पाश्चात्य एवं पौर्वात्य संस्कृतियों के समन्वय का प्रयास भी किया है। इन्हीं कारणों से बच्चन जी का काव्य चिरंजीवी है।

बच्चन जी जिस प्रकार आजीवन आर्थिक अभावों से जूझते रहे, उसी प्रकार के हिन्दी के विकास के लिए भी निरन्तर संघर्षरत रहे। उनके जीवन में प्रेमी मन और कर्तव्य प्रेरित आत्मा में जो संघर्ष चलता रहा, उसकी झाँकी उनके काव्य में देखी जा सकती है। इस तरह से स्पष्ट हो जाता है कि अर्न्तद्वन्द और बर्हिद्वन्द के बीच उनके कर्मठ जीवन ने प्रभावोत्पादक काव्य की निर्मिति की है।

बच्चन जी ने स्वतंत्रता का स्वागत कर नई जिम्मेदारियाँ एवं गौरव की ओर संकेत किया है और देशवासियों को स्वतंत्रता की रक्षा के लिए प्रेरणा दी है। 'बंगाल का काल' में उन्होंने भूखी मानवता को क्रान्ति का सन्देश दिया है।

ब्रह्म स्वरूप स्वामी जी (मौनी बाबा) का बच्चन जी के जीवन पर काफी प्रभाव पड़ा है। उनके तत्कालीन काव्य क्षितिज पर उनके जीवन की अनिवार्य आध्यात्मिकता का रंग साफ दिखाई देता है। इसी कारण कहीं-कहीं उनकी वाणी आध्यात्मिक स्तवन करने में रमी थी।

बच्चन जी की कविता सजीव, सप्राण, प्रभावशाली और युगतत्वों से परिपूर्ण है। उन्होंने अपने जीवन के नैराश्य और अवसाद, सुख-दु:ख, उतार-चढ़ावों में सीना तानकर 'अजेय' बने रहने का तथा 'युग' की छाती पर अपने चरण-चिह्न अंकित करने का साहस किया है।

अतीत याद है तुझे, कठिन है विषाद है तुझे
मगर भविष्य से रुका न आँख मुदैल खेलना,
अजेय तू अभी बना। [१९६]

बच्चन जी का समग्र काव्य सच्ची काव्यानुभूति और संवेदनात्मक तरलता से परिपूर्ण है पर बालकृष्ण राव ने बच्चन जी को मात्र 'आह' (निशा-निमंत्रण) का कवि कहा है 'वाह' का नहीं। श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी के मत से कवि के विघटित व्यक्तित्व को सर्वप्रथम सूचित करने वाली कृति है 'सतरंगिनी'। निष्कर्ष यह है कि इन समीक्षकों की दृष्टि में बच्चन जी के 'एकान्त' के बाद निर्धारित काव्य का कोई मूल्य नहीं है। कोई भी गतिशील कवि जीवन पर्यन्त एक सी काव्यानुभूति का वहन नहीं कर सकता। बच्चन जी ने अपनी काव्य प्रतिभा को सदैव एक समान, एक ही धारा में बहने का प्रयत्न नहीं किया। बच्चन जी के 'निशा-निमंत्रण', 'एकान्त-संगीत' और 'आकुल अन्तर' के गीतों में जीवन के दु:ख का स्वर है लेकिन इस स्वर की शक्ति को प्राय: समीक्षकों द्वारा ठीक से समझा नहीं गया।

डॉ. श्याम सुंदर घोष का यह कथन महत्वपूर्ण है - बच्चन के प्राथमिक काव्य का मूल्यांकन जिन कसौटियों पर हुआ है उनके बाद के काव्य का मूल्यांकन उनसे भिन्न कसौटियों पर किया जाना चाहिए तभी बच्चन के काव्य का महत्व स्पष्ट हो पाएगा। तब हम निश्चित रूप से मान सकेंगे कि बच्चन जी का परवर्ती काव्य भी कम महत्वपूर्ण नहीं है और न इस बात को लेकर विवाद होगा कि वे द्वितीय कोटि के कवि हैं या प्रथम कोटि के। डॉ. कृष्णचंद्र पंडया के मतानुसार हिन्दी के समीक्षक अपने निर्णयों को कवि पर थोपने के स्थान पर कवि निर्णयों को अपने निर्णयों के परिप्रेक्ष्य में रखकर ही विचार करें तो निश्चय ही वे बच्चन जी के साथ-साथ करेंगे।

बच्चन जी ने अपनी राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक कृतियों में समकालीन घटनाओं एवं तथ्यों को भावपरक रूप प्रदान किया है। उनका राष्ट्रीय काव्य एक ओर क्रांति का उद्‌घोष तथा गाँधी जी के कृतित्व को आत्मसात करता है तो दूसरी ओर सांस्कृतिक मूल्यों को अपना स्नेह प्रदान करता है। गाँधी विषयक गीत हिन्दी साहित्य भंडार की श्रीवृद्धि करते हैं। भेदभाव, छुआछूत का विरोध, स्वतंत्रता का स्वागत नये उत्तरदायित्व का बोध, स्वजनों की रक्षा, धर्म के लिए लड़ना, राष्ट्रभाषा का समर्थन आदि विषयों पर बच्चन जी के सजग स्वर उनकी काव्य यात्रा की पहचान कराते हैं। बच्चन जी ने अपने काव्यों में मानवतावादी, सांस्कृतिक भावना को भी महत्व दिया है जिसके कारण उनके काव्यों में उच्चतर मूल्य अपने आप आ गए हैं। बच्चन जी ने मधुकाव्य की रचनाओं में मस्ती व अल्हड़ता के गीत गाये हैं। उनके मधुकाव्य द्वारा ही हिन्दी में हालावादी नाम की नई धारा प्रवाहित हुई। यह बच्चन जी का एक महत्वपूर्ण प्रदेय है।

बच्चन जी अपने काव्य में प्रेम, यौवन, सौन्दर्य, वियोग-संयोग आदि के मर्मस्पर्शी और विरहानुभूति के चित्र अंकित किए हैं। 'निशानिमंत्रण' का एक-एक गीत 'एकान्त संगीत' का हर स्वर और 'आकुल अंतर' का प्रत्येक स्पंदन इस वेदना की सजीव मूर्ति है। अमावस्या के अंधकारपूर्ण वातावरण से अपनी अनुभूतियों को आलोकित कर बच्चन जी ने 'निशा-निमंत्रण' के सौ गीतों की जो श्रृंखला तैयार की है वह आधुनिक हिन्दी काव्य के लिए सर्वथा मौलिक देन है।

बच्चन जी रसवादी कवि के साथ-साथ लोकगीत व लोक जीवन की मार्मिक संवेदनाओं के कवि भी हैं। लोक धुनाश्रित गीतों में लोक संगीत को सुरक्षित रखकर उन्होंने लोक संगीत परंपरा को समृद्ध बनाया है।

कवि भावना और कर्म से बँधे हुए बच्चन जी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे वादों के बन्धनों से सदैव मुक्त हैं। उन्होंने अनुभूति एवं भावना को काव्य में प्रथम स्थान दिया है। इसलिए उनका काव्य उनकी विशिष्टता का निर्देशक है तथा अपने अर्न्तमन की यह मुक्ति बच्चन जी के अपने कवि जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

मधुशाला :

मधुशाला की रचना उस काल में हुई थी, जब देश परतंत्रता की बेड़ियों से जकड़ा था। लोगों के मनोरंजन का साधन कहानी और कविताएँ ही हुआ करती थीं। वो भी ऐसी कि जिसमें नवीनता का आभास हो सके। जनता अंग्रेजों के अत्याचार से त्रस्त थी, जाति धर्म के बंधनों में जकड़ी हुई थी। लोगों में कुछ नया पाने की आस थी। पत्र पत्रिकाओं में रचित कविताओं से वे अपना मन बहलाते थे। ऐसे काल में मधुशाला का आविर्भाव हिन्दी साहित्य के गगन में होना एक उपलब्धि से कम न था। इसे पाकर हिन्दी काव्य जगत के पाठक आत्म विभोर हो गए। जैसे ही बनारस के बी.एच.यू. में बच्चन जी ने मधुशाला का सस्वर पाठ किया, तब तो वहाँ के छात्र बिना पिए ही इसके नशे में झूमने लगे। मधुशाला की रुबाइयाँ नवयुवकों की जुबान पर रहने लगी। मधुशाला उस काल की कालजयी कृति बन गयी।

इसके प्रकाशन के पूर्व ही इसकी इतनी प्रशंसा हुई थी कि हर जाति धर्म के लोग इसे पढ़ने के इच्छुक हो गए। इसके भीतर की मादकता, संदेश, प्रेम, साकी बाला, प्याला को पा लेने के लिए जनता आतुर हो गई, पर कुछ ऐसे भी लोग थे, जो इस पर कटु बाण चलाने से नहीं चूके थे। पंडित बनारसी दास ने हंस पत्रिका में तो बच्चन जी को मदिरा का प्रचारक कहकर संबोधित भी किया था। बच्चन जी ने भी उसका जवाब बड़ी सफाई तथा विनम्रता से उनका नाम लिए बिना छपवा दिया था। उस जवाब को

पढ़कर फिर स्वयं वे पानी पानी हो गए थे और दूसरे पत्र में माफी भी मांग ली थी। गाँधीजी ने भी बच्चन जी को बुलाकर कहा कि मदिरा का प्रचार-प्रसार ठीक नहीं, पर जब उन्होंने उसका अर्थ जाना तो, उनके काव्य संग्रह को सराहा भी।

हर नई सृष्टि को कष्टों से गुजरना पड़ता है। उसी प्रकार मधुशाला का भी यही हाल था। जितने प्रशंसक थे उतने ही बुराई करने वाले भी थे। पर बच्चन जी ने तो बस चलना सीखा था। उनका मानना था कि अगर आप सही है तो आपको इरादों को कोई भी नहीं बदल सकता है।

मधुशाला में केवल उन्होंने मस्ती के गीतों की रचना नहीं की थी सदियों से प्रताड़ित, जाति धर्म के घेरे में रची-बसी जनता के सोये मान-सम्मान को हिलाकर जगाने का प्रयत्न किया था। एक बदलाव की लहर को उन्होंने हर हिन्दुस्तानी के मन में लहराने का सराहनीय कार्य अपनी मधुशाला के माध्यम से करने का प्रयत्न किया था। जिसमें उन्होंने अपेक्षा से अधिक सफलता भी प्राप्त की। अब मधुशाला का अनुवाद लगभग भारत की लगभग सभी भाषाओं में होने लगा था। सात समुंदर पार भी इसकी ख्याति पहुँच गई थी। इसे मेटाफोर कहकर संबोधित किया जाने लगा।

हालावाद के इतिहास की शुरुआत मधुशाला को माना जा सकता है। जितना मान-सम्मान बच्चन जी को मधुशाला ने दिलाया उतना उन्हें अपनी किसी और कृति पर नहीं मिला था। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि हिन्दी के काव्य जगत के इतिहास में मधुशाला का नाम उस श्रेणी में आता है, जो कि हिन्दी साहित्य के इतिहास के लिए गरिमामय है। मधुशाला को खड़ी बोली में रचित पहली पुस्तक का मान मिला है। जिसका अंग्रेजी में अनुवाद अंग्रेजी की ही 'मारजोरी ब्लुटन' ने किया तथा इसकी भूमिका भारत के प्रधान मंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू के द्वारा लिखी गई थी। मधुशाला का प्रेरणा स्रोत मुख्यत: खैयाम की मधुशाला ही थी, पर उसके निराशावाद को बच्चन जी ने नहीं अपनाया था। उन्होंने जीवनदायिनी के रूप में इसकी रचना की। कवि बच्चन जी इसमें केवल कवि के रूप में नहीं उभरे पर वे समाज सुधारक, और क्रांतिकारी व्यक्तित्व के रूप में भी नजर आए।

मधुशाला का स्वर केवल मस्ती का ही नहीं है, या किसी विशेष आयु वर्ग के लिए नहीं लिख गया है, इसमें विदग्धता, कल्पना, तथा भावना की भी अभिव्यंजना दिखाई पड़ती है। इसमें रचित अभिव्यंजना में व्यक्तिवादी, सामाजिक, राष्ट्रीय दार्शनिक, साहित्यिक स्वरों के साथ नई दिशा का स्वर भी मिला हुआ है। यह स्वर नई दिशा, धर्म, समाज और राजनीति की रूढ़ि सीमा को तोड़ने का स्वर कहा जा सकता है। वे सीधे-सीधे व्यवस्थाओं से नहीं लड़ सकते थे, पर अपनी कलम को उन्होंने

अपना सिपाही बनाकर मधुशाला के माध्यम से अपना कार्य शुरू किया। इस भूमि का दु:ख, दर्द, छटपटाहट बेचैनी, बाह्य, आंतरिक घुटन को वो महसूस कर सके तभी तो वे इन बंधनों से मुक्त होने के लिए छटपटाने लगे और मधुशाला को रच सके।

मधुशाला में उन्होंने धार्मिक, सामाजिक, आचार विचारों की रूढ़ि श्रृंखलाओं को तोड़कर कवि ने ऐसी मस्ती और अल्हड़ता का मधुर वाणीमय राग गुँजाया है कि स्वाभाविक संगीत ध्वनि, सरल पदावली और सरल अभिव्यंजना में मदमस्त होकर हिन्दी का पाठक और श्रोता अपने गम, दु:ख, क्लेश को कुछ समय के लिए भूलने को बाध्य हो जाता है, पर जो आनंद की अनुभूति उसे पढ़कर होती है वो मन प्राण में रच बस जाती है। मधुशाला में निहित मस्ती का स्वर खोखली मस्ती का नहीं अपितु जीवन चैतन्य का भान कराने वाला स्वर है। मधुशाला के द्वारा कवि बच्चन जी ने सुख को याद रखने तथा दु:ख को भुलाने का संदेश दिया है। कहीं-कहीं इनकी कविता में कबीर की तरह का लेखन भी दिखाई पड़ता है। जाति धर्म के आडंबर को वह जनता की गलती मानते हैं। उनके अनुसार अगर अन्याय सहोगे तो करने वाला और सताएगा, अगर उसके सामने चट्टान जैसी अटलता लेकर खड़े हो जाओगे तो वह खुद ब खुद लौट जाएगा।

मधुबाला :

जिन भावों को बच्चन जी चाहकर भी मधुशाला में नहीं लिख पाए थे, उन सबका समावेश उन्होंने मधुबाला में किया था। जिन अनुभूतियों में संचित जिन विविधमुखी भावों की कमी मधुशाला में हुई थी, उसे उन्होंने मधुबाला में पूर्ण कर लिया था और जो बच गया था उसे मधुकलश में व्यक्त कर दिया था। मधुकाव्य की कड़ी का यह दूसरा चरण था। इसके द्वारा बच्चन जी ने यह कहना चाहा है कि दुनिया में कवि और प्रेमी के प्रति ईर्ष्या रखने वाले, उसका विरोध करने वाले जितने लोग पैदा होते हैं, उतने किसी के नहीं होंगे। जो जुबान चला सकते थे उन्होंने जबान चलाई, जो लेखनी से प्रतिकार कर सकते थे, उन्होंने उसका प्रयोग किया। कोई गद्य में बुराई करता तो कोई पद्य में। आज तक रेकार्ड रहा है कि जितनी भी पैरोडियाँ मधुकाव्य की लिखी गई हैं, शायद ही किसी और की लिखी गई होंगी।

मधुशाला की मांग देखकर ही बच्चन जी का धैर्य बढ़ा था, नहीं तो वे कहीं न कहीं अपने को हतोत्साहित पा रहे थे। मधुशाला की शुरुआत ही उन्होंने प्रलाप से की है जिसमें सभी कविताओं का सार लिख दिया है। प्रस्तुत काव्य संग्रह में उन्होंने यौवन के आवेग की हौले से जीवन में पदार्पण करने वाली मधुबाला की प्रतिध्वनि को आँका है। जीवन की लालसा, प्यास, तृप्ति के मधुरतम समर्पण का भाव, कवि ने मधुरिम

रूप में अवलोकित किया है। बच्चन जी की दृष्टि में नारी विविध गुणों से अलंकृत, जीवन को नई प्रेरणा तथा नया उत्साह और नई दिशा देती है। यौवन की झंकारों में खोया कवि मधुबाला से यही कामना करता है।

झंकृत हो मेरे कानों में, चंचल तेरे कर के कंकण,
कटि की किंणी, पग के पायल,
कांचन पायल, छनछन पायल। [१९७]

मधुबाला में भोगेच्छा रूपी नायिका के रूप में मुखरित होने के साथ नारी के उस उज्वल रूप को भी प्रतिष्ठित करती है जो संसार के कटु यथार्थ से संतप्त है। समाज को जो सताया गया है, मधुबाला उसके पास में जाकर उसके दु:ख को कम करने का प्रयत्न करती है। उनके दग्ध हृदय में स्नेह का लेपन कर उनके मन को तृप्ति करती है। कुछ कविताओं का निर्माण उन्होंने केवल आनंदानुभूति के लिए ही किया था तो कुछ जीवन दर्शन को जागृत करने के लिए किया था। आनंद को प्राप्त करने के लिए समय की नहीं मन की तैयारी होनी चाहिए।

मधुवर्षिनी मधुबाला का यही रूप है। मधुबाला की कुछ कविताएँ ऐसी भी हैं जो साधारण अर्थ में भी अनोखी लगती है। बच्चन जी ने जो प्रतीक इसमें रखे हैं वो त्रिकूट की तरह एक दूसरे के पूरक हैं। साकी हाला और प्याला एक दूसरे के बिना अधूरे हैं उनकी इस प्रतीकात्मक शैली ने हिन्दी काव्य जगत में धूम मचा दी थी। उनका कहना था "मानव शरीर नश्वर है एक दिन नष्ट हो जाएगा, इस बात को हम सभी जानते हैं पर मन नहीं मानता, इसकी चंचलता जीने की ललक को परत दर परत बढ़ाती है। इस नश्वर शरीर का मोह बढ़ाता है। अनगिनत जीवन के क्रियाकलापों में मानव शरीर एक लहर की भांति जन्म मृत्यु रूपी सागर के किनारे आकर मिट्टी में विलीन हो जाता है। इसे कैसे जिया जाए उन्होंने प्याला कविता में लिखा है....

'मिट्टी का तन, मस्ती का मन
क्षण भर जीवन मेरा परिचय....' [१९८]

मधुबाला की 'मालिक मधुशाला' कविता में बच्चन जी ने व्यक्ति और समाज के सभी बंधनों का उल्लंघन करके जीवन की मस्ती में डूबे रहने का आवाह्न किया है। जाति धर्म के भेदभाव को भुलाकर ऊँच-नीच की भावना से ऊपर उठकर भगवान की दी हुई जिंदगी का आनंद उठाने का संदेश दिया है। यह क्षणभंगुर जीवन जीने की मस्ती का रूप पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। कवि बच्चन युवा पीढ़ी के

प्रतिनिधि बन कर थोथले आडंबरों का त्याग करने को कहते हैं। पंडित, मुल्ला, पादरियों से बच के रहने को कहते हैं, क्योंकि इनके द्वारा लिखी गई पोथी-पत्रियाँ सब झूठे हैं। वे इस युवा पीढ़ी को धार्मिक आडंबरों से दूर रहने को कहते हैं। उन्होंने एक संपूर्ण सुखी संसार की कामना की है। जहाँ खोखलापन हो, जीवन के यथार्थ की सरिता बहती हो, प्रेम भाव हो। मधुबाला प्रेम से दुखियों के मन की क्यारी का सींचन करती है। यह भाव उनकी 'मधुपाई' कविता में व्यक्त हुआ है।

कवि बच्चन जी उन युवाओं के अग्रज का काम कर रहे हैं,जो लुक-छुप कर बुराई अपनाने की जरूरत नहीं समझते। वे डंके की चोट पर अपने विरोध और इच्छा को प्रकट करने वाले हैं। संसार में सभी अपने सुख का आधार खो जाते हैं। उन्हें वह आधार मिल भी जाता है पर वे अपने को व्यक्त कर पाने में असमर्थ होते हैं। बच्चन जी नश्वर जग और जीवन में ही सुख, स्वर्ग खोजते हैं, क्योकि वे अपनी अस्मिता, अस्तित्व बनाए रखना चाहते हैं।

'नश्वरता और अमरता का
अब द्वन्द्व मिटाने आए हम।' [१९९]

इस मधुबाला के माध्यम से कवि बच्चन जी ने इस नाशवान जीवन की व्यंजना की है, पर अपना मधुशाला वाला आंतरिक विश्वास बनाए रखा है। वे जीवन रूपी मधुशाला से पलायन न करते हुए सभी कटु अनुभवों का सामना करने का प्रयत्न करते हैं। अपने जीवन को अचिरकालिक जीकर उसे सार्थक बनाने का प्रयत्न क्षण-प्रतिक्षण किया है। बच्चन जी ने अपनी मधुबाला काव्य रचना में धार्मिक, सामाजिक, नैतिक, दार्शनिक तथा आध्यात्मिकता के कमजोर पक्षों पर व्यंग किया है। मधुपायी को यही मधुमार्ग प्रिय है। जहाँ धोखा, छल, छद्म और दिखावा नहीं है। क्षणिक अस्तित्व वाली मादकता को वह नहीं चाहता। वो जीवन भर साथ निभाने वाली मादकता में डूब जाना चाहता है। कवि उसे पीकर पछताने का डर मन से निकाल चुका है। जीवन की मधुशाला में मिलने वाले हलाहल को पीने के लिए भी तैयार है।

आशा है कि मदिरा पिएंगे
किन्तु हलाहल ही होगा । [२००]

इस काव्य संग्रह में उन्होंने युवकों के मन को टटोला तो उत्साह और आनंद का ज्वर बढ़ा हुआ पाया। अटल ध्येय वाले ये सभी युवक संघर्षों को देख मैदान छोड़कर भागने में से नहीं हैं। वे सीधे मन की ज्वाला से बड़े संघर्ष से झूझने का दम खम रखते हैं। इस कविता के भाव बड़े ओजस्वी रूप से श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत किए गए हैं। जब मैंने इस काव्य संग्रह को पढ़ा तो पाया कि उनकी कविताओं पर छायावाद का प्रभाव तो था पर उनकी तरह उलझाव नहीं था। मधुबाला भोगेच्छा रूपी नारी के रूप में यहाँ प्रकटित हुई है। वह मधुविक्रेता की प्रिय है। मधु का पात्र अर्थात् जीवन उस पर आसक्त है। प्याले याने सांसारिक लोग उस पर मर मिटे हैं। वे सभी उस पर आसक्त हैं। निर्मम संसार जिसे घायल किए जा रहा है उसे वह दवा दे रही है। उसके दु:ख को कम करने का प्रयास करती है। घावों की दग्धता को शीतलता प्रदान करती है। मधुबाला के कोमल करों के स्पर्श से ही मधुपाई का दु:ख कम हो जाता है। मधुबाला में मानव जीवन को सुखी बनाने की अद्‌भुत क्षमता है। जब वह संसार में नहीं थी, तब संसार दु:खों से ग्रसित था। सर्वत्र जड़ता व्याप्त थी। मधुबाला ने अपने मोहक व्यवहार से सभी का दिल जीत लिया है। सभी मधुकाव्य के संसार में विचरित होने वाले लोगों ने मुक्त कंठ से उसकी जय जयकार की है।

मधुबाला ने ऐसी प्यास और आसक्ति जगाई है, कि स्वप्न का संसार सत्य से कहीं अधिक सम्मोहक बन गया है। यह करिश्मा मधुबाला के अलावा कोई कर ही नहीं सकता था। मधुबाला को बच्चन जी, अपना जीवन अस्तित्व नहीं मानते, वे तो केवल उसे क्षणिक स्वप्न मानते हैं।

यहाँ पर कवि बच्चन ने सृजन के साथ-साथ उसका व्यंगकार भी जागरूक हो गया है। बच्चन जी की मधुबाला की प्रत्येक कविता का अंतिम पद संदेशात्मक है। पथ का गीत मधुमार्ग पर चलने वाले पथिकों का गीत है। इसमें कवि बच्चन जी, सबकी क्षुधा को शांत करने का प्रयास करते हुए चल पड़े हैं। कवि को अपनी मधुबाला पर इतना विश्वास है कि उनकी मधुबाला का सौंदर्य और वाणी इतनी मधुर है कि प्यासा पथिक उसके हाथ से हलाहल पीने को भी तैयार हो जाएगा।

मधुबाला की 'सुराही' कविता को जब मैंने पढ़ा, तो पाया कि कविता में जहाँ ऐन्द्रिक सुख की प्रेरणा है वहाँ दूसरी तरफ विद्रोह की पताका लहराकर, मधुबाला नाराज है, पर वह अपने काम से मुख नहीं मोड़ती वह जानती है, कि राह के थके बटोही वृक्ष की क्षुधा (प्यास) को शांत करना ही उसका कार्य है वह उसे पूरा करना है चाहे जो हो जाए। इस कविता से मुझे यह आभास हुआ कि सचमुच 'कर्म' प्रधान होता है, 'मर्म' नहीं। समर्पण ही सच्चा सुख है। यह तन मिट्टी का है फिर मिट्टी में मिल जाएगा। इसे

सफल करना मतलब किसी के काम आना है। जग इस क्षणभंगुर को नहीं समझ पाएगा। संसार तो मधुबाला की वेदना को मधुपान का प्रचार ही समझता है।

मधुबाला की 'इस पार उस पार' वाली कविता को बड़ी प्रसिद्धी मिली थी। कविता में बच्चन जी की आत्मपीड़ा छलककर पाठकों के सामने आ गई है। उनकी आत्मपीड़ा हर पढ़ने वाले की आत्मपीड़ा बन कर रह गई। मैंने पाया कि पूरी कविता में बच्चन जी की इस पार सिसकती आकुल व्याकुल जिंदगी मौत के समान खड़ी है तो उस पार के लिए अत्यधिक संताप है जो उनके प्रियजन को उनसे दूर ले गया है। यही कविता बच्चन जी के क्षयग्रस्त जीवन का घोर विषाद, अपूर्ण सुख भोग के लिए मार्मिक छटपटाहट, पूर्ण भोग की तीव्रतम लालसा, काल की कठोरता सभी पर दृष्टि चली जाती है। इस कविता में शब्दों की सरलता मन मोह लेती है और कवि के मन के दु:ख का अंदाजा लगा लेती है।

इसकी अंतिम कविता आत्म परिचय में कवि ने अपने काव्य सृजनात्मकता का परिचय करवाया है, अपने जीवन के अभावों को उन्होंने अपनी इस कविता से उजागर किया है, झूठे अधूरे संसार से मुक्ति पाने के लिए बच्चन जी का कविमन सपनों के संसार को अपने साथ लिए घूम रहा है, पर कवि मन अंतत: कह उठा है कि सत्य सदैव कड़ुवा और कठोर भी होता है जब कठोर सत्य की शिला से टकराकर चकना चूर हो जाता है तो उसके कोमल सपने शीशे की तरह टूट कर बिखर जाते हैं, तभी वह उन सपनों की लाश देखकर फूट-फूट कर रो पड़ता है।

मधुकलश :

मधुकाव्य की पंक्ति में मधुकलश तृतीय क्रमांक पर आसीन है। ऐसा कहा जा सकता है कि इसी कव्य संग्रह के बाद मधुकाव्य की पकड़ ढीली पड़ गई थी। इसमें कुल मिलाकर १२ गीत हैं। इसमें की कविताएँ अस्तिववाद की पहचान को बढ़ाती हैं। इसमें जीवन चैतन्य के साथ-साथ औदार्य के मोहक चित्र भी परिलक्षित हुए हैं। इसमें कवि बच्चन के अंतर्मन की टीस भी उभरकर आई है। 'री हरियाली' तथा सुषमा, सामान्य निसर्गम्य कविताएँ हैं। 'मेघ-दूत के प्रति' मेघ दूत के होते हुए भी कवि की विशेष मौलिकता की रचना का आभास होता है। अपनी प्रियतमा को उन्होंने अपनी आँखों के आगे मिटते हुए देखा है, वह कारुणिक प्रसंग है जब मानव चाहकर भी परिस्थिति के आगे लाचार हो जाता है, उनकी कई रचनाएँ इस काव्य में निराशावाद की लहरों में फँस कर बाहर आने के लिए प्रयत्नशील होती प्रतीत होती है। इसी कविता संग्रह में कवि बच्चन जी ने अपने ऊपर लगाए आरोपों का खंडन भी किया है और जिन

लोगों ने आरोप लगाए हैं उन्हें दो टूक उत्तर भी दिया है। इसके दर्शन हमें बच्चन जी की कई कविताओं में होते हैं जैसे १) कवि की निराशा, २) कवि की वासना, ३) कवि का गीत, ४) कवि का उपहास और पथभ्रष्टता, वासना जैसे लगाए गए आरोपों का खंडन किया है। मधुकलश के सभी गीतों को पढ़ने से जान पड़ता है कि इसमें गेयता, संगीतात्मकता, रस, भावानुभूति सभी गुण विद्यमान है। इन्हीं गुणों के कारण बच्चन जी को आधुनिक हिंदी गीति काव्य में सर्वोच्च शिखर पर बैठने का मान सम्मान प्राप्त हुआ है। यह एक ऐसा काव्य संग्रह है, जिसमें लंबी कविताएँ लिखी हैं। जो कि बेजोड़ हैं। अगर सही रूप में देखा जाए तो मधुकलश तात्कालिक समाज के दर्शन करवाता है। जिसमें एक आम आदमी की साहसिकता व महत्वाकांक्षा के दर्शन किए जा सकते हैं।

'माँझी ' तथा 'लहरों का निमंत्रण ' की कविताएँ हमें मानव की संघर्ष तत्परता को दिखलाती हैं। यह कविता संग्रह का अंतिम संग्रह कहा जा सकता है जिसकी शुरुआत 'मधुशब्द' से हुई थी।

निशा निमंत्रण :

निशा निमंत्रण का नाम लेते ही आँखों के आगे रात की कालिमा दु:ख का आँचल लहराती हुई आँखों के आगे तैर जाती है। अपने प्राणों से प्रिय पत्नी की मृत्यु के बाद बच्चन जी ने दो वर्षों तक अपने लेखन कार्य को स्थगित कर दिया था। निराशा की काली रात के आगोश में वे फँस गए थे। इस काल में उनका जीवन अकेलेपन, निराशा, रिक्तता तथा घोर अवसाद का इतिहास बन गया था। इन गीतों में कवि बच्चन के मन का यौवन मर गया था, बची थी केवल अंधेरी अकेली रात, जो बार-बार मस्ती, प्रेयसी का चेहरा याद करवाती थी। उस पीड़ा ने उन्हें कष्टवत कर दिया था। उनके इस दु:ख भरे काव्य को पढ़कर कोई पाषाण हृदय भी पिघल जाता। उसमें की कविता की हर पंक्ति दु:ख से तराबोर थी, दु:ख हर पंक्ति से टपकता हुआ महसूस किया जा सकता था। खड़ी बोली के गीत संग्रहों में निशा निमंत्रण का अपना एक अलग ही अस्तित्व और महत्व है। निशा निमंत्रण का अलग महत्व इस प्रकार जाना जा सकता है कि दु:ख की इतनी तीव्र अनुभूति हुई, कि 100 गीतों का काव्य संग्रह, दु:ख पूर्ण लिखा गया। निशा निमंत्रण के पीछे भाग्य की कठोर चाल है, इसकी मर्मभेदी चीत्कार हमें गीतों में ध्वनित होती प्रतीत होती है। पत्नी के प्रति विरह विषाद की वास्तविकता को गीतों के मुखरित करने में कवि ने अद्वितीय सफलता प्राप्त की है। निशा निमंत्रण के गीत रूमानी प्रणय गीतों की कोटि से बिलकुल अलग हैं।

जहाँ तक मैंने इसे जाना है यह केवल मानव की विरह विषाद के गीतों का संग्रह न होकर एक असहाय एकाकी, विधुर मानव की मानसिक प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उतरे शब्द चित्रों का एक अद्वितीय सजीव अलबम कहा जा सकता है। निशा निमंत्रण के कई गीतों में मानवतावादी स्वर भी देखने को मिलता है। मानव जब दु:ख में लिखता है तो शब्द मानो अपने आप अंतर प्रस्फुटित होने लगते हैं। उसमें बनावटीपन न होकर केवल वास्तविकता के ही दर्शन हमें होते हैं। भाषा तथा शिल्प के विधान से भी यह अतिशय बेजोड़ लगती है। इसके गीत शोक काव्य के मार्मिक गीतों की श्रेणी में प्रथम स्थान पाते हैं।

बच्चन जी की निशा निमंत्रण ऐसी भावमय सृष्टि की रचना है, जिस में कवि को अपने जीवन में न चाहते हुए भी अपनी प्राणों से प्रिय पत्नी के शव को आग पर रखकर फूँकना पड़ता है। उनके साथ दुर्भाग्य और नियति ने इतना भयंकर छल किया है, कि पत्नी के चिता की ज्वाला निशा निमंत्रण की सर्जक बन गई। उसकी वेदना की ज्वाला भड़क कर कविता के रूप में कतरे-कतरे बन कर कवि मन को धधकाने लगी।

इस प्रकार बच्चन जी भाव, भाषा और शैली के नूतन परिप्रेक्ष्य में सदा स्मरणीय रहेंगे, उनकी संवेदना का संसार इतना विस्तृत है कि जितने भीतर जाओ,वह उतना गहराता जाता है।

इस कविता संग्रह में प्रकृति के प्रतिक्षण अनुभूत होने वाले सुंदर वातावरण में कवि की अनुभूति, वेदना, संवेदना का जितना हृदय स्पर्शी चित्रण निशा निमंत्रण के गीतों में मिलता है उतना खड़ी बोली के किसी भी गीत संग्रह में देखने को नहीं मिलता है।

सारांशत: मैं यह कह सकती हूँ कि निशा निमंत्रण के गीतों को यदि एक व्यक्ति को केंद्र मानकर उसके जीवन साथी के असमय अशुभ अवसान का रागमय चित्रण कहा जाए तो अतिश्योक्ति न होगी। यह सहज शब्दों में दृष्टव्य हो इस प्रकार से लिखा गया है। इसकी कविताओं में प्रतीकात्मकता के दर्शन बहुत मात्रा में नहीं होते हैं। फिर भी यह दु:ख की काली रात की समाप्ति की ओर का पहला कदम कहा जा सकता है।

एकांत संगीत :

एकांत संगीत में एक भटके हुए कवि का हृदय में चुभने वाला स्वर उभरा है। वहाँ अवसाद का स्वर तीव्रता से व्यक्त हुआ है। मानसिक तनाव तथा भाव तीव्रता का चित्रण एकांत संगीत में अद्वितीयता से प्रकटित हुआ। कवि बच्चन जी का सब कुछ लूट लिया है और अपनी सत्ता से बहिष्कृत कर दिया है। मानो जग जीवन, समाज, नियति, प्रकृति और प्रणय इन सभी स्थितियों में रहकर बच्चन, अपने जीवन में कितना अकेलापन कितना पीड़न झेलकर जीते हैं? किन्तु यह अकेलापन, यह आसक्त जीवन, उनका रुदन, क्रंदन, क्या एकाकी कंठ की पुकार है? शायद नहीं। जीवन में हर व्यक्ति के मन में ऐसा वक्त जरूर आता है,कि जब वह अपने को असहाय महसूस करता है। आकुल-व्याकुल होकर यहाँ-वहा ँघूमता है, पर कवि बनकर रचना करने में असक्षम होता है। इस संग्रह में कवि बच्चन का मानसिक भाव थोथे आवेशों से नहीं घिरा है और न अदम्य संकल्प तथा साहस के इरादों से पहले की कविताओं में दिखता है। इस संग्रह में हम मुख्यत: एक मध्यम वर्गीय व्यक्ति के दु:ख की प्रणय गाथा को जान पाए हैं।

बच्चन जी ने इन कविताओं के माध्यम से सबका दु:ख समान माना है। उन्होंने लिखा भी है.....

एक पत्र छाव मांग मत, मांग मत,
अग्नि पथ, अग्नि पथ। [२०१]

आकुल अंतर:

इस कविता संग्रह में कवि बच्चनजी ने अंधकार को चीरकर बाहर निकलने की छटपटाहट को व्यक्त किया है। व्यक्तिगत विषाद से उबरकर और उभरकर गीत गाने का प्रत्यक्ष प्रयास किया है। आकुल अंतर के गीत निराशा के नहीं आशा और आस्था तथा अस्तित्व बोध के गीत हैं। इसकी विशेषता यह भी है कि इसका रचनाकाल सुख तथा दु:ख के क्षितिज पर हुआ है, जिसके एक ओर एकांत संगीत की विकलता थी तो दूसरी तरफ तरु सतरंगिनी के सात रंगों की छटा, प्रेम के आकाश में इंद्रधनुष को बिखराती हुई आगे बढ़ रही है।

बच्चन जी का आकुल अंतर, अंतत: शांत और शीतल है। बच्चन जी ने इस काव्य में अपने को किस प्रकार अकेले पाया, किस प्रकार चाह कर भी अपना दु:ख किसी के आगे क्यों नही आने दिया। इसका कारण था कि वे अपने दु:ख को किसी के आगे प्रकटित कर अपने प्रियजनों को दु:खी नहीं करना चाहते थे। उनका मानना था कि जब सुख के क्षणों को अकेले काटा है तो दु:ख के क्षण भी अकेले काटने का मैं ही भागी हूँ। आकुल अंतर में कवि बच्चन जी ने बतलाया है कि मानव की लड़ाई क्षण प्रतिक्षण चलती रहती है। अपने विचारों से वह धोखा खाता है, हारता है, पर झुकता नहीं है। वह ऐसे गीत गाता है जिससे मानव समाज का नई चेतना, नई दिशा और नवयुग में प्रवेश की प्रेरणा मिले।मुझे ऐसा लगता है कि आकुल अंतर के गीतों में भावुकता की मात्रा कम है। जीवनावलोकन, रिश्ते-नाते, समाज बंधन के प्रति विवेक और तर्क अधिक मात्रा में देखने को मिलते हैं।

आकुल अंतर के अंर्तगत की रचनाओं को जीवन से विलग नहीं किया जा सकता है क्योंकि जो भी बच्चन जी ने पाया उस को कविता के साँचे में ढालकर अपने पाठकों तथा श्रोताओं तक पहुँचाया। यही कारण है कि उनके गीतों में मधुरता की भाषा अनायास ही प्रकटित हो जाती है ।

५.२ उपलब्धियां

बच्चन जी ने हिन्दी साहित्य जगत को जो उपलब्धियाँ दी हैं वे अवर्णनीय हैं। उनका लिखा गया साहित्य हिन्दी भाषा के साहित्य जगत की अनमोल धरोहर कहा जा सकता है। उनके काव्य को वर्गीकृत करने पर ज्ञात होता है कि उसका स्वरूप क्या था? बच्चन जी के काव्य का वर्गीकरण शैली और कथ्य के आधार पर किया जा सकता है। शैली की दृष्टि से उनके काव्य को हम गीतकाव्य, प्रबंधकाव्य, लोकगीत, गद्य और अनुवादों में विभक्त कर सकते हैं। १) राष्ट्रीय काव्य २) सांस्कृतिक काव्य ३) मानवतावादी काव्य ४) धर्म संबंधी काव्य ५) आध्यात्मिक काव्य ६) रहस्य काव्य ७) दार्शनिक विचारधारा का काव्य ८) नीति और युगीन विचार धारा का काव्य ९) प्रेम काव्य १०) वेदनाभूति का काव्य ११) नियतीवादी काव्य १२) व्यंगात्मक काव्य १३) प्रकृति संबंधी काव्य १४) जीवन संघर्ष का काव्य १५) आशावादी काव्य १६) हालावादी काव्य १७) स्वच्छंदतावादी काव्य।

शैलीगत वर्गीकरण करके देखा जाए तो गीति प्रबंध में कथा के कमजोर तंतुओं में गीतों के पुष्प पिरोए जाते हैं। प्रत्येक गीत अपने आप में स्वतंत्र होता है फिर भी गीति प्रबंध शैली में सभी रचनाएँ एक सूत्र में बंधी लगती है। बच्चन के गीति काव्य का खड़ी बोली हिन्दी भाषा के काव्य में अपना विशिष्ट स्थान है। उन्होंने अनेकानेक रचनाएँ लिखीं, जिनमें नई से नई और पुरानी से पुरानी रचना का सामंजस्य देखने को मिलता है। उन्होंने अपने अंर्तजगत के लिए भी कुछ रचनाएँ रची थीं, जिसे स्वांत सुखाय के लिए लिखा था। इनमें निशा निमंत्रण, एकांत संगीत और आकुल अंतर के अपने अपने विचार, विशेष रूप से दिल को छू जाने वाले है।

बच्चन जी की पहली रचना एक कहानी के रूप में थी, जिसका नाम था 'हृदय की आँखें', जिस पर उन्हें यूनिवर्सिटी की ओर से द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ था। इसके बाद उनकी यह कहानी प्रख्यात लेखक प्रेमचंदजी की हंस पत्रिका में छापी गई। कहानी इतनी बढ़िया थी कि, वही कहानी बिना किसी शीर्षक के बच्चन जी ने अपनी 'निशा निमंत्रण' की शुरुआत में छपवा दी थी। इसके बाद बच्चन जी की कई कहानियाँ हिन्दी की प्रख्यात पत्रिका माधुरी में भी प्रकाशित होती रहीं। बाद में यही रचनाएँ प्रारंभिक रचनाओं के भाग ३ में सन १९४३ में प्रकाशित हुई। बच्चन जी का गद्य तथा पद्य समझना बहुत ही आसान है। इनके गद्य को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि, उसका लेखक, विलक्षण व्यक्तित्व वाला होगा। वह जानबूझकर कठिन गद्य लिख रहा हो अथवा दीर्घ समास बहुत प्रदर्शन परक गद्य या जानबूझकर चूर्णक समास युक्त गद्य

के उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हो। बच्चन का गद्य पहले के जमाने में लिखे गए गद्य स्वरूप से पूर्णतया भिन्न था।

सन १९४१ से सन १९५२ तक उन्होंने इलाहाबाद विशविद्यालय में अंग्रेजी के प्राख्याता के रूप में काम किया। इसके पश्चात वे कैंब्रिज विश्वविद्यालय में डब्ल्यू.बी.ईट्स की कविताओं पर शोध करने हेतु चले गए। वहाँ दो साल सेंट कैथरीन कॉलेज में प्रसिद्ध अंग्रेजी साहित्य वेत्ता श्री डॉन थामस के साथ अपना अध्ययन पूर्ण कर भारत लौट आए। एक भारतीय प्रध्यापक के द्वारा एक अंग्रेजी के जाने माने साहित्यकार पर की गई पीएच.डी. सारे भारतवर्ष के लिए गर्व की बात थी।

उसके पश्चात् वे वहाँ से आने पर ऑल इंडिया रेडियो में निर्माता के रूप में कार्य करने लगे। फिर उसके बाद वे १९५५ में दिल्ली आ गए। वहाँ विदेश मंत्रालय में सरकार की ओर से नियुक्त किए गए। तत्पश्चात् उन्होंने हिन्दी शब्दों के लिए कार्यालयीन शब्दकोश तैयार किया।

बच्चन जी का जीवन उसूलों की नाजुक डोर से बँधा हुआ था। वे अपने को पुरस्कार विजेता बनाने के लिए सिफारिशें करवाना, मेल जोल बढ़ाना गलत मानते थे। उनके अनुसार जिस व्यक्ति में गुण होंगे, वह अपने आप ही पुरस्कार का हकदार बन जाएगा। वह अपने कार्य इसलिए नहीं करते थे, ताकि पुरस्कार प्राप्त कर सकें वे अपने पाठकों को प्रसन्न करना चाहते थे। जीवन की परत दर परत के अनुभव, अपने पाठकों के समक्ष रखना चाहते थे। उनका कहना था सच्चा गीतकार वही होता है जिसके गीत जनता के द्वारा गाए तथा गुनगुनाए जाते हैं। बच्चन जी के इन्हीं काव्यगत गुणों के कारण वे अनेकानेक पुरस्कारों से विभूषित किए गए थे। इ.सन् १९३३ में द्विवेदी मेले के दरबार में स्वर्ण पदक प्राप्त किया, उसके बाद छोटी मोटी प्रतियोगिताओं में भी वे विजयी बनते रहे, पर उन्हें कभी इसका गर्व नहीं हुआ। वे कहते थे जो मैं गा दूँ वे गीत, जो मैं लिख दूँ वे कविता। १९६६ में उन्हें चौंसठ रूसी कविताओं के लिए सोवियत लैण्ड नेहरू पुरस्कार दिया गया। सन् १९६६ में उन्हें राष्ट्रपति के द्वारा राज्य सभा का सदस्य मनोनीत किया गया था। इसके पश्चात् हिन्दी साहित्य सम्मेलन के द्वारा 'साहित्य वाचस्पति' की उपाधि से भी नवाज़ा गया। सन् १९६१ में उनकी सबसे सुंदर कृति 'दो चट्टानें' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा दिल्ली प्रशासन साहित्य कला परिषद के द्वारा सम्मानित किए गए। सन् १९७० में अफ्रो एशियन राइटर्स कांफ्रेस द्वारा १०,००० रूपयों का लाटस पुरस्कार दिया गया।

२६ जनवरी १९७३ को भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण जैसे पुरस्कार से अलंकृत किया गया। उपरोक्त सभी सम्मान तथा पुरस्कार बच्चन जी के सन् १९६० से १९८० के बीच दिए गए। यह सभी पुरस्कार उनकी लोकप्रियता तथा जन स्वीकृति का प्रमाण हैं।

बच्चन जी कभी भी पुरस्कार के लालचवश दिल्ली या लखनऊ नहीं गए। यही बात उनके लिए सबसे अधिक गौरवपूर्ण कही जा सकती है। संक्षेप में वे कभी किसी सम्मान के पीछे नहीं भागे, बल्कि सम्मान और पुरस्कार उनकी साधना को शिरोधार्य कर बच्चन जी के पीछे पीछे चले जाते थे। उनका एक ही कहना था कि-

'गर तुम्हारे मन का हो तो बहुत अच्छा,
गर तुम्हारे मन का न हो तो और भी अच्छा'

विदेश मंत्रालय में हिन्दी के विशेष अधिकारी

सन् १९५५ में बच्चन जी ने भारत विदेश मंत्रालय में हिन्दी के विशेषाधिकारी का पद सुशोभित किया था। उस समय कार्यालयों में हिन्दी की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। उसकी हालत देखकर वे कह उठे कि, बेहतर होगा कि यदि हिन्दी विभाग को यहाँ से निकाल दिया जाय। अपनी इस बात को उन्होंने देश के प्रधानमंत्री को कविताओं के स्वरूप में भेजा। बस दिल्ली पर ही न बरस ओ धन कजरारे, ओ मतवारे, दिल्ली से पूरब पश्चिम, उत्तर दक्षिण भी इस देश के खेत खड़े। नेहरू जी को संबोधित करके लिखा गया। इस प्रकार का गद्य काव्य उन्होंने नेहरू जी के साथ उनके मंत्रिमंडल तक पहुँचाया था। उस समय हिन्दी विभाग की हालत इतनी खस्ता थी कि, उसका मान सम्मान सबकुछ दाँव पर लगा था। देश की राष्ट्रभाषा का कार्यालय अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहा था। देश की राजरानी हिन्दी देश की नौकरानी की तरह उस स्थान पर अपनी पहचान के लिए सर पटक रही थी। बच्चन जी ने उसे यथा स्थान दिलाने का बीड़ा उठाया। सचमुच बच्चन जी की दृष्टि हिन्दी के प्रति व्यापक रही। बच्चन जी की इन पंक्तियों ने दिल्ली में धूम मचा दी थी। हिन्दी के विशेषाधिकारी जैसे उच्च पद पर होकर भी उन्होंने सामाजिक और राष्ट्रीय तथा साहित्यिक उत्तरदायित्व से मुंह नहीं मोड़ा था। घटना के बाद ही दिल्ली के कार्यालय में हिन्दी का स्वतंत्र विभाग बन पाया था।

राज्य सभा की सदस्यता :

बच्चन जी सन् १९६६ से १९८२ तक राज्य सभा के मनोनीत सदस्य थे। आप यहाँ रहकर भी किसी से कभी दबे नहीं। हमेशा आपके जवाब दो टूक रहते थे। आपका कविमन तथा कवित्व यहाँ भी सजग रहता था। जब भी मित्र गण मिलते थे, तो जरूर पूछते थे - बंधु तुम्हारे मंत्री बनने का नंबर कब आएगा ? तो वे अपनी कवि शैली में कह उठते-

मंत्री बनने को आऊँ, साठ बरस जो वाणी पर
अक्षर अर्थ चढ़ाए, राजनीति के हुडदंगों में
वह हडबोंग मचाएँगे।

इसी से स्पष्ट होता है कि, 'इस काल की कटती प्रतिमाओं की आवाज', 'उभरते प्रतिमानों के रूप' और 'जाल समेटा', में राजधानी दिल्ली, राजनीति, नेता और योजनाएँ, इन सभी पर बच्चन जी ने कड़ा व्यंग किया था। दिल्ली दरबार के अनुभवों को भी उन्होंने कविता के साँचे में डालकर हिन्दी साहित्य के जगत को अर्पित कर दिया।

बच्चन जी की विदेश यात्राएँ :

अपनी पीएच.डी. की शिक्षा पूर्ण करने के बाद बच्चन जी सन् १९५९ से १९७९ तक बेल्जियम, फ्रांस, इटली, हालैण्ड, इंग्लैण्ड, नेपाल, मंगोलिया, चेकोस्लोवाकिया, पूर्व जर्मनी, तथा पुन: रूस गए वहाँ से बैरुत गोर्गी नगर, अलामाटा, ताशकंद, समरकंद बोखारा फिर लुआन्डा आदि की यात्राएँ की तथा सन् १९७९ में उन्होंने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में अपनी पीएच.डी. की रजत जयंती मनाई।

आकाशवाणी पर प्रभावी कार्य:

विदेश से आने के बाद कुछ महीने बच्चन जी इलाहाबाद आकाशवाणी केंद्र में निर्माता के रूप में कार्यरत हो गए। वहाँ उनकी 'मेरी स्मरणीय जलयान यात्राएँ' और 'मैं और मेरी मधुशाला' मेरी रचनायों पर वार्ताएँ प्रसारित की गईं, जो कि उस काल की बहुत लोकप्रिय रहीं। इसवी सन् १९५२ में बी.बी.सी. से उनकी आत्मकथा का पहला भाग 'क्या भूलूं क्या याद करूं'? 'मेरे गीत' तथा 'कैम्ब्रिज जैसा मैंने देखा पाया' की भी

वार्ताएँ बहुत प्रसिद्ध हुईं। वे अपने कार्यक्रमों के माध्यम से जन-जन के मन में पहुँचने लगे। इसके अलावा उन्होंने प्रसारणार्थ, साहित्यिक गोष्ठियों में पठनार्थ कुछ गीत और भी लिखे थे।

बच्चन जी का लेखन कार्य :

बच्चन जी ने जब अपना लेखन कार्य शुरू किया तब वे स्थान या शांति का इंतजार नहीं करते थे, शब्दों को अपनी इच्छानुसार लिख देते जो कि, उनके स्फुट काव्यों में बाद में प्रकाशित किया गया। मधुकाव्य की रचना का काल बड़ी गरीबी के समय का था, पर जो रचनाएँ उन्होंने लिखी वे किसी पूँजी से कम नहीं हैं। उस काल में लिखी गई रचनाओं ने एक वाद को जन्म दिया, हिन्दी भाषा के धरातल पर हालावाद का निर्माण किया गया। सृजन बड़ा ही पीड़ा दायक होता है, पर जब वह थोड़ा निखरकर सामने आया तो हालावाद को बुरा कहने वालों ने मधुकाव्य की भाषा के सामने, अपने को लाचार पाया। कवि समाज का आइना होता है, वह युग की परिस्थितियों का वर्णन काव्य के द्वारा ज्यों का त्यों करने में सिद्धहस्त होता है। बच्चनजी लेखन कार्य करते समय कभी लेटते नहीं थे, न ही अपनी कुर्सी में आराम के लिए हत्थे लगवाते थे। वे अपने लेखन का स्रोत अपनी अनुभूतियों को ही मानते थे। उनके लेखन की विशेषता यह थी कि, वे पढ़ते समय या लिखते समय पुस्तक के हाशियों पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिख लेते थे।

बच्चन जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। जिसे हम उनकी उपलब्धि भी कह सकते हैं। वे युगदृष्टा, शब्द शिल्पी, रसवादी कवि, शैलीकार, उत्तम गायक, कहानीकार, निबंधकार, अनुवादक, आत्मकथा लेखक, संस्मरणकार, समीक्षक, शोधकर्ता, पत्रलेखक, गीतकार, भूमिका लेखक, नाटिका लेखक आदि भी थे।

युगदृष्टा शब्द शिल्पी :

कवि श्री हरिवंश राय बच्चन जी आधुनिक हिन्दी के श्रेष्ठ कवि थे। उनका सारा जीवन विपत्तियों, संघर्षों, कठिनाइयों, स्वाभिमान और नम्रता के आंचल में बीता था। आत्माभिमान ही उनकी विशेष पूँजी थी। विपरीत से विपरीत परिस्थिति में भी वे डिगे नहीं। उनके काव्य के शब्द संयोजन को देखकर इसका अंदाजा लगाया जा सकता है। इनके उत्कृष्ट काव्य को देखकर ही इनके मन के कवि का अंदाजा लग जाता है। अपने मधुकाव्य में जो एकता का संदेश इन्होंने भारत के नौजवानों के मन में प्रवाहित किया, वह प्रयास अतुलनीय है। हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई की पहचान, उन्होंने भारतीय बताई, न की धर्म के रूप में। जाति भेद को मिटाने के लिए उन्होंने अपने कॉलेज के

छात्रों को आवाहन किया कि, यदि हम अपने नाम के साथ सरनेम न लगाकर केवल पिता का नाम लिखें तो हमारे देश से जाति-धर्म का भूत भाग जाएगा। हर व्यक्ति अपने कर्म से जाना जाएगा न कि धर्म से। ऐसे उच्च विचारों वाले थे हमारे युगदृष्टा बच्चन जी। 75 वर्ष पूर्व ही धर्मान्धता हटाने का प्रयास करने में लगे थे। उस समय में यह संदेश लोगों तक पहुँचाना समाज के दुश्मनों को आमंत्रित करने के समान था।

रसवादी कवि :

बच्चन जी रसवादी कवि थे। उनकी दृष्टि में रसहीन कविता बेकार थी। वे रस सिद्धि की कविताओं पर ही बल देते थे। वे नीरस को रसमय बनाने को ही, अपनी काव्य रचना का लक्ष्य मानते थे। रस में डूबकर और स्वर में उतरकर वे गीतों को अलापते थे। यही मुख्य कारण रहा है कि, उनकी छंदबद्ध या मुक्तकर रचना सार्वजनिक, सरस, सुलभ लगती है। विविध रसों का चित्र प्रस्तुत करने में वे सिद्धहस्त थे। जब वे मधुशाला की तान छोड़ देते थे, तो लोग अचेतनावस्था में पहुँच जाते थे। माँ सरस्वती का निवास उनके कंठ में था। इस लिए उन्हें आधुनिक हिन्दी काव्य का रससिद्ध कवि कहा जाता है।

शैलीकार :

बच्चन जी एक उत्तम शैलीकार भी थे। उनकी लेखन शैली उनके व्यक्तित्व से मिलती है। उनकी लेखन शैली सहज, सुलभ, सुबोध और प्रभावपूर्ण है। सूक्ति और सुभाषितों का प्रयोग उनकी शैली की विशेषता है। उनके काव्य शैली में कहीं आडंबर या बनावट नहीं दिखाई पड़ती है। आत्मीयता व स्पष्टता भी उनकी दो विशेषताएँ हैं।

उत्तम गायक :

बच्चन जी का कंठ बड़ा मधुर था। वे अक्सर कवि सम्मेलनों में सस्वर ही पाठ करते थे। सारे श्रोतागण उनका पाठ सुनकर मदमस्त होकर झूमने लगते थे। काव्य पाठ के समाप्त होने पर लोग हर्ष से विभोर होकर सारे प्रांगण को गुंजायमान कर देते थे। सारा पंडाल हर्षध्वनि से और तालियों की गड़गड़ाहट से भर जाता था।

कहानीकार :

कहानी कविता के पूर्व या साथ-साथ ही बच्चन जी के पास आई थी। इ.सन् १९३० में बच्चन जी की पहली कहानी हंस पत्रिका में छपी थी। उनकी कहानियाँ मानवीय आस्था और रोमांटिक ललक की दृष्टि से समझने योग्य है। उनकी कहानियों का संसार 'स्व' से 'पर' को अपनाने का रास्ता दिखलाती हैं।

निबंधकार :

बच्चन जी की लेखनी कथा और कहानियों तक ही सीमित न होकर निबंध के क्षेत्र में भी बड़ी तेज थी। वे हिन्दी निबंध साहित्य के सशक्त लेखक माने जाते हैं। उनके निबंधों में अनुभव संपन्नता, चिंतनशीलता, जीवन जगत के प्रति लगाव और सामान्य सत्यों का साक्षात्कार है। उनमें बच्चन जी का तथा साहित्यिक गतिविधियों का प्रामाणिक तथा तटस्थ अंकन किया गया दिखाई पड़ता है।

अनुवादक :

बच्चन जी के अनुवादन में उनका कवि व्यक्तित्व सम्मिलित है। मूल कृतियों की भाषा और अनूदित कृतियों की भाषा दोनों के ही बच्चन सूक्ष्म ज्ञानी हैं। उनका अनुवाद छह-छह संस्करणों से गुजरा है। उनके अनुवादों में उन्होंने हमेशा इस बात का ख्याल रखा कि, कहीं कथा का मूल भाव न बदल पाए। यही उनकी जन प्रियता का विजय स्तंभ है।

आत्मकथा लेखक :

बच्चन जी आधुनिक हिन्दी आत्मकथा साहित्य में, एक यशस्वी आत्मकथा लेखक भी माने गए हैं। उन्होंने अपनी आत्मकथा बताते हुए निश्चल आत्मीय जनता को उसमें सहभागी बनाकर अपने जीवन के सभी अंगों को प्रसंग सहित वर्णित किया है।

इसके अलावा वे संस्मरणकार, समीक्षक, शोधकर्ता, पत्र लेखक, गीतकार, नाटिका लेखक हैं। यही उनके जीवन की मुख्य उपलब्धियाँ हैं, सभी कृतियों में से बच्चन की श्रेष्ठ कविताओं का संकलन मेरी श्रेष्ठ कविताएँ - अपने काव्यकाल के आरंभ से १९६३ तक लिखी अग्रणी कवि बच्चन की ये सर्वश्रेष्ठ कविताएँ हैं, जिन का चुनाव उन्होंने स्वयं किया है। एक प्रकार से यह समग्र कृतित्व का नवनीत है। जिसमें मधुशाला से लेकर मधुबाला, मधुकलश, निशा निमन्त्रण, आकुल अंतर, बंगाल का काल, खादी के फूल, धार के इधर-उधर, त्रिभंगिमा, बहुत दिन बीते और जाल समेट तक सभी संग्रहों की सर्वश्रेष्ठ रचनायें तो हैं ही, उसके बाद भी यदा-कदा वे जो कुछ लिखते रहे, उनमें से भी कविताएँ सम्मिलित की गयी हैं। ये कविताएँ उन सभी प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करती हैं जिनके अंतर्गत बच्चन आज तक कविता लिखते रहे। इसमें हिन्दी कविता का आरम्भिक छायावाद, रहस्यवाद, उनका अपना मधुवाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता आदि सभी कुछ एक साथ आ जाता है - जो कवि का अपना श्रेय तथा उनकी गौरवपूर्ण उपलब्धि है।

महत्व

अपने आप में एक अनोखे वाद को पुष्पित और पल्लवित करने का श्रेय यदि किसी कवि को जाता है तो वे महान कवि है डॉ. 'हरिवंश राय बच्चन'। जिन्होंने निराशावाद के घने बादलों को छाँटकर मधुकाव्य की वर्षा से हिन्दी साहित्य जगत को मदमस्त कर दिया। अपने हाथ में हालावाद की पताका लहराते, वे अकेले ही सारी काव्य सृष्टि के वरिष्ठ माने जाने वाले कवियों के आगे खड़े हो गए। उनके काव्य की विविध विशेषताएँ हैं:

१) इनके काव्य में जीवन को जीने की अभिलाषा ललकार रही है। यह दु:ख को भुलाकर सुख का दर्शन कराने वाली मधुवर्षिणी है।
२) इसमें जीवन के सकारात्मक दृष्टिकोण के दर्शन होते हैं।
३) इस मधुकाव्य के माध्यम से नौजवानों की उमंग को नई तरंग मिलती है।
४) सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें मुक्त रूप से जाति, धर्म, ऊँच-नीच की भावना पर प्रतिघात किया गया है और मानवता का भाव भी प्रस्तुत किया गया है।

बच्चन जी की मधुवादी कृतियों ने खड़ी बोली हिन्दी के इतिहास में धूम मचा दी। इनके मधुकाव्य को हिन्दी साहित्य संसार की पहली पद्यात्मक पुस्तक का खिताब मिला है। छायावाद को अंतिम राह दिखाने वाला, बच्चन जी का मधुकाव्य ही था। वास्तविकता के धरातल पर वे हिन्दी जगत के पाठकों को लेकर आए थे। बच्चन जी ने कभी किसी के बारे में सोचकर कविताएँ नहीं लिखीं। वे जिस बात को आवश्यक समझते, उन अनुभवों की लड़ियों को शब्दों की कड़ियों में पिरोकर व्यक्त कर देते थे। बच्चन जी ने कभी इस बात की चिंता नहीं की कि, उनके बारे में नए तथा पुराने समीक्षक क्या कहते हैं?

हिंदी काव्य जगत को उनकी अनमोल देन है उनकी कविता का संसार। कवि बच्चन जी छायावादोत्तर युग में एक दैदीप्यमान नक्षत्र की तहर उभरे। काव्यों की रचना की। कवि की कविता, मन की आँखें कहती हैं। हिन्दी के काव्य जगत में उनको कवि शिरोमणि बनाने का खिताब 'मधुशाला' को दिया जाता है। उसमें जो गीत इतनी मस्ती में लिखे गए कि बिना पिए ही पाठक और श्रोता झूमने लगते थे। मधुकाव्य का दूसरा महत्व यह था कि, रूढ़ी वादी पारंपरिक समाज में रहकर वे, जातिधर्म के नाम पर हो रहे अत्याचार को, अपने काव्य के माध्यम से सामान्य लोगों तक पहुँचाना चाहते थे।

अपनी प्रिय पत्नी की मृत्यु के बाद, करीब दो वर्ष तक कुछ भी न लिख पाए। अपने दु:ख की अनुभूति को उन्होंने संजोकर रखा था। जब उस अनुभूति को शब्दों का स्वरूप दिया, तो वे काव्य संग्रह हिन्दी काव्य जगत की अनमोल निधि बन गए। निशा निमंत्रण, एकांत संगीत, आकुल अंतर में उनके मन की पीड़ा व्यक्त हुई है। एक यौवन की मस्ती में रंगा कवि जो मधु काव्य का सर्जक है, उसके जीवन के बिखराव ने उसे दु:ख की काली रात के आगोश में निशा निमंत्रण के रूप में प्रकटित किया। एकांत संगीत की लहरियों में डुबा दिया और आकुल अंतर के मन को शांत करने का प्रयत्न किया।

बच्चन जी आशावादी कवि हैं। अपने इस दु:ख के दौर के बाद उन्होंने सारे साहित्य जगत में दु:ख से लड़ने वाली शक्ति का आवाहन किया है। वे लिख उठे -

लहरों से डरकर नौका पार नहीं होती
कोशिश करने वालों की हार नहीं होती। [२०२]

उनकी रचना का क्षेत्र असीमित है। उन्होंने जो भी लिखा, वो व्यंगकारों, साहित्यकारों के लिए चर्चा का विषय बना रहा। पर वे कभी भी परिणामों से घबराए नहीं। अपनी कविताओं की संवेदना, के संसार को और विस्तृतता प्रदान करने में लगे रहे। कविवर्य बच्चन जी की यह काव्य साधना जितनी प्रेरणा स्पद है उतनी ही उद्‌बोधक भी है। उनकी संवेदना के संसार में सारे दु:खों को भी समाहित करने के बाद भी कवि ने आशा की डोर नहीं छोड़ा है। उनका कहना है जीवन है, जीने के लिए, जो इंसान एक ही बार पाता है। अपने गुणों से उसे सजा धजा कर रखो, ताकि आने वाली पीढ़ी को कुछ नया दे सको। बच्चन जी की कविताओं में, उन्होंने विशेषकर भाव तत्वों को महत्वपूर्ण माना है। उनका मानना है कि प्रतिभावान कवि तथा लेखक वादों में सहज नहीं बंधते हैं। उनके लेखन की एक विशेषता है, उन्होंने भाषा के धरातल पर भी बड़ा संघर्ष किया तभी जाकर साधारण रूप में कविता की संवेदना को लिख पाए।

बच्चन जी के काव्य की महत्ता यह है कि, उन्होंने अपने अनुभवों को स्वरों की माला पहनाकर पाठकों के सामने प्रस्तुत कर दिया। बच्चन जी की रचनाएँ उनके जीवन जीने के दृष्टिकोण का पता स्पष्ट बतला देती हैं। जीवन की शुरुआत जिन सुनहले सपनों से होती है, उसकी निराशा का काल भी भुगतना पड़ता है। कवि जीवन में उन्हें केवल सुख, स्नेह, सम्मान और प्रशंसा ही नहीं मिली थी, वरन् दु:ख और क्षोभ भी उसी मात्रा में मिला था। उन्होंने पाया कि जीवन रूपी कविता में चंदन सी शीतलता

तो है, पर हर क्षण वह विषरूपी सर्पों से घिरी है। कोमल कुसुमों की डाली भी काँटों से घिरी है, पर कुसुम उसी तरह मुस्कुरा रहा है। अपने काव्य रचना में कितने ही आँसू बहाकर, उन्होंने प्रणय के अंदर छिपा संघर्ष तथा आग, के पीछे के स्वार्थ को जाना। दु:ख ही सुख की दस्तक है, यह भी जाना, जैसा कि अपने संवेदक काव्य निशा निमंत्रण, एकांत संगीत, आकुल अंतर इत्यादि में। बच्चन जी का काव्य जिस परिस्थिति में लिखा गया, वह काल उनके लिए प्रतिकूल न था। अनुभवों की पाठशाला के काव्यों की रचना को, उन्होंने अपनी लेखनी से सफल किया। हर आने वाला दु:ख उनके कविता का माध्यम बन जाता था। हिन्दी काव्य जगत में उनकी कविताओं को उच्च स्थान इसलिए नहीं मिल पाया, क्योंकि उनकी कविताएँ साधारण सर्वाहार वर्ग के लिए भी लिखी गई थीं। उनकी कविताओं में कहीं बनावटीपन की बू नहीं आती। उनका काव्य संसार, राजा और रंक सभी के लिए समान था। राम, रहीम, गॉड सभी उनके आराध्य थे। उनका मानना था कि, पाँचों अंगुलियाँ बराबर नहीं होतीं, पर सबको थोड़ा मोड़ दो तो सभी एक सी लगती हैं। बच्चन जी के काव्य का महत्व, हमें उनके काव्य संग्रह 'भाषा अपनी भाव पराए' में देखने को मिलता है। इस काव्य संग्रह के अंर्तगत विभिन्न भारतीय तथा विदेशी भाषाओं की कविताओं के अनुवाद पढ़ने को मिलते हैं। इसमें ११ कश्मीरी, दो पंजाबी, एक गुजराती, एक मराठी, १ तेलुगु, दो कन्नड, २ मलयाली, एक तमिल, ३ अंग्रेजी और एक स्पेनी कविताओं से हिंदी में अनुवादित कर, हिन्दी के पाठकों के सामने रखी गई हैं। ये सभी कविताएँ संवेदना से परिपूर्ण हैं। बच्चन जी के काव्य का महत्व इसलिए भी है, क्योंकि वे सदैव अनुभूति पर बल देते हैं, तभी तो समय और समाज को भी स्वीकृत कराते हुए चलते हैं। उनका मानना है कि, वही कवि सबसे ज्यादा सफल माना जाता है, जो अपने युग समाज की समस्त मूलभूत, व्यापक और पूर्ण संवेदनाओं से स्वयं प्रेरित हो और दूसरों को भी प्रेरित कर सकें। हमेशा इस बात का ध्यान लगा रहता है कि, बच्चन जी केवल व्यापक तथा तत्व पूर्ण संवेदनाओं को ही मान्यता देते रहे हैं तथा उन्होंने इस बात का भी ख्याल रखा कि, कवि को अपने काव्य में कुछ ऐसा रचना चाहिए जिससे दूसरे भी प्रेरित हो सकें। उनके काव्य में कहीं भी किसी काल की परछाई तक दिखाई नहीं पड़ती है। उनका काव्य सदैव मौलिक रहा है। वे प्रेरणा कहीं भी पाते, तो उस पर अपनी अभिव्यक्ति कविताओं के रूप में व्यक्त करते थे। यही मुख्य कारण था कि वे समाज को केवल किसान-मजदूर तक ही सीमति नहीं रखते और उसे देखकर लिखने को कविता के नाम से गौरवान्वित नहीं करते थे। समसामयिक और समाज को अस्वीकार न करते हुए भी वे उनसे आगे शाश्वत और व्यक्ति की सत्ता को भी स्वीकार करते हैं बल्कि उन्हीं पर विशेष बल भी देते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि, वे समाज की हलचलों को बर्खास्त करते हैं पर यह कि उन हलचलों को स्वर दिया जाय, जो कहीं गहरे व्याप्त समाज को छूती है, केवल प्रचार के लिए एक विशिष्ट दृष्टि तक ही अपने

आप को सीमित न रखा जाय। यही वह मुख्य कारण था, जिसने बच्चन जी की संवेदना के संसार को वाणी दी थी। निशा निमंत्रण, एकांत संगीत, आकुल अंतर इसके जीवंत परिणाम हैं। हिंदी साहित्य जगत के सामने बच्चनजी की हृदय की पीड़ा की गहराई जिस तरह से व्यक्त हुई है, वह भी लक्षित करने योग्य है और मधुकालीन काव्य में हमें व्यंग और आक्रोश का तीखा स्वर भी देखने को मिलता है। जहाँ जब उनके मन में अनुराग या प्रणय जागा है, जैसे ही उन्होंने उसे वाणी दी है, वैसे ही जहाँ चोट लगी है उसे भी उन्होंने व्यक्त किया है। फिर बाद में इनसे जीवन का अर्थ पढ़ने को कहा है। उनके अनुसार समकालीनता को किसी तात्विक सत्य से न जोड़ पाने के अभाव में कविता केवल समाचार पत्र का हिस्सा बनकर रह जाती है, अपने काव्य में समय की अनुकूलता और प्रतिकूलता का परिचय कराना ही उनके कविता लेखन का उद्देश्य रहा है। प्राय: हालावाद को बच्चन जी के नाम से जोड़ा जाता है पर यह सत्य नहीं है। उनकी मधुशाला, मधुबाला तथा मधुकलश का संबंध भले ही हाला, साकी बाला से हो पर उन कृतियों का मूल संदेश कुंठित मानसिकता के पाश में बंधे लोगों को जगाना था। हिन्दी को बहुत हद तक उनके मधुकाव्य ने सम्मान भी दिलाया था। इसके पूर्व की कविताओं में बहुत सारे उर्दू शब्दों का प्रयोग धड़ल्ले से होता था, पर मधुकाव्य की रचना के बाद, उसमें बेशक कमी आई थी। हिन्दी केवल बच्चन जी के काव्य की भाषा नहीं रही, खड़ी बोली हिन्दी के संवर्धन में भी इसका बहुत बड़ा सहयोग रहा। बच्चन जी के काव्य में अभिधा के आधार पर लालित्य और माधुर्य का कोमल प्रवाह, आत्म विभोर करने वाले संगीत, नए गीतों का स्वरूप छायावाद को मात देकर सच की जीवन राह दिखलाने की छटपटाहट, काल्पनिकता से दूर, जटिलता से बाहर की दुनिया के दर्शन कराने की अद्‌भुत क्षमता थी।

इस प्रकार बच्चन जी भाव, भाषा और शैली के नूतन परिप्रेक्ष्य में सदा स्मरणीय रहेंगे, उनकी संवेदना का संसार इतना विस्तृत है कि जितने भीतर जाओ वह उतना गहराता जाता है।

संदर्भिका (अध्याय ५) -

[१९६] http://navjigyasa.blogspot.in/२००९/१२/my-favorite-from-harivansh-rai-bachchan.html

[१९७],[१९८], [१९९], [२००] बच्चन; मधुबाला; 'मालिक मधुशाला';पथ का गीत

[२०१] बच्चन; एकान्त संगीत

[२०२] बच्चन; बच्चन की प्रतिनिधि कविताएँ

अन्य संदर्भः

१) राम रतन भटनागर ; साहित्य संदेश बच्चन विशेषांक (पत्रिका); ९ दिसम्बर १९६७
डा. विजेन्द्र स्नातक एवं राजानंद द्वारा इसी पत्रिका में लेख

२) विशंभर मानव; नयी कविता नये कवि

३) सत्य प्रकाश मिलिन्द; प्रयोग कालिक कवि बच्चन

४) वीरेन्द्र कुमार गुप्त; बच्चनः एक मूल्यांकन; माध्यम पत्रिका; दिसम्बर १९६८

५) सं.जीवन प्रकाश जोशी; पाती फिर आई

६) डा. कमलकांत पाठ्क; व्यक्ति और काव्य

७) ए के मित्तल; बच्चन एक प्रस्तुति

८) डा. भगीरथ मिश्र; हिन्दी काव्शास्त्र का इतिहास;१९५८

९) सं. नीरज; बच्चन एक युगान्तर

१०) डा. इन्दुबाला दीवान; बच्चन अनुभूति एवं अभिव्यक्ति

११) डा. विनोद गोदरे; छायावादोत्तर प्रगीत

१२) डा. के जी कदम; कवि श्री बच्चनः व्यक्ति और दर्शन

अध्याय - छह

बच्चन जी का साहित्यिक योगदान

एवं

उपसंहार

अध्याय - छह

६.१ बच्चन जी का साहित्यिक योगदान

बच्चन जी का साहित्यिक योगदान रेखांकित करना अर्थात् सूरज को रोशनी दिखाना है। हिन्दी के साहित्यिक जगत में तहलका मचाने के लिए बच्चन जी का काव्य एक नव रचना का युग था, छायावाद के अंत का कारण भी था। अवास्तविक आशावाद से पाठकों को वास्तविक्ता के धरातल से परिचित कराने का श्रेय बच्चन जी को जाता है। इसके पूर्व के काव्य केवल कल्पना जगत को साकार करते थे। मधुकाव्य की निर्मिति ने एकाएक बच्चन जी को हिन्दी काव्य जगत में श्रेष्ठता के पद पर आसीन कर दिया। उनके काव्य जगत की रचना एक नव-निर्माण की हुंकार थी, कई लोग इससे प्रभावित हुए। खड़ी बोली को हिन्दी काव्य जगत में स्थापित करने का कार्य बच्चन जी के द्वारा किया गया।

उन्हें इसके लिए बहुत अपमान भी सहना पड़ा था। उनके दोस्तों के साथ दुश्मनों की तादाद भी बहुत थी। पुराने कवि दल ने उन पर अनेकानेक आरोप लगाए, पर वे विचलित हुए बिना अपनी रचनाओं का निर्माण कर अपनी राह पर चलते रहे। वे साहित्य को किसी की धरोहर नहीं मानते थे, उनका कहना था कि कविता मन की अनुभूति है और कहानी उसकी परिणिती है। बच्चन जी के साहित्यिक योगदान में राष्ट्र प्रेम की भावना, एकता का संदेश और कर्मठता की नींव को नहीं भूला जा सकता है। उनके मधुकाव्य को हिन्दी की प्रथम खड़ी बोली, हिन्दी की पहली सीढ़ी माना जाता है। गाँधीजी की मृत्यु तथा बंगाल के काल से द्रवित होकर भी, उन्होंने लम्बी कविताएँ और गद्य भी लिखा। बच्चन जी के गद्य में कुछ निजी आकर्षण है। गद्यलेखन में भी बच्चन जी का ध्यान हमेशा रस-मूल्य पर रहा है, ताकि पाठक सच्चे अर्थों में उसका आस्वादन कर सकें।

बच्चन जी स्वयं को एक गद्यकार के रूप में हिन्दी साहित्य जगत में स्थापित करना चाहते थे। उनकी हिन्दी में लेखन की अभिरुचि और क्षमता पहले से ही तीक्ष्ण थी, पर वे हमेशा गद्य से ज्यादा पद्य को अधिक स्वाभाविक मानते थे। वैसे तो वे गद्य के शुष्क क्लेवर में भी कविता का रस बनाए रखते थे। यही रस रूप आत्मा उनके गद्य को काव्यात्मकता प्रदान करता है। बच्चन जी ने गद्य की विभिन्न विधाओं में अपनी लेखनी का सुन्दर प्रयोग किया है। जैसे कहानी, निबंध, संस्मरण, रेडियोवार्ता, रेखाचित्र, पत्र लेखन, रिपोर्ताज, आत्मकथा, डायरी लेखन, समीक्षा लेखन, भूमिका लेखन, स्फुट लेख तथा बाल नाटिका।

१) कहानी लेखन : बच्चन जी ने कहानी लेखन के क्षेत्र में बहुत सराहनीय कार्य किया था, वे एक साथ ही कहानी तथा कविताएँ लिखते रहे। सन् १९४६ में भारती भंडार ने उनका कहानी संग्रह प्रकाशित किया था। बहुत सारे विद्वानों ने कहानी के तत्वों के संबंध में अपने विचारों को वाणी दी। उनके अनुसार कथानक, पात्र परिचय, चरित्र चित्रण, कथोपकथन, वातावरण, शैली और उद्देश्य, कहानी के मूल तत्व हैं। बच्चन जी की सभी कहानियाँ इन सभी तत्वों की कसौटी पर खरी उतरी हैं। उनकी कहानी पुस्तक प्रारंभिक रचनायें (१९४६) - भाग-३ काफी प्रचलित रही।

२) निबंध लेखन : 'कवियों में सौम्य संत', 'नए पुराने झरोखे' और 'टूटी छूटी कड़ियॉं', बच्चन जी के तीन निबंध संग्रह हैं। इन तीनों निबंध संग्रहों में कुल ५९ निबंध, १० पत्र पत्रिकाएँ और २ साक्षात्कार हैं। इन ५९ निबंधों में २४ तो रेडियो वार्ताएं हैं। इन सभी निबंध संग्रहों में पंत जी के व्यक्तित्व और कृतित्व, संस्मरण, विदेश प्रवास, साहित्य, राष्ट्रीय शोध आदि विषयों पर मार्मिक विवेचन और विश्लेषण प्रस्तुत हैं।

३) संस्मरण : बच्चन जी की हिन्दी काव्य को दी गई अनमोल देन में हम संस्मरण को याद कर सकते हैं। इनके संस्मरणों में स्पष्टवादिता, रोचकता, संबद्धता, सजीवता, सरलता, चरित्र चित्रण में कुशलता, सूक्ष्मदर्शिता, पर्यवेक्षण शक्ति, चित्रण शक्ति, युगीन परिस्थितियों का ज्ञान परिलक्षित होता है। विदेश विषयक संस्मरण अत्यंत रोचक तथा पाठकों के लिए सुझावपूर्वक लिखे गए हैं। कई तो ऐसे भी हैं जिन में बच्चन जी ने अपना लेखकीय इतिहास भी प्रस्तुत किया है, जिनमें मधुशाला (स्वर्ण जयन्ती संस्मरण-1985) प्रसिद्ध है।

बच्चन जी ने अपने संस्मरणों में दूसरों की गुण मान्यताओं का उल्लेख कर अपनी त्रुटियों तथा न्यूनताओं को भी प्रदर्शित किया है। बच्चन जी के संस्मरणों में उनके भावुक हृदय और उनके भावों की कोमलता बहुत दर्शनीय लगती है। उनके संस्मरणों में उन्होंने मार्मिक और समीक्षात्मक टिप्पणियों का भी समावेश किया है। उनके द्वारा लिखे गए संस्मरणों से ज्ञात होता है कि असल में संस्मरणकार कैसा होना चाहिए। उन्होंने बड़ी चतुरता के साथ सभी घटनाओं का ऐसा वर्णन किया है कि सभी घटनाएँ फिल्म की भाँति आँखों के आगे से निकल जाती हैं। इस कसौटी पर बच्चन जी खरे उतरे हैं। उनके संस्मरण खरे, स्वाभाविक, रोचक तथा सफल कहे जा सकते हैं।

४) वार्ता लेखन : बच्चन जी के गद्य में निबंधों तथा वार्ताओं का आधिक्य है। उनके निबंध संग्रह में करीब २४ वार्ताएं हैं, बच्चन जी के वार्ता संस्मरणों में हास-उपहास,

चुटीलापन व कथन की स्पष्ट व्याख्या देखते ही बनती है। बच्चन जी की सभी रेडियो वार्ताएँ, रेडियो वार्ता विधा के आदर्श रूपों को स्थापित करती हैं। रेडियोवार्ता विधानों, उनका लेखनादर्श निभाते हुए हिन्दी की रेडियो वाार्ताएँ, जनस्तर पर सामान्यत:, सामान्य श्रोताओं और साहित्यिक बंधुओं के बीच के एक फर्क को दूर करने में काफी कारगर सिद्ध हो सकती हैं।

५) रेखा चित्र : रेखा चित्र में किसी वस्तु या व्यक्ति का उसकी आंतरिक विशेषताओं के साथ चित्र खींचा जाता है। बच्चन जी के शब्दों में, सियाराम शरण गुप्त जी का रेखाचित्र- वे कद से नाटे, शरीर से दुबले-पतले, रंग से साँवले। उनके सिर पर के झबरे घुँघराले, सूखे बालों पर लगी गाँधी टोपी, लम्बी से ज्यादा गोल अधिक लगती थी। चौड़ा माथा, चौड़ी नाक, खुला मुँह, झुकी मूँछ उनकी बौद्धिक प्रतिभा से अधिक उनके भोलेपन, सरलता और विनम्रता का संकेत कर रही थी। आँखों में ऐसी आश्चर्यचकित करने वाली चमक थी, जो पहली बार गाँव से चलकर किसी बड़े शहर में पहुँच गया हो। खादी का कुर्ता, थैला उन्हें पूरा गाँधीवादी सिद्ध करता था। इसी प्रकार बच्चन जी ने, कई लोगों का रेखा चित्र अंकित किया है। बच्चन जी ने, इसी तरह पंत जी का भी रेखा चित्र अंकित किया है। ये रेखा चित्र वास्तविकता पर आधारित हैं। यहाँ अगर बच्चन जी के लेखन पर ध्यान दें, तो ज्ञातव्य है कि किस विवेक तथा सूक्ष्म दृष्टि से वे लोगों का सफल चित्रण करते थे। ऐसे रेखा चित्र पाठक के मन पर अक्सर अमिट छाप छोड़ देते हैं। बच्चन जी के रेखा चित्रण को हिन्दी साहित्य जगत में बड़ा सम्माननीय स्थान प्राप्त है। इन्होंने ऐसे अनेक रेखाचित्रों को अपनी लेखनी से साकार किया है।

६) रिपोर्ताज : संस्मरण के लक्षणों से युक्त बच्चन का यह 'बेल्जियम का अंतर्राष्ट्रीय काव्य समारोह' एकमात्र रिपोर्ताज है। इसमें बच्चन जी ने अपने अनुभूतिप्रवीण क्षणों को बड़ी आत्मीयता से रूपायित किया है। बच्चन जी ने इसमें भविष्य के प्रति दूरदर्शिता को व्यक्त किया है। साथ ही बहुत सारे मौलिक और बहुमूल्य सुझावों का भी इसमें समावेश है। हिन्दी साहित्य में यह रिपोर्ताज उल्लेखनीय माना जाता है।

७) पत्रलेखन : साहित्यों की तुलना में, हिन्दी के पत्र साहित्य को गरीब माना गया है। बच्चन के पत्रों में, बच्चन के पत्र, बच्चन रचनावली में सम्मिलित पत्र पाती फिर आई, बच्चन पत्र आदि पत्र संग्रह प्रकाशित हुए हैं। उनका कहना था कि 'आदर्श पत्र लेखक उसे कहते हैं, जिसका पत्र पाकर यह न लगे कि पत्र आया है, बल्कि महसूस हो कि वह खुद आया है'। बच्चन जी के पत्र इस बात को प्रमाणित करते हैं।

' बच्चन पत्रों में ' पुस्तक में बच्चन जी एक सामाजिक हृदय वाले व्यक्ति के रूप में मुखरित हैं। सेवक को लिखे पत्रों से बच्चन जी के युवा जीवन के बहुत सारे विचारों,

भावों, अर्न्तद्वंदों और मानवीय संवेदना शक्ति का बोध होता है। बच्चन जी के पत्र बड़े, आत्मीय तथा मज़ेदार पत्र हैं। इनमें बच्चन जी के सरल, भोलेभाले, कवि स्वाभाविक गुणों के दर्शन होते हैं, साथ ही साथ कहीं-कहीं बड़ी मार्मिक साहित्यिक उक्तियों और अनुभवों से प्रेरणा भी मिलती है। उनके पत्रों द्वारा समाज, साहित्य, राजनीति, राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय संदर्भों के साथ बच्चन जी के विचारों, सिद्धांतों तथा अनुभूतियों तथा प्रतिक्रियाओं का रेखांकन हुआ है। बच्चन जी के पत्रों में यह दिखाई पड़ता है कि पत्र, शैली अनुरूप अपने गठन, वाक्य विन्यास, काव्य संदर्भ, सहज, सरल भाषा से पूर्ण और सार गर्भित हैं जिन पर एक सरल चिंतन शील, अनुभवी निरीक्षक, व्यावहारिक, घरेलू व्यक्तित्व की गहरी छाप देखने को मिलती है। बच्चनजी द्वारा संपादित 'पंत के सौ पत्र १९७०' तथा 'पंत के दो सौ पत्र १९७२' स्मरणीय हैं। हिन्दी साहित्य जगत में बच्चन जी के पत्रों को पढ़कर, एक व्यक्तिगत पहलुओं की जानकारी मिलती है।

८) **आत्मकथा :** आत्मकथा में लेखक का अपना जीवन, समसामयिक जीवन और उसकी जीवन प्रक्रिया के क्रम में मानसिक संरचना का बोध होता है। आत्मकथा के लिए खुलामन, साहस और संयम आवश्यक है। आत्मकथा में प्रामाणिकता, विश्वसनीयता, तटस्थता, आत्म निरीक्षण, सच्चा मानसिक संघर्ष, संपूर्ण गुण-दोषों का उद्‌घाटन अपेक्षित होता है। बच्चन जी की आत्मकथा में सौभाग्यवश इन सभी पहलुओं का समावेश है।

हिन्दी साहित्य जगत में बहुत कम आत्मचरित्र लिखे गए हैं। बच्चन जी अपनी आत्मकथा में स्वाभाविक रूप से चित्रित है। उन्होंने अपनी आत्मकथा बताते हुए उसमें निश्चल आत्मीयता से पाठकों को विश्वस्त सहभागी बनाया है। इसी कारणवश, खड़ी बोली के गद्य में बच्चन जी की आत्मकथा ने अभूतपूर्व लोकप्रियता पाई है। 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' की कथा अक्तूबर १९३६ में पूरी हुई, 'नीड़ का निर्माण फिर फिर', की कथा बच्चन जी के ३० वर्ष से शुरू होकर ५० वर्ष तक चली है। फिर 'बसेरे से दूर' में बच्चन जी ने अपनी पीएच.डी. के दौरान हुई घटनाओं का वर्णन किया है और अंत में 'दस द्वार से सोपान तक' में अपनी आत्मकथा का अंत किया है। 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' में कायस्थ जाति का रोचक वर्णन किया है। तात्कालिक समाज के दर्शन उनके इस आत्मकथा में दृष्टव्य हैं। जाति धर्म के नाम पर किए जाने वाले आडंबरों को भी उन्होंने लिखा है। अनेक निम्न जातियों के नाम बतलाए हैं, जैसे- चमार, धीवर, लुहार, काछी, जुलाहा जैसी जातियों का आस्था मूलक संवेदना मूलक चित्रण किया है। हिन्दी साहित्य जगत में इस प्रकार की आत्माभिव्यक्ति, किसी आत्मकथा में देखने को नहीं मिलती। 'नीड़ का निर्माण फिर फिर' में बच्चन जी ने अपनी पत्नी तेजी के नारीत्व को पत्नी रूप में सर्वश्रेष्ठ ठहराया है। 'नीड़ का निर्माण फिर फिर' में जीवन ज्योति पाने

के लिए किए गए प्रयत्नों का सविस्तार वर्णन है। उसमें बच्चन जी ने अपनी जीवन की विविध स्मृतियों, कार्य कलापों, कार्य दिशाओं और उपलब्धि-अनुपलब्धियों का लेखा जोखा प्रस्तुत किया है। जो बहुत ही रोचक है। उनके अनेक संस्मरण हृदय को छू लेने वाले हैं और इतना ही नहीं छोटी-छोटी घटनाएँ ज्यादा चित्ताकर्षक प्रतीत होती हैं। इसकी अलग कड़ी 'बसेरे से दूर' में बच्चन जी ने इंग्लैंड कैम्ब्रिज में अपने निवास, डब्ल्यू.बी.यीटस पर शोधकार्य, अंग्रेजी काव्य का अध्ययन और संस्थाओं का निरीक्षण आदि बातों का मौलिक सूझ-बूझ से वर्णन किया गया है। इसमें यह ज्ञात होता है कि लघु व्यक्ति, व्यक्तित्व की विराटता का आकाश छूने के लिए कितनी सूक्ष्म उड़ानें भर सकता है, कितना त्याग कर सकता है, कितना रिस्क ले सकता है, कितना राग रोष भरा हो सकता है। इस खंड को पढ़कर समझा जा सकता है।

कथ्य के विराटतम रूप को समेटने वाली शैली यहाँ पर देखी जा सकती है। यह शैली हिन्दी के साहित्य के इतिहास में एक अलग छाप छोड़ जाती है। हिन्दी के कई कवियों तथा लेखकों के मत से बच्चन जी की आत्मकथा का यह अंश बच्चन जी के लेखन का मानस कलश माना जा सकता है।

'दशद्वार से सोपान तक' में बच्चन जी ने अपने प्रिय पुत्रों के द्वारा बनवाये गए उनके नए निवास स्थान के नाम से अपनी आत्मकथा लिखी। इसे बच्चन जी ने अपनी स्मृति यात्रा का अंश माना है। इसमें उन्होंने अपने नितांत स्व: के साथ अन्य को भी निष्प्रयास प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत करने की बात कही है।

९) डायरी लेखन : बच्चन जी ने अधिकतर सभी विधाओं में लेखन कार्य किया है। असल में डायरी लेखन में मानवीय उद्वेलन, विचार घटना प्रसंग, तिथि, स्थान और अनुभूति का महत्व बहुत है। इसी दृष्टि से बच्चन जी की डायरी लेखन की कला को हिन्दी साहित्य में बड़ा मान-सम्मान है। इसलिए बच्चन जी का डायरी लेखन मूल्यवान माना गया है। बच्चन जी की 'प्रवास की डायरी' में, उनके लेखनारंभ १२ अप्रैल, १९५२ से और अंत १२ जनवरी, १९५३ तक की सभी तिथियों का क्रमवार नियमित लेखन है। बच्चन जी की प्रवास की डायरी सभी दृष्टियों से रोचक है। इसकी विशेषताएँ इस प्रकार हैं . . . . .

स्तंत्रता दिवस पर नेहरू जी का जो भाषण है, उसमें न तो आजाद हिन्द फौज का कोई जिक्र था, न सुभाष चंद्र बोस का। जबकि स्वराज्य मिलने के पूर्व, वे सारे देश में दोनों के नाम की दुहाई देते फिरते थे। इसी अंश से हम बच्चन जी की स्पष्टवादिता, धैर्य और साहस का अन्दाजा लगा सकते हैं।

१०) समीक्षा लेखन : 'कवियों में सौम्य संत' में सम्मिलित पंत विषयक लेख बच्चन जी की समीक्षा के कीर्ति स्तभ हैं। बच्चन का समीक्षक मन चिंतन शील तथा न्यायी है तथा उनके तराशे हुए लेख बिल्कुल सच्चे कलाकार की कारीगरी की तरह तराशे हुए लगते हैं।

उनके कुल ७ समीक्षा विषयक लेख प्रकाशित हुए हैं। जिनमें १) दीवाने गालिब २) आज के उर्दू शायर और उनकी शायरी ३) चाँदनी चूनर ४) काव्य कला में हिन्दी समालोचना ५) नेपाल और नेपाल नरेश ६) अंकित होने दो ७) पंत जी की कविताओं का संग्रह इत्यादि हैं।

११) भूमिका लेखन : बच्चन जी ने भूमिका के रूप में जो गद्य लिखा है, उसमें उनकी तत्व दर्शिता, मर्मज्ञता, दूरदर्शिता, युग-दृष्टांत के दर्शन होते हैं। बच्चन जी की नौ भूमिकाएँ बच्चन रत्नावाली कांड ६ में सम्मिलित हैं।

१३) संकलित लेख: बच्चन रचनावली के अंतर्गत उनके नौ लेख हैं। जिसमें तुलसीदास जी, कवि सम्मेलन, बाबूगुलाब राय जी तथा अन्य लोगों का वर्णन किया गया है। अभिनव सोपान १९६४, बच्चन के लोकप्रिय गीत १९६७, मेरी कविताओं की आधी सदी १९८१, आठवें दशक की प्रतिनिधि श्रेष्ठ कविताएँ १९८२, मेरी श्रेष्ठ कवितायें १९८४ बच्चन जी के प्रमुख संकलन हैं।

१४) बाल नाटिका : बंदर बॉट लिखकर बच्चन जी ने बाल नाटिका जगत में अपना नाम अंकित करवाया। इसमें एक रोटी लेकर काली बिल्ली और सफेद बिल्ली के झगड़े को दर्शाया गया है। पुरानी कहानी कवितात्मक रूप में मनोरंजनार्थ लिखी गई है। इसके अतिरिक्त नीली चिड़िया, जन्मदिन की भेंट इनकी रोचक बाल नाटिकायें हैं।

१५) अनुवादित रचनायें : चौंसठ रूसी कवितायें १९६४, मरकत द्वीप का स्वर १९६५, नागर गीता १९६६,जनगीता १९५८, ओथेलो १९५९, उमर खैय्याम की रुबाईयाँ १९५९, मैकबेथ १९५७, नेहरुः राजनैतिक जीवन चरित्र १९६१, हैमलेट १९६९ तथा किंग लियर १९७२ इनकी विभिन्न विदेशी भाषायों से हिन्दी में अनुवादित रचनायें हैं।

बच्चन जी का साहित्यिक योगदान अजर तथा अमर है। हिन्दी के पाठक सदैव उन्हें याद रखेंगे।

६.२ उपसंहार

जब मैंने बच्चन जी की उपलब्धियों के बारे में जाना, तब मेरे मन में पहला विचार यही प्रस्फुटित हुआ कि इतने बड़े कवि, लेखक, समीक्षक, गीतिकाव्यकार के साथ साहित्य जगत ने बहुत अन्याय किया है और तो और शिक्षा जगत् भी मूक दर्शक बना रहा। उनकी काबिले तारीफ रचनाओं को भी हाशिये में डाल दिया गया। अफसोस इनका काव्य तो उस दीपक सा है जो कि ज्यतिपुँज है और रोशनी को कोई भी रोक नहीं सकता है। उनकी मधुशाला ने अपने ७५वें वर्ष में प्रवेश कर लिया है। यह एक ऐसी रचना है जिसकी बिक्री आज भी उसी तरह हो रही है, जैसे पहले होती थी। व्यक्ति को उसके बाद उसके नाम से ही नहीं काम से भी लोग जानते हैं। आज तक ७५ साल पूर्व की मधुशाला में वहीं माधुर्य है जो तब था।

बच्चन जी के काव्य की शुरुआत नई सामाजिक और और साहित्यिक हलचल की प्रेरणा से हुई है। उनका काव्य नव यथार्थ, सहज जीवन भोग, मध्यम वर्गीय जीवन की आशा कुंठा और सीधी-सीधी जनभाषा के मुहावरों से परिपूर्ण है। बच्चन जी ने नई कविता के परिप्रेक्ष्य में जो उपलब्धि दी है, वह निश्चय ही अतुल्य है, ईर्ष्या की वस्तु है। मेरा ऐसा स्थिर मत है कि, बच्चन जी की कविताओं से प्रेरणा ले कर कई कवि हिन्दी साहित्य जगत में उदय मान हुए। बच्चन जी ने कई परावर्ती कवियों को, जैसे गोपाल दास सक्सेना 'नीरज', राही, त्यागी सभी को दिशा का बोध कराया। बच्चन जी की कविताएँ बच्चे, बूढ़े, जवान सभी के लिए थीं।

बच्चन जी ने हिन्दी साहित्य के जगत को आशावाद तथा भ्रामिक जाल से निकालकर वास्तविकता के जगत से परिचित करवाया। हिन्दी काव्य जगत के लिए यह एक ऐतिहासिक उपलब्धि कही जा सकती है। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि छायावाद तथा नवीन कविता के बीच का सेतु बच्चन जी ही थे। उनकी काव्य दृष्टि का व्यक्तित्व सबसे अलग-थलग था।

एक ओर तो कवियों को स्वतंत्रता प्रदान करते तो दूसरे पक्ष में दो काव्यान्दोलनों को एक सूत्र में पिरोने का गुरुमय कार्य करते नजर आते। शायद इसीलिए वे अपने समकालीन कवियों में अपवाद रहे, पर उन्हें विद्रोही की संज्ञा कतई नहीं दी जा सकती है। यही कारण है कि वे आज की पीढ़ी के भी लोकप्रिय कवि हैं।

बच्चन जी हिन्दी के ऐसे कवि हैं जिन्होंने खुद कविता नहीं लिखी है, अपितु कविता ने ही स्वयं जिन्हें लिखा है। वह ज्ञान के बल पर या किताबें पढ़कर काव्य के सिद्धांत सीखकर नहीं लिखी गईं। वह सीधे उनके जीवन के कटु अनुभवों से बहकर आयी हैं। बच्चन जी कविता लिखने वाले कवि नहीं बल्कि कविता को जीने वाले और कविता को पूरी तरह समर्पित कवि थे। उन्होंने अपने जीवन में जो रास्ता चुना, वह न तो मधुशाला की ओर जाता था न ही पार्लियामेन्ट। उनकी मंजिल न तो कोई वाद था, न कोई सिद्धांत। यह रास्ता केवल मानव जीवन की ओर ले जाने वाला रास्ता था। वह मानव, जो प्यार भी करता है और नफरत भी, हँसता भी है और रोता भी, जीता भी है और मरता भी। बच्चन जी ने इसी इन्सान को अपनी कविताओं में तरह-तरह से गाया है। व्यक्ति मन की कौन सी अनुभूति जो बच्चन जी ने नहीं लिखी। पालने से पलंग तक, पनघट से मरघट तक, आँगन से चौराहे तक, एकान्त से भीड़ तक, जहाँ तक जितना भी जीवन है वह सब बच्चन जी की कविता है। हर संवेदनशील व्यक्ति को उनकी कविता में अपने ही हृदय की धड़कन सुनाई देती है। उनके काव्य में संघर्ष, ऊहापोह, घात-प्रतिघात तथा सुख-दु:ख की संवेदना पाठकों के हृदय को स्पर्श कर उनकी साँसों में बहने लगती है और कुछ समय के लिए उनकी अनुभूति का अंग बन जाती है।

बच्चन जी के काव्यों का अध्ययन का विश्लेषण करते समय मेरा भी अनुभव यही रहा कि उनकी कविताएँ पढ़ते-पढ़ते हम उसी स्थिति व परिस्थितियों में खो जाते हैं, जैसा हमारे साथ होता है। उनकी मधुशाला काव्य का मूल स्वर मस्ती का अवश्य है, लेकिन इस लम्बे व्यक्त्व्य के पीछे जो उनके जीवन की वाह्य, आंतरिक घुटन है, मन की स्वच्छंदता के लिए जो मन की छटपटाहट है, पीड़ा है, जो आन्तरिक वेदना है, उसी में मधुशाला की कवित्व शान्ति का रहस्य दृष्टिगोचर होता है। मधुशाला का अध्ययन करते समय, जो अन्य बात मैंने महसूस की कि, किस प्रकार परिवार को विषम परिस्थितियों में भी संभालना है। इसके अतिरिक्त जो भी अपने साथ अमानवीय व्यवहार करते हैं, आप से ईर्ष्या, द्वेष या वैमनस्यता की भावना रखते हैं, जो दूसरों को दु:ख पहुँचाकर स्वयं आराम का जीवन व्यतीत करते हैं, ऐसे लोगों से अथवा ऐसी परिस्थितियों से किस प्रकार बचना है। यह मैंने बच्चन जी की, मधुशाला काव्य से जाना।

उनकी समाज और धर्म के जातिवाद को मिटाने वाली रचनाएँ सर्वप्रिय हैं। उनका मानना था कि उनकी मधुशाला ही ऐसी जगह थी, जहाँ हिन्दू मुसलमान, प्यार से बैठकर, एक घूँट साथ-साथ पीते थे, अगर देखा जाए तो हिन्दू का 'ह' और मुसलमान का 'म' लेकर जोड़ा जाए तो बनने वाला शब्द होगा '**हम**'। इसी बात को वे अपनी कविताओं में जगह-जगह प्रकट करते हैं। बच्चन जी मंदिर और मसजिद में विश्वास

नहीं करते थे। उनका मानना था कि सबसे ज्यादा झगड़े धर्म के नाम पर ही किए जाते हैं, मानव-मानव के बीच में भेद किया जाता है। जब सृष्टि के रचियता परमपिता परमेश्वर ने हमारे जन्म, मृत्यु के साथ कोई भेद नहीं किया तो हम कौन होते हैं, भेद करने वाले? उन्होंने धर्म-भीरु पुजारी और मुल्ला दोनों को ही अपनी कविताओं के द्वारा लताड़ा है और लिखा है-

"बैर बढ़ाते मंदिर मसजिद, मेल कराती मधुशाला"

उनका मानना था कि इस बुराई को कलम की ताकत से झुकाया जा सकता है। सर्व प्रथम उन्होंने धर्म पाखंड और जाति भेद के नाम पर व्यंग करके कवि समाज से प्रार्थना की कि, हमारे समाज में मंगल भावना को प्रस्तुत करने वाली कविताओं की रचना करें। वो भी आत्मगर्व तथा स्वाभिमानपूर्णता के साथ विनम्रता और जनमांगल्य भी चाहा है। उन्होंने स्वयं को प्रेरणा देने के लिए लिखा भी है-

"सभी जाति के लोग यहाँ पर, साथ बैठकर पीते हैं,
सौ सुधारकों का करती है, काम अकेली मधुशाला"

बच्चन जी की मधुशाला १९३८ की कृति है लेकिन उसका अध्ययन करते समय यह एहसास हो रहा था कि बच्चन जी आने वाले समय से पूर्णतया अवगत थे। इसमें उन्होंने धार्मिक, सामाजिक, नैतिक व आध्यात्मिक पहलुओं के कमजोर पक्षों पर करारा प्रहार किया है। जीवन की वास्तविकताओं का परिचय दिया है। वर्तमान समय में भी हम इन्हीं समस्याओं से झूझ रहे हैं। ये वाह्य आडंबर आज भी हमें खोखला कर रहे हैं। यदि इन्हें सुना अथवा पढ़ा न गया और जीवन में इसे अपनाया न गया तो आने वाले समय की दशा क्या होगी यह समय ही बताएगा।

मधुकलश में बच्चन जी ने अपने ही जीवन की घटनाओं, पीड़ाओं और उससे मुक्ति दिलाने वाली मानवीय शक्तियों को कविता के माध्यम से हमारे समक्ष रखा है। इस काव्य को पढ़ने के उपरान्त हम क्या हैं ? यह शीघ्र ही समझ आ जाता है। स्वयं को समझने की शक्ति मनुष्य के अन्दर बहुत महान होती है, जब हम अपने अहम् को जान लेते हैं, तो हम पर की गई आलोचनाओं का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। हमारा आत्म विश्वास वैसा ही बना रहता है। वर्तमान समय में इस तकनीकी युग में, हर व्यक्ति दौड़ में आगे निकलना चाहता है और इस आगे निकलने में,वह पीछे वालों को तकलीफ देने से भी नहीं चूकता। कुछ व्यक्ति संवेदनशील अधिक होते हैं, जिस पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। यदि मधुशाला की इन पंक्तियों को पढ़ा जाए तो हम अपने को संतुलित रख सकते हैं-

मैं हंसा जितना कि खुद पर, कौन हंस मुझपर सकेगा ?
और कितना रो चुका हूँ, रो नहीं निर्झर सकेगा।

निशा-निमंत्रण काव्य ने मुझे सिखाया कि, यदि कोई अपना प्रिय व्यक्ति आपसे दूर भी चला जाए, तो यह नियति का खेल है और अपना जीवन वहीं समाप्त नहीं होता, सदैव आगे ही बढ़ना जीवन है। इस काव्य द्वारा हमें यथार्थ जीवन के दर्शन होते हैं, जो आज के समय के लिए बहुत आवश्यक है। आज के युग की मांग क्या है? यह समाज कैसा निष्ठुर बन चुका है, सदैव अपने ही भले की सोचता है। इस स्वार्थी समाज व मानव के व्यवहार को जानना व समझना आवश्यक है। निशा निमंत्रण के गीतों में, प्रकृति के प्रतिक्षण में अनुभूत होने वाले वातावरण में, कवि की अनुभूति वेदना, संवेदना के चित्रण ने मेरे हृदय को छू लिया है। इसका हर गीत दर्द भरा है। ये गीत दुखियों के लिए आशीर्वाद है।

हर व्यक्ति कभी न कभी, कहीं न कहीं अकेलेपन की अनुभूति के संताप से ग्रस्त होता है और उससे वह आजाद भी होना चाहता है। ऐसे में उसे कठोर आत्म संघर्ष करना पड़ता है और इस संघर्ष में, कितने संकल्प, साहस और जय-पराजय का द्वन्द चलता है। एकान्त संगीत में व्यक्ति के जीवन संघर्ष पर कठिन और करुण गाथा पढ़ने के उपरान्त हमें अभावों व अभिशापों में जीने का साहस मिलता है। उनके गीत, हमें आशा की नई किरण दिखा देते हैं।

जब मैं उनकी कविताओं का अवलोकन कर रही थी तब मैंने यह पाया कि, उनका शिल्प पक्ष बिलकुल सहज, सरल तथा स्वाभाविक है। वे शायद ही अपनी रचना में क्लिष्ट भाषा का प्रयोग करते रहे होंगे। उनका पूर्ववर्ती काव्य तो बेमिसाल कहा जा सकता है। निश्चय ही बच्चन जी ने छायावादोत्तर (हालावाद), हिन्दी गीति काव्य को नई चेतना, नया शिल्प तथा सौष्ठव दिया। उन्होंने केवल जीवन के अनुभवों का सामान्यीकारण ही नहीं किया वरन् काव्य भाषा को जीवन के पास लाने का भरपूर प्रयास भी किया।

तथापि बच्चन जी के काव्य की मूल धारा उनके व्यक्तिगत जीवन धारा के उतार-चढ़ाव से प्रेरित थी। फिर भी सामाजिक दायित्व को उन्होंने युग के अनुसार स्वरोचित किया।

बच्चन जी ने मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश, निशा निमंत्रण एकांत संगीत, आकुल अंतर, प्रणय पत्रिका, सतरंगिनी इत्यादि काव्य संग्रहों में प्रतीकों का सहारा

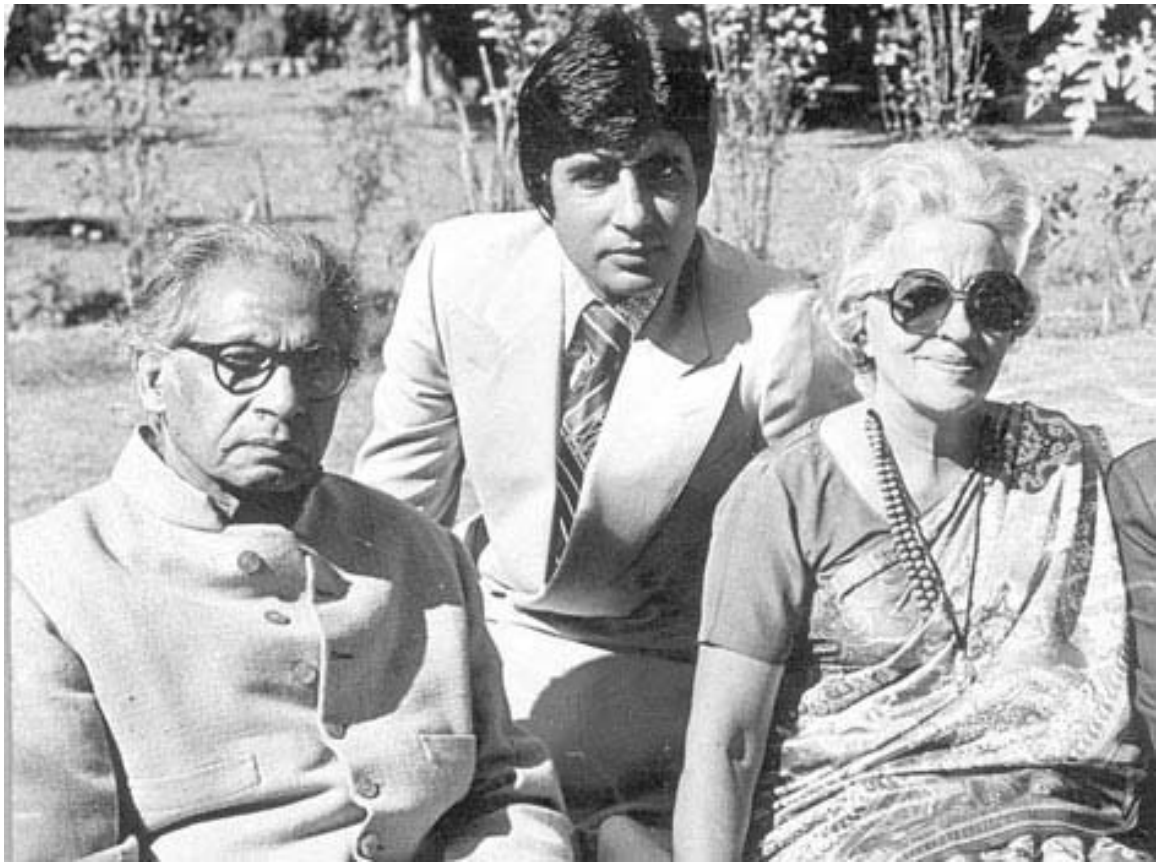

लिया है। जब भी बच्चन जी को कविता में वास्तविकता दिखलाने के लिए शब्द संयोजन कम पड़े, तो उन्होंने शिल्पविधा बिम्ब का प्रयोग किया है।

बच्चन जी की रचनाएँ अनुभवों की ऐसी खान है कि कितने भी गहरे पैठ जाओ, पर उसकी वास्तविक गहराई को नापना, मुश्किल ही नहीं नामुमकिन है।

अन्त में मैं इतना ही कहना चाहूँगी कि कवि बच्चन जी की प्रतिभा इतनी अधिक है कि समय के पृष्ठ पर से वह मिटायी नहीं जा सकती। बच्चन जी के व्यक्तित्व पर 'हालावाद' का सिक्का लगाने वाले आलोचक, यह समझ भी नहीं पाये कि बच्चन जी ने मदिरा का प्रचार कभी नहीं किया, अपितु उन्होंने घर-घर तक हिन्दी कविता की मदिरा को पहुँचा कर जन-साधारण में हिन्दी काव्य के प्रति लोकरुचि जागृत की है। उन्होंने कविता की मदिरा दी है, मदिरा की कविता नहीं।

मधुशाला के गौरवशाली ७५ साल में **श्री अमिताभ बच्चन** ने 'मेरी यादों के बाबूजी' में लिखा है- 'मुझे मधुशाला जीवन की शाला लगती है। उन्होंने साहित्य की एक नई धारा का प्रवर्तन किया है। इस हालावाद में उन्होंने सिर्फ मदिरा का वर्णन नहीं किया है, बल्कि मधुशाला के माध्यम से जीवन को समझाया है, जीवन के मूल सिद्धांतों पर रोशनी डाली है। मधुशाला ही नहीं उनकी हर पुस्तक में एक गहरी दृष्टि, एक विशेष दृष्टिकोण मिलता है।'

बच्चन जी पूर्णतया संवेदनशील कवि हैं, जिन्होंने उस समय की परिस्थितियों को देखा, परखा व समाज व मानव की आवश्यकतानुसार अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं, जो उस काल की समस्याओं के समाधान में सहायक थीं। मेरा तो पूर्णतया मानना है कि, न केवल उस काल की आवश्यकता व समस्याओं को कवि बच्चन जी ने उजागर किया है, बल्कि उनकी रचनाएँ आज भी और इस काल की भी आवश्यकता हैं। नवयुवक जिन परिस्थितियों से गुजर रहे हैं, यदि वे उनके काव्य का अध्ययन करें, तो निश्चित ही अपने जीवन में वह एक नया मोड़ ले सकते हैं। इसी लिए हिन्दी पाठ्यक्रम निर्माताओं से मेरा अनुरोध है कि, वह बच्चन जी की रचनाओं को अधिक से अधिक माध्यमिक, उच्च माध्यमिक व महाविद्यालय स्तर के पाठ्यक्रम में समावेश कर छात्रजनों को लाभान्वित करें।

यदि बच्चन जी की कृतियाँ अनूदित होकर विश्व के अन्य देशों में पहुँचतीं, तो हाला, प्याला और मधुशाला के रसिक काव्य पर वहाँ के लोग भी झूमते और इसकी मस्ती नोबल पुरस्कार वालों तक पहुँचती। हालांकि जो सम्मान व आदर बच्चन जी को भारतीय लोगों ने दिया, वह कई नोबल पुरस्कार से अधिक है। भविष्य में उनके प्रशंसकों की संख्या निरन्तर बढ़ेगी, ऐसा मेरा मानना है।

बच्चन जी शारीरिक रुप से हमारे बीच नहीं हैं, सन २००३ में उनका स्वर्गवास हुआ। यह तिथि सिर्फ़ पन्नों में लिखने के लिए है। सच्चाई तो यह है कि वह आज भी अपनी कविताओं, अपने सन्देशों और अपने काव्य में जीवित हैं। उनकी कविताएँ नवयुवकों के लिए मार्गदर्शन व प्रेरणा की स्त्रोत हैं।

जो व्यक्ति कविता के अनमोल मोती का उपहार पाना चाहेगा, वह जरूर सफल होगा। बच्चन जी का काव्यसंग्रह अनेकानेक संदेशप्रद कविताओं के मोतियों से भरा, कविताओं का सागर है। मैंने अपने इस छोटे से प्रयत्न द्वारा बहुत कुछ उनके काव्य सागर से पाया है।

बच्चनजी आप को सादर समर्पित

(बृजबाला सूरी)

प्रस्तुत शोध से सम्बंधित आगे अध्ययन एवं शोध कार्य हेतु सुझावित विषय -

१. उत्तर छायावाद के संदर्भ में हरिवंशराय बच्चन और उनकी जीवनाभूतियों का अध्ययन
२. छायावादी बच्चन और उनकी काव्यानुभूति
३. बच्चन के लोकगीत व लोकजीवन की मार्मिक संवेदनायों का अध्ययन
४. कवि बच्चन वाद-विवाद के नहीं अपितु जीवन धरातल के उत्कृष्ट कवि
५. मनोवेग, मनोभाव और अनुभूतियों के कवि श्री बच्चन

बच्चनजी के सुखद क्षण

संदर्भिका (अध्याय ६) -

१. प्रो. दीनानाथ शरण; लोकप्रिय बच्चन (बच्चनजी की साठ्वीं वर्षगांठ पर समर्पण);
२. डॅा. इन्दुबाला दीवान; बच्चन अनुभूति और अभिव्यक्ति;
३. डॅा. ललिता अरोड़ा ; बच्चन एक अध्य्यन;
४. डॅा. के. जी. कदम; कवि श्री बच्चन व्यक्ति और दर्शन;
५. डॅा. बांके बिहारी भट्नागर; बच्चन व्यक्ति और दर्शन;
६. संपादक रमेश चन्द्र गुप्त डॅा. दशरथ राज; बच्चन निकष पर (बच्चन का पुर्न मूल्यांकन);
७. http://www.rachnakar.blogspot.com

सन्दर्भ-सूची -

अ) पुस्तकें

१. अजीत कुमार ओंकार नाथ श्रीवास्तव (संपादक);बच्चन निकट से; राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९७७; पहला संस्करण

२. बच्चन; क्या भूलूं क्या याद करुं;राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९७४;तीसरा संस्करण

३. बच्चन; आरती और अंगारे; राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९६६;चौथा संस्करण

४. बच्चन; नीड़ का निर्माण फिर फिर;राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९६९;पहला संस्करण

५. बच्चन; प्रवास की डायरी; राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९५६;दूसरा संस्करण

६. बच्चन; खादी के फूल; राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९४८;पहला संस्करण

७. बच्चन; सूत की माला;राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९६६;तीसरा संस्करण

८. बच्चन; उभरते प्रतिमानों के रूप;राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९६९;पहला ांस्करण

९. बच्चन; त्रिभंगिमा; राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९६१;पहला संस्करण

१०. बच्चन; निशा निमंत्रण;राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९३८;पहला संस्करण

११. बच्चन; लहरों का निमंत्रण; राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;पहला संस्करण

१२. बच्चन; दशद्वार से सोपान तक; राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९८४;पहला संस्करण

१३. बच्चन; मैकबेथ;राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९५७;पहला संस्करण

१४. बच्चन;मधुशाला;राजपाल एण्ड संस,दिल्ली;१९४५;सातवाँ संस्करण

१५. बच्चन; मधुशाला; नया संस्करण २००८; प्रकाशक हिन्द पॉकेट बुक्स-नई दिल्ली

१६. बच्चन; मधुबाला (भूमिका);राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९६६;सतरवाँ संस्करण;
१७. बच्चन; मधुकलश;राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९७४;बीसवाँ संस्करण
१८. बच्चन; हलाहल;राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९६६;चौथा संस्करण
१९. बच्चन; टूटी फूटी कड़ियाँ ;राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९८२;तीसरा संस्करण
२०. बच्चन; नये पुराने झरोखे;राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९७९; तीसरा संस्करण
२१. बच्चन; एकांत सगीत ; राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९३९; पहला संस्करण
२२. बच्चन; आकुल अंतर; राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९४३; पहला संस्करण
२३. सं.मोहन गुप्त; हरिवंश राय बच्चन प्रतिनिधि कविताएँ ; राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. नई दिल्ली;२०१०

२४. डॉ. दशरथ राज; बच्चन निकष पर (बच्चन का पुर्न मूल्यांकन); राजकमल प्रकाशन, दिल्ली;१९७९; पहला संस्करण
२५. डॉ. कृष्ण चन्द्र पंड्या ; बच्चन व्यक्तित्व व कृतित्व; हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग,१९७८; पहला संस्करण
२६. डॉ. जीवन प्रकाश जोशी; बच्चन व्यक्तित्व व कृतित्व; सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली;१९७६; पहला संस्करण
२७. डॉ. सुधाबहन पटेल; बच्चन जीवन और साहित्य; ;राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९७९; पहला संस्करण
२८. डॉ. ललिता अरोड़ा ; बच्चन एक अध्य्यन; सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली;१९७९ ; पहला संस्करण
२९. डॉ. के. जी. कदम; कवि श्री बच्चन व्यक्ति और दर्शन; साहित्य प्रकाशन इलाहाबाद;१९८८; पहला संस्करण
३०. डॉ. श्याम सुन्दर घोष; बच्चन का परिवर्ती काव्य; राजपाल एण्ड संस, दिल्ली;१९७६; पहला संस्करण
३१. डॉ. मृदुला गुप्ता; बच्चन के काव्य मे बिम्ब योजना; प्रेमशील प्रिन्टर्स, दिल्ली;१९६७; पहला संस्करण
३२. डॉ. अरविंद पान्डेय; सोपान पर अभियान;हिन्दी प्रकाशन वाराणसी;१९६८; पहला संस्करण

३३. डॉ. बांके बिहारी भट्नागर; बच्चन व्यक्ति और दर्शन; हिन्दी भवन दिल्ली;१९६४; पहला संस्करण

३४. प्रो. दीनानाथ शरण; लोकप्रिय बच्चन; साहित्य निकेतन, कानपुर; १९६७; पहला संस्करण

३५. जयप्रकाश भाटी;बच्चन का साहित्य तथ्य और शिल्प;मूनलाइट प्रिंटर्स, जयपुर;१९८०; पहला संस्करण

३६. डॉ. एस. विजया; हरिवंशराय बच्चन और कण्णनदास की कविताओं में सौन्दर्य चेतना; हिन्दी हृदय प्रकाशन, मैलापुर, मद्रास;१९७८

३७. डॉ. इन्दुबाला दीवान; बच्चन अनुभूति और अभिव्यक्ति; सूर्य प्रकाशन नई दिल्ली;१९८४;प्रथम संस्करण

३८. प्रो. दीनानाथ शरण; लोकप्रिय बच्चन (बच्चनजी की साठ्वीं वर्षगांठ पर समर्पण);विदेश मंत्रालय भारत सरकार, भारतीय सहयोग मिशन, काठ्मांडू नेपाल; १९६७

३९. डॉ. भगीरथ मिश्र; हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास; लखनऊ विश्व विद्यालय प्रकाशन;१९५८

ब) शोध प्रबंध

१) शोधकार्य : बच्चन: "जीवन और काव्य"
शोधकर्ता : मोहम्मद जफर पटेल द्वारा
गाइड : आर.के. मुदलियार
हिन्दी विभाग : कर्नाटक विश्वविद्यालय; १९८२

२) शोधकार्य : "बच्चन के काव्य में उनका जीवन दर्शन"
शोधकर्ता : विभा सक्सेना
गाइड : डॉ. शांति गोपाल पुरोहित
हिन्दी विभाग : राजस्थान विश्वविद्यालय; १९८४

३) शोधकार्य : "बच्चन के काव्य का सौंदर्य शास्त्रीय अध्ययन"
शोधकर्ता : सुमन सक्सेना
गाइड : डॉ. राम सिंह अत्रि
हिन्दी विभाग : हेमवती नंदन बहुगुना कॉलेज
गढ़वाल विश्वविद्यालय; १९८७

४) शोधकार्य : "बच्चन और उनके बाद की हिन्दी गीत धारा"
शोधकर्ता : विधान चंद्र रॉय
गाइड : डॉ. मंगला प्रसाद पाण्डेय
हिन्दी विभाग : बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय; १९८८

५) शोधकार्य : "बच्चन: काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ"
शोधकर्ता : सी. रमादेवी
गाइड : एम. ईश्वरी
हिन्दी विभाग : कोचीन विश्वविद्यालय; १९८९

६) शोधकार्य : "बच्चन की कविताओं का शैली वैज्ञानिक अध्ययन"
शोधकर्ता : शीला शर्मा
गाइड : चितरंजनकर
हिन्दी विभाग : पंडित रविशंकर शुक्ला विश्वविद्यालय; (मध्य प्रदेश) १९९४

७) शोधकार्य : "डॉ. हरिवंशराय बच्चन का:संवेदना और शिल्प"
शोधकर्ता : विनोद कुमार सिंह
गाइड : डॉ. अशोक सिंह
हिन्दी विभाग : बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी, २००२

स) समाचार पत्र व पत्रिकायें

१. साप्ताहिक हिन्दुस्तान; १ फरवरी, १९७०
२. नवभारत टाइम्स; ए के मित्तल ; ९ फरवरी, १९८४
३. साहित्य संदेश;राम रतन भट्नागर (नवंबर-दिसम्बर १९६७; पृष्ठ २१३,२१४)
४. साहित्य संदेश;डा. विजय स्नातक (९ दिसम्बर १९६७; पृष्ठ २१९,)
५. ज्ञानोदय (सितंबर १९६८)
६. प्रकाशन समाचार (अगस्त १९८३ बच्चन की पाती)
७. सरस्वती; मैथिलीशरण गुप्त; दिसम्बर १९९४; पृष्ठ ७०
८. नवनीत (नवंबर-२००९) (बच्चन शताब्दी सम्मान विशेषांक)
९. कादंम्बिनी (अप्रैल १९७३; पृष्ठ ७४)
१०. माध्यम (अप्रैल १९६५; पृष्ठ १०६; दिसम्बर १९६८; पृष्ठ ११)
११. हिन्दी कविता १९६१ (वार्षिक पत्र; पृष्ठ ७)

१२. नई कविता;विजयेन नारायण साही;१९६०-१९६१(वार्षिक पत्र; पृष्ठ ८८)
१३. काव्यालोचन विशेषांक; रामस्वरूप चतुर्वेदी;१९६६; पृष्ठ १९४

द) शब्दकोश

१. मानविकी पारिभाषिक कोश; डा. नगेन्द्र
२. हिन्दी साहित्य कोश
३. हिन्दी-अंग्रेजी शब्द कोश; संगीता एस पारिख; एलाइड पब्लिशर प्राइवेट लि., दिल्ली;१९९६
४. हिन्दी शब्द सामर्थ्य; कैलाश चन्द्र भाटिया; प्रभात प्रकाशन;दिल्ली;२००१
५. भार्गव डिक्श्नरी; हिन्दी-इंग्लिश; आर सी पाठक

Internet References (इन्टरनेट):

http://hi.wikipedia.org/wiki/हरिवंश_राय_बच्चन

www.kavitakosh.org/kk/index.php?title=मधुबाला

http://www.sahityakunj.net/
http://www.hindikunj.com/
http://www.apnihindi.com/
http://www.4shared.com/
http://www.ziddu.com/

http://www.studytemple.com/forum/novels-other-related-books/17657-nisha-nimantran-invitation-night-harivanshrai-bachch.html

http://www.studytemple.com/forum/novels-other-related-books/17576-restless-heart-harivanshrai-bachchan.html

http://www.studytemple.com/forum/novels-other-related-books/17540-ekant-sangeet-harivanshrai-bachchan.html

http://hindipoetry.wordpress.com/category/harivansh-rai-bachchan/

http://www.geeta-kavita.com/hindi_sahitya.asp?id=93
http://www.rajkamalprakashan.com/index.php?
http://www.rachnakar.blogspot.com
http://www.geocities.com/hrbachchan